सिरि भगवंत भूदबलि भडारय पणीदो

महाबंधो

[महाधवल सिद्धान्त-शास्त्र]

विदियो ट्ठिदिबंधाहियारो

[द्वितीय स्थितिबन्धाधिकार]

पुस्तक ३

भारतीय ज्ञानपीठ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला : प्राकृत ग्रन्थांक-५

सिरि भगवंत भूदबलि भडारय पणीदो

महाबंधो

[महाधवल सिद्धान्त-शास्त्र]

विदियो ट्ठिदिबंधाहियारो

[द्वितीय स्थितिबन्धाधिकार]

हिन्दी अनुवाद सहित

पुस्तक ३

सम्पादन-अनुवाद

पं. फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

भारतीय ज्ञानपीठ

द्वितीय संस्करण : १९९९ ☐ मूल्य : १४०.०० रुपये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारतीय ज्ञानपीठ

(स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ९, वीर नि. सं. २४७०, विक्रम सं. २०००, १८ फरवरी, १९४४)

स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी की पवित्र स्मृति में

स्व० साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित

एवं

उनकी धर्मपत्नी स्व० श्रीमती रमा जैन द्वारा संपोषित

मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओं में उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्य का अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उनका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदि के साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारों की सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य पर विशिष्ट विद्वानों के अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमाला में प्रकाशित हो रहे हैं।

•

ग्रन्थमाला सम्पादक (प्रथम संस्करण)

डॉ. हीरालाल जैन एवं डॉ. आ. ने. उपाध्ये

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

१८, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-११० ००३

मुद्रक : आर.के. ऑफसेट, दिल्ली-११० ०३२

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Moortidevi Jain Granthamala : Prākrita Grantha No. 5

MAHĀBANDHO

[Second Part : Sthiti-bandhādhikāra]

of

Bhagvān Bhutabali

Vol. III

Edited and Translated by

Pt. Phoolchandra Siddhantashastri

BHARATIYA JNANPITH

Second Edition : 1999 □ Price : Rs. 140.00

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

BHARATIYA JNANPITH

Founded on Phalguna Krishna 9, Vira N. Sam. 2470 • Vikrama Sam. 2000 • 18th Feb. 1944

MOORTIDEVI JAIN GRANTHAMALA

Founded by
Late Sahu Shanti Prasad Jain
In memory of his late Mother Smt. Moortidevi
and
promoted by his benevolent wife
late Smt. Rama Jain

In this Granthamala Critically edited Jain agamic, philosophical,
puranic, literary, historical and other original texts
available in Prakrit, Sanskrit, Apabhramsha, Hindi,
Kannada, Tamil etc., are being published
in the respective languages with their
translations in modern languages.
Also
being published are
catalogues of Jain bhandaras, inscriptions, studies,
art and architecture by competent scholars,
and also popular Jain literature.

•

General Editors (First Edition)

Dr. Hiralal Jain & Dr. A.N. Upadhye

Published by
Bharatiya Jnanpith
18, Institutional Area, Lodi Road, New Delhi-110003

Printed at R.K. Offset, Naveen Shahdara, Delhi 110 032

All Rights Reserved by Bharatiya Jnanpith

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Editorial Note

In the great realm of knowledge that has come down from Tīrthaṅkara Mahāvīra and preached by Gautama Gaṇadhara, Bhagawant Bhūtabalī explained the philosohical subject-matter of *Karma-bandha* in Śaurasenī Prākrit language in seven volumes. It is an established fact that **Mahābandho** known as **Mahādhavala** is the sixth khaṇḍa of **Śaṭkhaṇḍāgama**, and that is the integral part of *Āgamas*. This is the third volume of luminous Siddhānta text.

It is a great pleasure to put forth this classic, well edited and translated in Hindi by Pt. Phoolchandra Siddhantashastri. It is my duty and pious work to point out that a few changes have been made in this volume.

In this edition there is a word कादव्वं (**Kādavvaṁ**) that occurs in several places. The translation is given as 'would say' or 'will be said'. In the text we find some usages, such as णादव्वं, कादव्वाओ, जाणिदव्वो, भाणिदव्वो etc. These convey the simple meaning 'would say'. Here we quote one sentence as follows:

"णवरि सव्वाणं तिरिक्खधुविगाणं कादव्वं" (Vol. III, P. 141). The word कादव्वं (**Kādavvaṁ**) in the text should be कहिदव्वं, after that it will convey the proper meaning. Therefore, in many places the reading should be shown by giving it in square brackets as the counterpart of the proper reading [कहिदव्वं] for clear understanding. The translation in several places is correct and conveys the meaning 'would say', but the discrepancy is in the text reading.

The other change is related to Prakrit phonology. It has been observed that the Vocalic ĕ and ŏ in the pronunciation are reduced and softened respectively. It was pointed out by some to Patañjali that the followers of the Satyamugri and Ranayaniya schools among Sāmavedins uttered ĕ and ŭ, and hence they deserved to be accepted as the short counterparts of ĕ and ŏ respectively; they were again more homorganic (Sansthāntara) than i and u which were enjoyed by Patañjali (1.1.48). Although Patañjali answered by saying that it was merely a stylistic peculiarity on the part of the reciters and that an e or an o was not to be expected either in the Vedic or in the secular speech. Yet it appears that there was this tendency in the pronunciation of a section of speakers at the time. This was a peculiarity of the Prakrit Phonology, (Prākṛit Prakāśa of Vararuci 1.5, Siddhhem. 8.1.78), of. proceedings of the seminar on Prakrit studies 1973, p. 93)

As pointed out by Bhāmaha in the commentary of Prākṛit Prakāśa that the pronunciation of Deva long is 'daiva', but when it becomes double, then the pronunciation will also change, and it will be pronounced 'e' (देव्व.., dĕvva) for instance, as Vararuci also describes in Prākṛit Prakāśa (3.52)

According to Ramsharman in **Prākrit Kalpataru** (1.1.12) the u of the words of **Puskara** group i.e. **puskara, pustaka, lubdhaka, mukuta, kuthima, tunda** and **muṇḍa** becomes o; others add **kuṇḍa** and **muṇda** to this group.

In this edition, for the first time, the punctuation mark to show the reduced is used (as **khĕtta, ĕkka, pŏggala** etc.) for the correct pronunciation. It is hoped that this will be followed in the publication of Prakrit texts in future also.

26.2.99

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

(प्रथम संस्करण 1954 से)

आज से लगभग सवा वर्ष पूर्व स्थितिबन्ध का पूर्व भाग सम्पादित होकर प्रकाश में आया था। यह उसका शेष भाग है। भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से सब तरह की सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी इसके सम्पादन में अपने वैयक्तिक कारणों से हमें पर्याप्त समय लगा है इसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

श्रीयुत बन्धु रतनचन्द्र जी मुख्तार व बन्धुवर नेमिचन्द्र जी वकील सहारनपुर 'षट्खण्डागम' और 'कषाय-प्राभृत' के विशेष अभ्यासी हैं। श्री रतनचन्द्र जी ने तो एक तरह से गार्हस्थिक झंझटों से अपने को मुक्त ही कर लिया है और आजीविका को तिलांजलि दे दी है। थोड़े बहुत साधन जो उनके पास बच रहे हैं उन्हीं से वे अपनी आजीविका चलाते हैं। जीवन में सादगी और निष्कपट सरल व्यवहार उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है। इस वर्ष दस लक्षण पर्व के दिनों में हम सहारनपुर आमन्त्रित किये गये थे, इसलिए निकट से हमें उनके जीवन का अध्ययन करने का अवसर मिला है। इस आधार से हम कह सकते हैं कि वे घर में रहते हुए भी साधु जीवन बिता रहे हैं। योगायोग की बात है कि इन्हें पत्नी भी ऐसी मिली हुई है जो इनके धार्मिक कार्यों में पूरी साधक है। यों तो दोनों बन्धु मिलकर इन महान् ग्रन्थों का स्वाध्याय करते हैं परन्तु श्री रतनचन्द्र जी का अभ्यास तगड़ा है और इन ग्रन्थों के सम्पादन में उनके परामर्श की आवश्यकता अनुभव में आती है। वे यह इच्छा तो रखते हैं कि इन ग्रन्थों के प्रकाशन के पहले हमें उनके स्वाध्याय का अवसर मिल जाय तो उत्तम हो और ऐसा करने में लाभ भी है, पर कई कारणों से इस व्यवस्था के जमाने में कठिनाई जाती है। स्थितिबन्ध का अन्तिम कुछ भाग अवश्य ही उन्होंने देखा है और उनके सुझावों से लाभ भी उठाया गया है। आशा है भविष्य में इस सुविधा के प्राप्त करने में सुधार होगा और उनका आवश्यक सहयोग मिलता रहेगा।

श्री रतनचन्द्र जी ने प्रकृतिबन्ध और स्थितिबन्ध के पूर्वभाग का शुद्धि-पत्रक तैयार करके हमारे पास भेजा है। उसमें आवश्यक संशोधन करके मुद्रित कर देने में लाभ भी है। किन्तु इधर हमारे मित्र श्रीयुत लाला राजकृष्ण जी देहली के निरन्तर प्रयत्न करने के फलस्वरूप मूडबिद्री से कनडी मूल ताडपत्रीय प्रतियों के फोटो देहली वीरसेवा मन्दिर में आ गये हैं। श्री लाला राजकृष्ण जी ने दौड़-धूप करके यह काम तो बनाया ही है और इसमें उन्हें श्रीयुत बाबू छोटेलाल जी कलकत्ता वालों का भी पूरा सहयोग मिला है। किन्तु सबसे अधिक उल्लेखनीय बात यह है कि लाला राजकृष्ण जी की पत्नी का इन ग्रन्थों के उद्धार कार्य में विशेष हाथ रहा है। वे स्वयं इन महानुभावों के साथ मूडबिद्री गयीं और हर तरह की कमी की पूर्ति में साधक बनीं तभी यह काम हो सका है। अतएव इस भाग के साथ हमने पूर्व भागों का शुद्धिपत्रक नहीं जोड़ा है, क्योंकि इन ग्रन्थों के उत्तर-भारत में सुलभ हो जाने से हमारा विचार है कि एक बार प्रकाशित और अप्रकाशित भाग का शान्ति से इन मूल ग्रन्थों के साथ मिलान कर लिया जाय और तब जाकर प्रकाशित भागों में जो कमी रह गयी हो उसे प्रकाश में लाया जाय। हमें विश्वास है कि हमारे साथी हमारे इन विचारों का समर्थन करेंगे।

हमें भारतीय ज्ञानपीठ के सुयोग्य मन्त्री श्रीयुत अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय ने जितनी तत्परता से यह कार्य करने के लिए सौंपा था उतनी तत्परता हम इस काम में दिखा नहीं सके। आशा है वे हमारी इस कमजोरी की ओर विशेष ध्यान नहीं देंगे और जिस तरह अभी तक सहयोग देते आये हैं देते रहेंगे।

अन्त में हमें समाज से इतना ही निवेदन करना है कि दिगम्बर परम्परा में इन महान् ग्रन्थों का बड़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महत्त्व है। द्वादशांग वाणी से इनका सीधा सम्बन्ध है। एक समय था जब हमारे पूर्वज ऐसे महान् ग्रन्थों की लिपि कराकर उनकी रक्षा करते थे किन्तु वर्तमान काल में हम उन्हें स्वल्प निछावर देकर भी अपने यहाँ स्थापित करने में सकुचाते हैं। यह शंका की जाती है कि हम उन्हें समझते नहीं तो बुलाकर भी क्या करेंगे। किन्तु उनकी ऐसी शंका करना निर्मूल है। ऐसा कौन नगर या गाँव है जहाँ के जैन गृहस्थ तात्कालिक उत्सव में कुछ-न-कुछ खर्च न करते हों। जहाँ उनकी यह प्रवृत्ति है वहाँ जैनधर्म के मूल साहित्य की रक्षा करना भी उनका परम कर्तव्य है। कहते हैं कि एक बार धार रियासत के दीवान को वहाँ के जैन बन्धुओं ने जैन मन्दिर के दर्शन करने के लिए बुलाया था। जिस दिन वे आने वाले थे उस दिन मन्दिरजी में विविध उपकरणों से खूब सजावट की गयी थी। जिन उपकरणों की धार में कमी थी वे इन्दौर से बुलाये गये थे। दीवान साहब आये और उन्होंने श्री मन्दिरजी को देखकर यह अभिप्राय व्यक्त किया कि जैनियों के पास पैसा बहुत है। अन्त में उन्हें वहाँ का शास्त्रभण्डार भी दिखलाया गया। शास्त्रभण्डार को देखकर दीवान साहब ने पूछा कि ये सब ग्रन्थ किस धर्म के हैं। जैनियों की ओर से यह उत्तर मिलने पर कि ये सब जैनधर्म के ग्रन्थ हैं दीवान साहब ने कहा कि यह जैनधर्म है।

इससे स्पष्ट है कि साहित्य ही धर्म की अमूल्य निधि है। महान् से महान् कीमत देकर भी यदि इसकी रक्षा करनी पड़े तो करनी चाहिए। गृहस्थों का यह परम कर्तव्य है। हम यह शिकायत तो करते हैं कि मुसलिम बादशाहों ने हमारे ग्रन्थों को ईंधन बनाकर उनसे पानी गरम किया किन्तु जब हम उनकी रक्षा करने में तत्पर नहीं होते और उन्हें भण्डार में सड़ने देते हैं या उनके प्रकाशित होने पर उन्हें लाकर अपने यहाँ स्थापित नहीं करते तब हमें क्या कहा जाय? क्या हमारी यह प्रवृत्ति उनकी रक्षा करने की कही जा सकती है? स्पष्ट है कि यदि हमारी यही प्रवृत्ति चालू रही तो हम भी अपने को उस दोष से नहीं बचा सकते जिसका आरोप हम मुसलिम बादशाहों पर करते हैं। शास्त्रकारों ने देव और शास्त्र में कुछ भी अन्तर नहीं माना है। अतएव हम गृहस्थों का कर्तव्य है कि जिस तरह हम देव की प्रतिष्ठा में धन व्यय करते हैं उसी प्रकार साहित्य की रक्षा में भी हमें अपने धन का व्यय करने में कोई न्यूनता नहीं करनी चाहिए। आशा है समाज अपने इस कर्तव्य की ओर सावधान होकर पूरा ध्यान देगी।

हमने इस भाग में सम्पादन आदि में पूरी सावधानी बरती है फिर भी गार्हस्थिक झंझटों के कारण त्रुटि रह जाना स्वाभाविक है। आशा है स्वाध्यायप्रेमी जहाँ जो कमी दिखाई दे उसकी सूचना हमें देने की कृपा करेंगे ताकि भविष्य में उन दोषों को दूर करने में हमें प्रेरणा मिलती रहे।

—फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रशस्ति

स्थितिबन्धके अन्तमें एक प्रशस्ति आती है जो इस प्रकार है—

यो दुर्जयस्मरमदोत्कटकुंभिकुंभ-
संचोदनोत्सुकतरोग्रमृगाधिराजः ।
शल्यत्रयादपगतस्त्रयगारवारिः
संजातवान्स भुवने गुणभद्रसूरिः ॥ १ ॥

दुर्वारमारमदसिन्धुरसिन्धुरारिः
शल्यत्रयाधिकरिपुस्त्रयगुप्तियुक्तः ।
सिद्धान्तवार्धिपरिवर्धनशीतरश्मिः
श्रीमाघनंदिमुनिपोऽजनि भूतलेऽस्मिन् ॥ २ ॥

वरसम्यक्त्वद देशसंयमद सम्यग्बोधदत्यन्तभा-
सुरहारत्रिकसौख्यहेतुवेनिसिदांदानदौदार्यदे- ।
ळुतरदिंगीतने जन्मभूमियेनुतं सानंददिं कूर्तुभू-
भरमेल्लं पोगल्लुत्तमिर्पुदभिमानावीननं सेननं ॥ ३ ॥

सुजनते सत्यमोळ्पु गुणोन्नति पेंपु जैनमा-
र्गजगुणमेंब सद्गुणविन्यधिकं तनगोप्पनूल्लध-
र्मजनिवर्नेंदु किसे सुमदीधरे मेदिनिगोप्पिलोव्वे चि-
राजसमरूपनं नेगळ्द सेननुद्धगुणप्रधाननं ॥ ४ ॥

अनुपमगुणगणदत्तिब-
मेंन शीलनिदानमेसेव जिनपदसक्तो- ।
कनदशिलीमुखि येने मां-
तनदिंदं मल्लिकव्वे ललनारत्नं ॥ ५ ॥

जो दुर्जय स्मररूपी मदोन्मत हाथीके गण्डस्थलके विदारण करनेमें उत्सुक सिंहके समान हैं, जिन्होंने तीन शल्योंको दूर कर दिया है और जो तीन गारवोंके शत्रु हैं वे गुणभद्रसूरि इस लोकमें प्रसिद्धिको प्राप्त हुए ॥१॥

जो दुर्वार माररूपी मदविह्वल हाथीके समान हैं तथा जो तीन शल्योंके लिए शत्रुके समान हैं, जो तीन गुप्तियोंके धारक हैं और जो सिद्धान्तरूपी समुद्रकी वृद्धिके लिए चन्द्रमाके समान हैं वे श्रीमाघनन्दि आचार्य इस भूतलपर हुए ॥ २ ॥

सच्चरित्र, संयमी, सम्यग्ज्ञानवान्, सबको सुख देनेवाले, दानी, उदार और अभिमानी सेनकी बहुत ही आनन्दसे सभी लोग प्रशंसा करते थे ॥ ३ ॥

सौजन्य, सत्य सद्गुणोंकी उन्नति और जैनमार्गमें रहना इन सद्गुणों से युक्त, स्मरके समान सुन्दर गुण प्रधान सेन नवीन धर्मात्मज कहलाता था ॥ ४ ॥

अनुपम गुणगणयुक्त, सुशील, जिनपदभक्त, स्त्रीरत्न मल्लिकव्वा उसकी पत्नी थीं ॥ ५ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ वनितारत्नद पें-
पावंगं पोगललरिदु जिनपूजेयना- ।
ना विधद दानदमलिन-
भावदोला मल्लिकब्बेयं पोल्ववरार् ॥ ६ ॥
श्रीपंचमियं नोतु-
द्यापनमं माडि बरसिं राद्धान्तमना ।
रूपवती सेनवधू जित-
कोपं श्रीमाघनंदि-यतिपतिगित्तल् ॥ ७ ॥

उस वनितारत्नकी जिनपूजाके बारेमें प्रशंसा कौन कर सकता है, उस मल्लिकब्बाके समान भक्त कोई थी ही नहीं ॥ ६ ॥

जिन सिद्धान्तको माननेवाली रूपवती उस सेनपत्नीने श्रीपञ्चमीका उद्यापनकर जितक्रोध माघनन्दि यतीश्वरको लिखवाकर यह (सिद्धान्त ग्रन्थकी प्रति) दी है ॥ ७ ॥

इस प्रशस्तिमें चार व्यक्तियोंका नामोल्लेख सहित गुणकीर्तन किया गया है—गुणभद्रसूरि, आचार्य माघनन्दि, सेन और उसकी पत्नी मल्लिकब्बा ।

मल्लिकब्बा सेनकी पत्नी थी । पं० सुमेरुचन्द्रजी दिवाकरने भी प्रथम भागकी भूमिकामें यह प्रशस्ति उद्धृत की है । उन्होंने सत्कर्मपञ्जिकाके आधारसे 'सेन' का पूरा नाम शान्तिषेण निर्दिष्ट किया है । यह तो स्पष्ट है कि मल्लिकब्बा सेनकी पत्नी थीं । परन्तु गुणधर मुनि और माघनन्दि आचार्यका परस्पर और इनके साथ क्या सम्बन्ध था यह इससे कुछ भी ज्ञात नहीं होता है । मात्र प्रशस्तिके अन्तिम श्लोकसे यह ज्ञात होता है कि मल्लिकब्बाने श्रीपञ्चमीव्रतके उद्यापनके फलस्वरूप सिद्धान्तग्रन्थकी प्रतिलिपि कराकर वह श्री माघनन्दि आचार्यको भेंट की ।

ऐतिहासिक दृष्टिसे इस प्रशस्तिका बहुत महत्त्व है अतएव इसकी छानबीनकी विशेष आवश्यकता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१५ बन्धसन्निकर्ष	१-२०२
बन्धसन्निकर्षके भेद	१
उत्कृष्ट सन्निकर्ष	१-११५
स्वस्थान	१-५७
परस्थान	५७-११५
जघन्य सन्निकर्ष	११५-२०२
अर्थपद	११५-११८
स्वस्थान	११८-१६४
परस्थान	१६४-२०२
१६ नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	२०२-२०४
भंगविचयके दो भेद	२०२
उत्कृष्ट भंगविचय	२०२-२०३
जघन्य भंगविचय	२०३-२०४
१७ भागाभागप्ररूपणा	२०४-२०६
भागाभागके दो भेद	२०४
उत्कृष्ट भागाभाग	२०४-२०५
जघन्य भागाभाग	२०५-२०६
१८ परिमाणप्ररूपणा	२०६-२१३
परिमाणके दो भेद	२०६
उत्कृष्ट परिमाण	२०६-२०९
जघन्य परिमाण	२०९-२१३
१९ क्षेत्रप्ररूपणा	२१३-२१७
क्षेत्रके दो भेद	२१३
उत्कृष्ट क्षेत्र	२१३-२१५
जघन्य क्षेत्र	२१५-२१७
२० स्पर्शनप्ररूपणा	२१७-२४३
स्पर्शनके दो भेद	२१७
उत्कृष्ट स्पर्शन	२१७-२३३
जघन्य स्पर्शन	२३३-२४३
२१ कालप्ररूपणा	२४३-२५६
कालके दो भेद	२४३
उत्कृष्ट काल	२४३-२४९
जघन्य काल	२४९-२५६
२२ अन्तरप्ररूपणा	२५६-२६०
अन्तरके दो भेद	२५६
उत्कृष्ट अन्तर	२५६-२५८
जघन्य अन्तर	२५९-२६०
२३ भावप्ररूपणा	२६१
भावके दो भेद	२६१
उत्कृष्ट भाव	२६१
जघन्य भाव	२६१
२४ अल्पबहुत्व	२६१
अल्पबहुत्वके दो भेद	२६१
जीव अल्पबहुत्व	२६१
जीव अल्पबहुत्वके तीन भेद	२६१
उत्कृष्ट जीव अल्पबहुत्व	२६१-२६२
जघन्य जीव अल्पबहुत्व	२६२-२६३
जघन्योत्कृष्ट जीव अल्पबहुत्व	२६३-२७०
स्थिति अल्पबहुत्व	२७०
स्थिति अल्पबहुत्वके तीन भेद	२७०-२७२
उत्कृष्ट स्थिति अल्पबहुत्व	२७०
जघन्य स्थिति अल्पबहुत्व	२७०
जघन्योत्कृष्ट स्थिति अल्पबहुत्व	२७०-२७२
भूयःस्थिति अल्पबहुत्व	२७२
भूयःस्थिति अल्पबहुत्वके दो भेद	२७२
स्वस्थान अल्पबहुत्व	२७२-२९२
उत्कृष्ट	२७२-२८२
जघन्य	२८३-२९२
परस्थान अल्पबहुत्व	२९३-३२३
परस्थान अल्पबहुत्वके दो भेद	२९३
उत्कृष्ट परस्थान अल्पबहुत्व	२९३-३०२
जघन्य परस्थान अल्पबहुत्व	३०२-३२३
भुजगारबन्ध	३२४
भुजगारबन्धके १३ अनुयोगद्वार	३२४-३९३
समुत्कीर्तनानुगम	३२४-३२८
स्वामित्वानुगम	३२८-३३३
कालानुगम	३३३-३३९
अन्तरानुगम	३३९-३६१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठ
नाना जीवोंकी अपेक्षा	
भंगविचयानुगम	३६१-३६३
भागाभागानुगम	३६०-३६४
परिमाणानुगम	३६४-३६५
क्षेत्रानुगम	३६५-३६७
स्पर्शनानुगम	३६७
कालानुगम	३८०
अन्तरानुगम	३८०-३८५
भावानुगम	३८५
अल्पबहुत्वानुगम	३८५-३९३
पदनिक्षेप	३९४
पदनिक्षेपके तीन अनुयोगद्वार	३९४
समुत्कीर्तना	३९४
स्वामित्व	३९५-४०३
स्वामित्वके दो भेद	३९५
उत्कृष्ट स्वामित्व	३९५-३९८
जघन्य स्वामित्व	३९८-४०२
जघन्योत्कृष्ट स्वामित्व	४०२-४०३
अल्पबहुत्व	४०३-४०४
अल्पबहुत्वके दो भेद	४०३
उत्कृष्ट अल्पबहुत्व	४०३-४०४
जघन्य अल्पबहुत्व	४०४
वृद्धिबन्ध	४०४
वृद्धिबन्धके १३ अनुयोगद्वार	४०४
समुत्कीर्तना	४०५-४०६

विषय	पृष्ठ
स्वामित्व	४०६-४१६
काल	४१७-४१८
अन्तर	४१८-४४४
नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय	४४५-४४६
भागाभाग	४४६-४४८
परिमाण	४४८-४५२
क्षेत्र	४५३-४५५
स्पर्शन	४५५-४७३
काल	......
अन्तर	......
भाव	....
अल्पबहुत्व	४७३-४८५
अध्यवसान समुदाहार	४८५
अध्यवसान समुदाहारके तीन भेद	४८५
प्रकृति समुदाहार	४८६
प्रकृति समुदाहारके दो भेद	४८६
प्रमाणानुगम	४८६
अल्पबहुत्व	४८६-४९४
जीवोंके दो भेद	४८६
अल्पबहुत्वके दो भेद	४८६
स्वस्थान अल्पबहुत्व	४८६-४९२
परस्थान अल्पबहुत्व	४९२-४९४
....	
....	
जीवसमुदाहार	४९४-४९५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिरिभगवंतभूदबलिभडारयपणीदो

महाबंधो

विदियो ट्ठिदिबंधाहियारो

बंधसण्णियासपरूवणा

१. सण्णियासं दुविधं—जहण्णयं उक्कस्सयं च । उकस्सं दुविधं—सत्थाणं परत्थाणं च । सत्थाणे पगदं । दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० आभिणिबोधिगणाणावरणीयस्स उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो चदुण्णं णाणावरणीयाणं णियमा बंधगो । तं तु० [1]उकस्सा वा अणुकस्सा वा । उकस्सादो अणुकस्सा समयूणमादिं कादूण याव पलिदोवमस्स असंखेँज्जदिभागहीणं बंधदि । एवं चदुण्णं णाणावरणीयाणं णवण्णं दंसणावरणीयाणमण्णमण्णं । तं तु० ।

बन्धसन्निकर्षप्ररूपणा

१. सन्निकर्ष दो प्रकारका है–जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्ट सन्निकर्ष दो प्रकारका है—स्वस्थान और परस्थान । स्वस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । वह दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणीय कर्मोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीन तक करता है । इसी प्रकार चार ज्ञानावरणीय और नौ दर्शनावरणीय कर्मोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है । यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है ।

---

१. मूलप्रतौ उक्कस्स वा अणुक्कस्स वा इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. सादस्स उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो असादस्स अबंधगो। असाद० उक्क०ट्ठिदिबंधंतो सादस्स अबंधगो।

३. मिच्छत्त० उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णियमा बंधगो। तं तु०। एवमण्णमण्णस्स। तं तु०। इत्थिवे० उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो मिच्छत्त-सोलसकसाय-अरदि-सोग-भय--दुगुं० णियमा बंधगो। णियमा अणु० चदुभागूणं बंधदि। पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबंधंतो मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० णि० बं०। णिय० अणु० दुभागूणं बंधदि। हस्स-रदि० सिया बंधदि सिया अबंधदि। यदि बंधदि तं तु० समयूणमादिं कादूण याव पलिदो० असं०। अरदि-सोग० सिया बंध० सिया अबंध०। यदि बंध० णियमा अणु० दुभागूणं बंधदि। [1]हस्स० उक्कस्स० बंध० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं०। णिय० अणु० दुभागूणं बंधदि। इत्थिवे० सिया बं० सिया अबं०। यदि बंध० णिय० अणु० तिभागूणं

२. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव असातावेदनीयका अबन्धक होता है। असातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सातावेदनीयका अबन्धक होता है।

३. मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार सोलह कषाय आदि प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय करके परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट भी करता है और अनुत्कृष्ट भी करता है। यदि अनुत्कृष्ट करता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून बाँधता है। हास्य और रतिका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध करता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्ध करता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, तो उसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। अरति और शोकका कदाचित् बन्ध करता है और कदाचित् नहीं बन्ध करता है। यदि बन्ध करता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक

१. मूलप्रतौ हस्स रदि उक्कस्स० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधदि। पुरिस० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० तं तु०। णवुंस० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णिय० अणु० दुभागूणं बंधदि। रदि णिय०। तं तु०। एवं रदीए वि।

४. णिरयायु० उक्क०ट्ठिदिबंधंतो तिण्णि आयूणं अबंधगो। एवमण्णमण्णस्स अबंधगो।

५. णिरयग० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वेउव्वि०-अंगो०-वण्ण०४-णिरयाणु०-अगुरु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-[1]अथिरादिछक्क-णिमि० णिय० बं०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु०।

६. तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबंधं० ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय०। तं तु०। एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-

---

होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन आयुओंका अबन्धक होता है। इसी प्रकार परस्परमें अबन्धक होता है।

५. नरकगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत,

---

१. मूलप्रतौ अथिरादिपंच णिमि० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थावर-दुस्सर० सिया बंध० सिया अबंध०। यदि बंध०। तं तु०। एवं ओरालि०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०।

७. मणुसगदि० उक्कस्सट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरा०अंगो०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-पत्तेय०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं०। णिय० अणु० चदुभागूणं बंधदि। दोसंठा०-दोसंघ०-अपज्ज० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० संखेंज्जदिभागूणं बंधदि। हुंडसं०-असंपत्त०-पर०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-पज्ज०-दुस्स० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णिय० अणु० चदुभागूणं बंधदि। मणुसाणुपु० णिय० बं०। तं तु०। एवं मणुसाणु०।

८. देवगदि उक्क०ट्ठिदिबंधं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० बं०। णिय० अणु० दुभागूणं बंधदि। समचदु०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० णि० बं०। तं तु०। थिर-सुभ-जस०

अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुस्वरका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इन प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

७. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येकशरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून बाँधता है। दो संस्थान, दो संहनन और अपर्याप्त इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त और दुस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

८. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । अथिर-असुभ-अजस० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० दुभागूणं बंधदि । एवं देवाणुपु० ।

९. एइंदियस्स उक्क०ट्ठिदिबंधं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं० वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । आदाउज्जो० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० । तं तु० । एवं आदाव-थावर० ।

१०. बीइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस०-बादर-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं० । अणु० संखेज्जदिभागूणं बंधदि । पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-पज्ज[1]०-अपज्ज०-दुस्सर सिया बं० । तं तु०[2] ।

असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एकसमय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। अस्थिर, अशुभ और अयशः-कीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। आतप और उद्योत इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो वह नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वर, इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। किन्तु यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका

१. मूलप्रतौ पज० दुस्सर अपज० साधार० सिया इति पाठः। २. मूलप्रतौ तं तु णा० दं० सिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं तीइं०-चदुरिं० ।

११. पंचिंदि० उक्क० ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-हुंडसं०-वएण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० । तं तु० । णिरय-तिरिक्खगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-ओरालि०-वेउव्वि०अंगो०-असंपत्त०-दो-आणु०-उज्जो० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । एवं तस० ।

१२. आहार० उक्क०ट्ठिदिबं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वएण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं बंधदि । आहार०अंगो० णिय० । तं तु० । तित्थय० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं बंधदि । एवं आहारअंगोवं० ।

बन्धक होता है, तो वह उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है । इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

११. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है । नरकगति, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका-संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है; यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है । इसी प्रकार त्रस काय प्रकृतिके सम्बन्धसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१२. आहारक शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । आहारक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन बाँधता है । इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्गके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

बं० सिया अबं० यदि बं० णिय० अणु० संखेज्जदिभागू० । अपज्ज० सिया बं० सिया अबं० यदि बं० तं तु । एवं तीइंदि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. तेजा[1]० उक्क०ट्ठिदिबं० कम्मइ०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० । तं तु० । णिरयगदि-तिरिक्खग०-एइंदि०-पंचिंदि०-दोसरीर-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० । तं तु० । तेजइगभंगो कम्मइ०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि०[2] त्ति ।

१४. समचदु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णि० णिय० । अणु० दुभागूणं० । तिरिक्खग०-दोसरी०-दोअंगो०-असंप०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णियमा अणु० बं० दुभागूणं० । मणुसगदिदुगं सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० अणु० तिभागूणं बं० । देवगदि वज्ज० देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिछक्क०

१३. तैजसशरीर की उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है,तो नियम से उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, और दुःस्वर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है, यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। इसी प्रकार तैजसशरीरके समान कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४. समचतुरस्र प्रकृति की उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकरनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। तिर्यञ्चगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगति द्विकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। देवगतिको छोड़कर देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छहका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक

१. मूलप्रतौ तेजाक० उक्क० इति पाठः। २. मूलप्रतौ णिमि० णत्थि इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । चदुसंघ० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० अणु० संखेंज्जदिभागूणं बं० । एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज० ।

१५. णग्गोद० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिभागूणं० । तिरिक्ख-मणुसग०-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागूणं बं० । वज्ज-णारा० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । एवं वज्जणारायण० । णवरि दो गदि-चदुसंठा०-दोआणु०-उज्जो० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । सादि० एवं चेव । णवरि णारायणं सिया० । तं तु० । एवं णारायणं ।

१६. खुज्जसंठाणं उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-

---

होता है । इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१५. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दो गति, चार संस्थान, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्वाति संस्थानके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि वह नाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है और अनुत्कृष्ट बन्धक भी होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णिय० संखें०भागू० । दोसंघ०-उज्जो० सिया बं० सिया अबं० । [यदि बं० णिय०] संखेंज्ज०भागू० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । एवं वामण० । णवरि असंपत्त० सिया० संखेंज्ज०भागू० । खीलिय० सिया बं० । तं तु० । एवं० खीलिय० ।

१७. ओरालि०अंगो० उ०ट्ठि०बं० तिरिक्खग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-असंप०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं असंप० ।

१८. वज्जरि० उक०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० बं० । णि० अणु० दुभागू० । तिरिक्खगदि-हुंड०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० सिया बं० सिया

न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो संहनन और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है और अनुत्कृष्ट बन्धक भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट बन्धक होता है, तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७. औदारिक आङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है,तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिकासंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८. वज्रर्षभनाराचकी उत्कृष्टस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति और अस्थिर आदि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अबं० । यदि बं० णिय० अणु० दुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० तिभागू० । समचदु०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० । तं तु० । चदुसंठा० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णियमा अणु० संखेंज्जदिभागू० ।

१९. उज्जो० उक्क० ट्ठि० बं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०--अथिरादिपंच०--णिमि० णि० बं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंप०-अप्पसत्थ०--तस०--थावर--दुस्सर० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० ।

२०. अप्पसत्थ० उक्क० ट्ठिदि० बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । णिरयगदि-तिरिक्ख-

कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति और स्थिर आदि छह प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थानोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१९. उद्योत प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एकसमय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रियजाति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

२०. अप्रशस्त विहायोगतिकी उत्कृष्टस्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगति, दो आनुपूर्वी और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

गदि-दोसरी०-दोअंगो०-अप्पसत्थ०-दोआणु०-उज्जो० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं०। तं तु०। एवं दुस्स०।

२१. सुहुम० उक्क०ट्ठिदि०बं० तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं०। अणु० संखेंज्जदिभागू०। पर०-उस्सास-पज्जत्त-पत्ते० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णि० अणु० संखेंज्जदिभागू०। एवं साधारण०।

२२. अपज्ज० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं० वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय०। अणु० संखेंज्जदिभागूणं बंधदि। एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस-थावर-बादर-पत्ते० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागूणं बंधदि। बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं०-सुहुम-साधार० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं०। णि० तं तु०।

२३. थिरणाम उक्क०ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-परघाद-

और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुस्वर प्रकृतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१. सूक्ष्म प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और प्रत्येक प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२२. अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, वह अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, त्रस, स्थावर, बादर और प्रत्येक इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, सूक्ष्म और साधारण प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है।

२३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और निर्माण इन प्रकृ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस्सास-पज्ज०-णिमि० णिय० बं० अणु० दुभागूणं बंधदि । तिरिक्खगदि-एइंदि० पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-हुंडसं०-दोअंगो०-असंप०-तिरिक्खाणु०-आदा-- उज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-पत्ते०-असुभादिपंच० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० अणु० दुभागूणं० । मणुसगदि-मणुसाणु० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० तिभागू० । देवगदि-समचदु०-वज्जरि० देवाणुपु०-पसत्थ०-सुभादिपंच० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । बेइंदि० तेइं०-चदुरिं०-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम-साधार० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेॅज्जदिभागू० । एवं सुभ० ।

२४. जसगि० उक्क०ट्ठि०बं० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०- णिमि० णि० बं० । णि० अणु० दुभागू० । तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिंदि०- ओरालि०-वेउव्वि०-हुंडसं०-दोअंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-अदाउज्जो०-अप्प- सत्थ०-तस-थावर-अथिरादिपंच० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० दुभागू० । मणुसगदिदुगं सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु०

तियोंका नियमसे बन्धक होता है, जो अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून बाँधता है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्डसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, प्रत्येक और अशुभादिक पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति और शुभादि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है, तो नियमसे वह उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म और साधारण इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यूनका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ प्रकृतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४. यशःकीर्ति प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्डसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और अस्थिर आदि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यूनका बन्धक होता है। मनुष्यगतिद्विकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिभागू० । देवगदि-समचदु०-वज्जरिसभ०-देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिपंच सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । बीइं०-तीइं०-चदुरिं०-चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० ।

२५. तित्थय० उक्क०ट्ठिदिबंधं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-आदें०-अजस०-णिमि० णिय० । अणु० संखेंज्जदिगुणहीणं बं० ।

२६. उच्चा० उक्क०ट्ठिदिबंधं० णीचा० अबंधगो । णीचागो० उक्क०ट्ठिदिबं० उच्चा० अबंधगो ।

२७. दाणंतरा० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुण्णं अंतरा० णिय० । तं तु उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण पलिदोवमस्स असंखेंज्ज०भागूणं बंधदि । एवं अण्णोण्णस्स । तं तु० ।

२८. आदेसेण णेरइएसु पंचणा०-णवदंसणा०-सादासा०-मोहणीय०-छब्बीस-

अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यूनका बन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि पाँच इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति,चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान और चार संहनन इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

२५. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

२६. उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव नीचगोत्रका अबन्धक होता है। नीचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव उच्चगोत्रका अबन्धक होता है।

२७. दानान्तरायकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार अन्तराय प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। वह उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पाँचों अन्तरायोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। वह उत्कृष्ट भी होता है और अनुत्कृष्ट भी होता है यदि अनुत्कृष्ट होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक होता है।

२८. आदेशसे नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, छब्बीस मोहनीय, दो आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय इन प्रकृतियोंका भङ्ग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोआयु०-दोगोद०-पंचंत० ओघं । तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदि-बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०—ओरालि०अंगो०—असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया बं० । तं तु० । एवमेदाओ सव्वाओ एक्केक्केण सह । तं तु० । सेसं ओघेण साधेदव्वं । एवं छसु पुढवीसु । सत्तमाए सो चेव भंगो । णवरि मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चा० तित्थयरभंगो । सेसाओ तिरिक्खगदिसंजुत्तं कादव्वं ।

२६. तिरिक्खेसु पंचणा०-णवदंसणा०-सादासा०-मोहणीय०छव्वीस०-चदुआयु०-दोगोद०-पंचंत० ओघं । णिरयगदि उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०[1]-वेउव्विय-तेजा०-क०-हुंडसं०--वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४—णिरयाणु०—अगु०४—अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एँक-

ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्ध करनेवाला होता है जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। उद्योतको कदाचित् बाँधता है और कदाचित् नहीं बाँधता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर एक-एक प्रकृतिके साथ सन्निकर्ष होता है। ऐसी अवस्थामें इन प्रकृतियोंको उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। शेष सन्निकर्ष ओघके समान साध लेना चाहिए। इसी प्रकार छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें यही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थंकर प्रकृतिके समान है। यहाँ शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगतिके साथ कहना चाहिए।

२९. तिर्यञ्चोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, छब्बीस मोहनीय, चार आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार परस्पर इन प्रकृतियोंका सन्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक बाँधता है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव

१. मूलप्रतौ पंचिंदिपंचिंदि वेउ—इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मॅक्कस्स । तं तु० । तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि० णि० बं० । अणु० संखेंज्जभागूणं० । चदुजादि-वामणसंठा०-ओरालि०अंगो०-खीलियसंघ०-असंपत्त०--आदाउज्जो०-थावर-सुहुम-अपज्ज०-साधार० णियमा बं० । तं तु० । पंचिंदि०-हुंडसं०-पर०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-तस०४-दुस्सर सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागूणं० । ओरालि०-तिरिक्खाणु० णियमा० । तं तु० । एवं ओरालि०-तिरिक्खाणु० । सेसं मूलोघं । णवरि किंचि विसेसो, अट्ठारसियाओ णादव्वाओ । एवं पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिणीसु ।

३०..पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासादा०-दोआयु०-दोगोद०-पंचंत० ओघं । मिच्छत्त उक्क०ट्ठिदिबं० सोलसक०-णवुंस०--अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० । तं तु० । एवमेदाओ अण्णमण्णस्स । तं तु० । इत्थि० उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं० । णिय०

तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। चार जाति, वामन संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, असम्प्राप्तासृप टिका संहनन, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इन प्रकृतियोंको नियमसे बाँधता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क और दुःस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून बाँधता है। औदारिकशरीर और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय करके सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष सन्निकर्ष मूलोघके समान है। किन्तु कुछ विशेषता है कि अठारह कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति-बन्धवाली प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।

३०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, दो आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति शोक, भय और जुगुप्सा इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक बाँधता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी होता है और अनुत्कृष्ट भी होता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणु० संखेंज्जदिभागूणं० । हस्स-रदि-अरदि-सोग सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । एवं पुरिस० । हस्स० उक्क० ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं० णिय० बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिभागू० । रदि० णिय० बं० । तं तु० । एवं रदीए ।

३१. तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठि०बं० एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच०-णिमि० णि० बं० । णि० तं तु० । एवमेदाओ अण्णमण्णस्स । तं तु० ।

३२. मणुसग० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० णिय० बं० । अणु० संखेंज्जदिभागू० । मणुसाणु० णिय० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्ध करता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए । हास्य प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट बन्धक भी होता है और अनुत्कृष्ट बन्धक भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिबन्धका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

३२. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यानुपूर्वीके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. बीइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०--हुंड०--वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-बादर--अपज्ज०--पत्तेग०--अथिरादिपंच०--णिमि० णिय० बं० । अणु० संखेंज्जदिभागू० । ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस० णिय० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०--असंप०-तस० ।

३४. तीइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०--ओरालि०अंगो०-असंप०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०--उप०--तस-बादर--अपज्ज०--पत्तेग०-अथिरादिपंच०-णिमि० णिय० बं० । णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । एवं चदुरिं०-पंचिंदि० ।

३५. समचदु० उक्क०ट्ठिदि-बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०--क०--ओरालि०--अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० बं० । णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । तिरिक्ख-मणुसगदि०-पंचसंघ०--दोआणु०--उज्जो०--अप्पसत्थ०--थिराथिर--सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-अणादें०-जस०-अजस० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० सिया

३३. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रस इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रसकाय इन प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४. त्रीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहननन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५. समचतुरस्रसंस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है, तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, और आदेय इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं० सिया अबं० । यदि बं० तं तु० । एवं वज्जरिसभ०-पसत्थ०-[सुभग]-सुस्सर-आदे० ।

३६. णग्गोद० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचिंदिय०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-वण्ण०४-असंपत्त०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णिमि० णिय० बं० । णि० अणु० संखेँज्जदिभागू० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जोव०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० अणु० संखेँज्जदिभागू० । वज्जणारा० सिया बं० । तं तु० । एवं वज्जणारायणं । सादीए वि एसेव भंगो । णवरि णारायण० तं तु० । एवं णारायणं वि ।

३७. खुज्ज० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालिय-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णिमि० णि० बं० । णि० अणु० संखेँज्जदिभागू० । दोगदि-दोसंघ०-दो-

यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है । यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३६. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है । यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तककी स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा स्वाति संस्थानका भी यही भङ्ग होताहै । इतनी विशेषता है कि इसके नाराचसंहननका उत्कृष्ट बन्ध भी होताहै और अनुत्कृष्ट बन्ध भी होता है । यदि अनुत्कृष्ट बन्ध होता है,तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इस प्रकार नाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३७. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । दो गति, दो संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । अद्धणारा० सिया बं० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । एवं वामणसंठाणं वि । णवरि खीलियसंघ० सिया बं० । तं तु० । एवं खीलिय० ।

३८. पर० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं० वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण-दूभग-अणादें०-अजस०-णिमि० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । उस्सास-पज्जत्त० णियमा० । तं तु० । अथिर-असुभ० सिया बं० संखेंज्जदिभागू० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभणामाणं ।

३९. आदाव० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-दूभग-अणादें०-

स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट भी बाँधता है और अनुत्कृष्ट भी बाँधता है। यदि अनुत्कृष्ट बाँधता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराचसंहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानके आश्रयसे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८. परघातकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। उच्छ्वास और पर्याप्त इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। अस्थिर अशुभका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छ्वास, पर्याप्त, स्थिर, और शुभ प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३९. आतपकी उत्कृष्ट स्थितिकी बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और निर्माण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णिय० बं० । णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । जसगि० सिया० । तं तु० । एवं उज्जोवं जसगित्तीए वि ।

४०. अप्पसत्थ० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि–बीईंदि०–ओरालिय–तेजा०–क०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंप०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-दूभग-अणादे०-णिमि० णि० बं० । णिय० अणु० संखेंज्जदिभागू० । उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया बं० । यदि बं० संखेज्जदिभागू० । दुस्सर० णिय० । तं तु० । एवं दुस्सर० ।

४१. बादर० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-एईंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त०–अथिरादिपंच०–णिमि० णिय० बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिभागू० ।

४२. मणुस०-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मणुसअपज्जत्त० तिरिक्खगदिभंगो ।

प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। यशः कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार उद्योत और यशःकीर्तिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४०. अप्रशस्त विहायोगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, द्वीन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, दुर्भग, अनादेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है, तो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । दुःस्वर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४१. बादर प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

४२. सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें तिर्य-

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

णवरि आहारदुगं तित्थयरं ओघं।

४३. देवगदीए देवेसु णाणावर०-दंसणावर०-वेदणी०-मोहणी०-आयुग०-गोद०-अंतराइ० ओघं। तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबं० ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं०। णि० तं तु०। एइंदि०-पंचिंदि-ओरालि०अंगो०-असंपत्तसेव०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया बं०। यदि बं० तं तु०। एवमेदाणि ऍक्कमेॅक्कस्स। तं तु०। सेसाणं णेरइयभंगो।

४४. भवण०-वाणवें०-जोदिसि०-सोधम्मीसाण त्ति तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं०। णि० तं तु०। आदाउज्जोव०

गतिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि आहारक द्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है।

४३. देवगतिमें देवोंमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, गोत्र और अन्तराय इनके अवान्तर भेदोंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुंडसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है, तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आंगोपांग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्टका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है।

४४. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म—ऐशान कल्पके देवोंमें तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आतप और उद्योत प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० । तं तु० । एवमेदाणि ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० । पंचिंदिय० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं० । णि० अणु० संखेज्जदिभागू० । हुंड०-उज्जो० सिया० संखेज्जदिभागू० । वामणसंठा०-खीलियसंघ०-असंपत्त० सिया० । तं तु० । ओरालि०अंगो-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० णिय० बं० । तं तु० । एवमेदाणि ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० । सेसाणं देवोघं ।

४५. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति णिरयोघं । आणद याव णवगेवज्जा त्ति णाणाव०-दंसणाव०-वेदणी०-गोद०-अंतरा० ओघं । मिच्छ० उक्क०ट्ठिदिबं० सोल-

---

होता है तो उत्कृष्टका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्टका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है और ऐसी अवस्थामें वह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। हुण्ड संस्थान और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वामन संस्थान, कीलक संहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त-विहायोगति, त्रस और दुःस्वरका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर एक दूसरेका सन्निकर्ष होता है और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

४५. सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, गोत्र और अन्तरायके अवान्तर भेदोंका भङ्ग ओघके समान है। मिथ्यात्वकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० । तं तु० ।, एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । इत्थि० उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णियमा बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिभागू० । पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं० । णिय० संखेंज्जदिभागू० । हस्स०-रदि० सिया । तं तु० । अरदि-सोग० सिया० संखेंज्जदिभागू० । हस्स[1]० उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू० । पुरिस० सिया० । तं तु० । इत्थि०-णवुंस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । रदि० णिय० बं० । तं तु० । एवं रदीए वि० ।

उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग,न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है और तब इनकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय,न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य और रतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अरति और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य की उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१. मूलप्रतौ हस्स-रदि उक्क० इति पाठः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं०[1] पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-कम्मइय०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्तसेव०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णि० णिय० बं० । णि० तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेॅक्कस्स । तं तु० ।

४७. समचदु० उक्क०ट्ठिदिबं० मणुसग०-पंचिंदिय-ओरालिय-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि० णिय० संखेॅज्जदिभागू० । वज्जरिसभ०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया० । तं तु० । पंचसंघ०-अथिरादिछ० सिया० संखेॅज्जदिभागूणं० । याओ तं तु समचदुरसंठाणेण ताओ समचदुर० सेसभंगाओ । सेसपगदीणं मणुसगदिसहगदाओ णिय० संखेॅज्जदिभागू० । याओ सियाओ बं० ताओ तं तु० वा संखेॅज्जदिभागूणं वा बंधदि । तित्थयरं देवभंगो ।

---

४६. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है ।

४७. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, और स्थिर आदि छहका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । पांच संहनन और अस्थिर आदि छहका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । यहां पर जिन प्रकृतियोंका समचतुरस्र संस्थानके साथ उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है या एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है उनका समचतुरस्र संस्थानके समान भङ्ग जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका मनुष्यगतिके साथ नियमसे संख्यातवां भाग न्यून अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है । उसमें भी जिनका कदाचित् बन्ध होता है उनका या तो उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिबन्ध होता है या संख्यातवां भाग न्यून स्थितिबन्ध होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग देवोंके समान है ।

1. मूलप्रतौ—ट्ठिदिबं० पंचणा० ओरा इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति पंचणा०-छदंसणा०-सादासा०-बारसक०-सत्तणोक०-पंचंत० ओघं। मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिसभ०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०-४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि० णिय०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० मणुसगदि० णियमा संखेंज्जदिभागू०। एवं धुवियाओ सव्वाओ। सुभ-जस० सिया० तं तु०। असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जदिभागू० बं०। एवं सुभ-जसगित्ति०।

४९. सव्वएइंदि०-सव्वविगलिंदि० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णवरि वीचारट्ठाणाणि णादव्वाणि भवंति। [1]पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्ता० सव्वपगदीणं ओघं।

४८. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, बारह कषाय, सात नोकषाय और पाँच अन्तरायका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है। जो उत्कृष्ट भी होता है और अनुत्कृष्ट भी होता है। यदि अनुत्कृष्ट होता है, तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका होता है। स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगतिका नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार सब ध्रुव प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४९. सब एकेन्द्रिय और सब विकलेन्द्रिय जीवोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके वीचार स्थान ज्ञातव्य हैं। पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त

१. मूलप्रतौ पंचिंदिय-तस अपज्जत्ता इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचिंदियअपज्जत्ता० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। पंचकायाणं [1]पज्जत्तापज्जत्ताणं तिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। णवरि एइंदिय-पंचकायाणं यम्हि संखेज्जदिभागहीणं तम्हि असं-खेज्जदिभागहीणं बंधदि। तस-तसपज्जत्ता० ओघं। तसअपज्जत्ता० [2]तिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। पंचमण०–पंचवचि०-कायजोगि० ओघं। ओरालिकायजोगि० मणुसभंगो।

५०. ओरालियमिस्से देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि० णिय०। अणु० णि० संखेज्जगुणहीणं०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०-णियमा। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एदाओ पगदीओ तित्थयरेण सह ऍक्कमेक्कस्स तं तु० कादव्वा। सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

५१. वेउव्वियका० देवोघं। एवं चेव वेउव्वियमिस्स०। णवरि याओ तं तु०

जीवोंके सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। तथा पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। पाँच स्थावर काय तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि सब एकेन्द्रिय और पाँचों स्थावर कायिक जीवोंके, जिनका संख्यातवां भाग हीन बन्ध कहा है,उनका असंख्या-तवां भाग हीन बन्ध होता है। त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंके सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। तथा त्रस अपर्याप्तकोंके तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी और काययोगी जीवोंके सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। तथा औदारिक काययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

५०. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरु-लघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशः-कीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देव-गत्यानुपूर्वी इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अब-न्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इन प्रकृतियोंको तीर्थंकर प्रकृतिके साथ परस्पर उत्कृष्ट स्थितिके बन्धरूपसे और एक समय कम पल्यके असंख्यातवें भाग न्यून तक अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धरूपसे कहना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

५१. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो पर-

१. मूलप्रतौ पज्जत्ता अपज्जत्ताणं इति पाठः। २. मूलप्रतौ तिरिक्खपज्जत्त इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पगदीओ ताओ एँक्कमेँक्कस्स तं तु० । सेसाओ संखेँज्जदिभागूणा बंधदि ।

५२. आहार०-आहारमि० पंचणा०-छदंसणा०-दोवेदणी०-पंचंत० ओघं । कोधसंज० उक्क०ट्ठिदिबं० तिण्णिसंज०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेँक्कस्स । तं तु० । हस्स० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० णिय० संखेँज्जदिभागूणं बं० । रदी० णिय० । तं तु० । एवं रदीए ।

५३. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदियादिपगदीओ णिय० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं देवगदिसहगदाओ एँक्कमेँक्कस्स । तं तु० । थिर०

स्पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली या एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्धवाली प्रकृतियाँ हैं, उनका यह जीव परस्पर या तो उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है या उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है और शेषका संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिबन्ध करता है।

५२. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, दो वेदनीय और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। और तब इनकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भागहीनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिके आश्रयसे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

५३. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगतिके साथ बँधनेवाली प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है। तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क०ट्ठिदिबं० देवगदिअट्ठावीसं णिय० बं० । संखेंज्जदिभा० । सुभ-जस० सिया० । तं तु० । असुभ-अजस० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । तित्थ० उक्क०-ट्ठिदिबं० देवगदि-पंचिंदि०आदिअट्ठावीसं पगदीओ णिय० संखेंज्जदिभागूणं बं० ।

५४. कम्मइ० पंचणा०-णवदंसणा०-सादासा०-गोद०-पंचंत० ओघं । मिच्छ० उक्क०ट्ठिदिबं० सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० । णिय० । तं तु० । एवमेदाओ एकमेक्कस्स । तं तु० । इत्थिवे० उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णिय० संखेंज्जदिभागूणं बं० । पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबं० इत्थिभंगो । हस्स-रदि० सिया० । तं तु० । अरदि-सोग सिया० संखेंज्जदिभागूणं० । हस्स०

बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग-हीन स्थितिका बन्धक होता है । शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । अशुभ और अयशःकीर्ति प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति और पञ्चेन्द्रिय जाति आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है ।

५४. कार्मण काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता-असाता वेदनीय, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । इनमेंसे किसी एककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक शेषकी उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है।यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति,शोक, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है । जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदको उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है । यह हास्य और रतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । अरति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क०ट्ठिदिबं० मिच्छ०-सोलसक०-भयदुगुं० णिय० संखेज्जदिभागू० । इत्थि०-णवुंस० सिया बं० संखेज्जदिभागू० । पुरिसवे० सिया० । तं०तु० । रदि० णिय० । तं तु० । एवं रदीए ।

५५. तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबं० एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-पर०-उस्सा०--आदाउज्जो०--अप्पसत्थ०--तस--थावर--बादर--सुहुम--पज्जत्त--पत्तेय०--साधार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच०-णिमि० णियमा० । तं तु० । एवं तिरिक्खगदिभंगो ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच--णिमिण० त्ति ।

और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । रतिका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रतिके आश्रयसे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

५५. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्च गतिके समान जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिभागू० । तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-अप्पसत्थ० पर०-उस्सा०-पज्जत्तापज्जत्त०-दुस्सरं सिया संखेंज्जदिभागू० । मणुसाणु० णिय० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

५७. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर- असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णि० णिय० संखेंज्जगुणहीणं बं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं० । णि० तं तु० । तित्थयरं सिया० । तं तु० । एवं देवगदि०४ ।

५८. एइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-

५६. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । तीन संस्थान, तीन संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

५७. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस-चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थिति का भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार देवगति चतुष्कके *आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।*

५८. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु,

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं० । तं तु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त--पत्तेय०--साधार० सिया० । तं तु० । एवं थावर० । बीइं०-तीइंदि०-चदुरिं०-चदुसंठा०-चदुसंघ०-अपज्ज० ओघं ।

५९. समचदु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तस०४-णिमि० णिय० संखेंज्जदिभागूणं० । दोगदि-पंचसंघ०-दोआणुपु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० सिया० संखेंज्जदिभागू० । वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ० सिया० । तं तु० । एवं वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें०-जस० ।

६०. पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०--क०--हुंड०--ओरालि०अंगो०-असंपत्त०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४--अप्पसत्थ०--तस०४--

उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका आलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रिय जाति, चार संस्थान, चार संहनन और अपर्याप्त इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान जानना चाहिए।

५९. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, पांच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय, और यशःकीर्ति इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६०. पञ्चेन्द्रियजातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथिरादिछ०-णि० णिय० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं पंचिंदियभंगो ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-पर०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-तस०४-दुस्सरा त्ति । णवरि पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्ते० उक्क०ट्ठिदिबं० एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर सिया० । तं तु० ।

६१. आदाव० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०--अगु०४--थावर--बादर--पज्जत्त--पत्ते०--अथिरादिपंच--णिमि० णिय० बं० । तं तु० । उज्जो० तिरिक्खगदिभंगो । णवरि सुहुम--अपज्जत्त--साधारणं वज्ज० ।

६२. सुहुम० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-अपज्जत्त-साधारण-अथिरादिपंच-णिमि०

त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टको अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क और दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

६१. आतपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण प्रकृतियोंको छोड़कर इसका सन्निकर्ष कहना चाहिए।

६२. सूक्ष्म प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर आदि पाँच और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिय० बं० । तं तु० । एवं अपज्जत्त-साधारण० ।

६३. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० दोगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पत्तेय०-साधार०-असुभादिपंच० सिया० संखेॅज्ज०भागूणं बं० । ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-णिमि० णि० बं० संखेॅज्जभागू० । समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभगादिपंच सिया० । तं तु० । एवं थिरभंगो सुभ-जसगि० । णवरि जसगित्तीए सुहुम-साधारणं वज्ज ।

६४. तित्थय० उक्क०ट्ठिदिबं० मणुसगदिपंचग० सिया० संखेॅज्जदिभागहीणं बं० । देवगदि०४ सिया० । तं तु० । पंचिंदियाओ धुविगाओ अथिर-असुभ-सुभग-

---

निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है, जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारण प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

६३. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव दो गति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक, साधारण और अशुभादि पाँच इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, और सुभग आदि पाँचका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्थिर प्रकृतिके समान शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहते समय सूक्ष्म और साधारण इन दो प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

६४. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगति पञ्चकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । देवगतिचतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियाँ तथा अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और अयशःकीर्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुस्सर-आदें०-अज० णि० बं० अणु० संखेंज्जदिभागहीणं० ।

६५. इत्थिवे० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेद-मोहणी०छव्वीस-आयु० ४-दोगोद०-पंचंत० ओघं । णिरयगदि० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंड०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-णिरयाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०--णिमि० णिय० बं० । तं तु० । एवं णिरयगदिभंगो पंचिंदि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर त्ति ।

६६. तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबं० एइंदिय-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । आदाउज्जो सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खगदिभंगो एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-थावर त्ति ।

इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है।

६५. स्त्रीवेदवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेद, मोहनीय छब्बीस, आयु चार, दो गोत्र और पाँच अन्तराय इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्ष ओघके समान है। नरकगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगतिके समान पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

६६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगतिके समान एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत और स्थावर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं। णवरि ओरालि०अंगो० णिय० बं० संखेँज्जदिभागू०। दोसंठा०-तिण्णिसंघ०-अपज्ज० सिया० संखेँज्जदिभागू०।

६८. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं। बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० उक्क०ट्ठिदि० ओघं। णवरि विसेसो, ओरालि०अंगो०-असंपत्तसे० णिय०। तं तु०। आहार०-आहार०अंगो० ओघं।

६९. तेजइग० उक्क०ट्ठिदिबं० कम्मइ०-हुंडसं०-वण्ण४-अगु०[४]-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०-णिमि०-णिय० बं०। तं तु०। णिरयगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस--थावर--दुस्सर० सिया०। तं तु०। एवं तेजा०भंगो कम्मइग०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमिण त्ति।

६७. मनुष्यगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्गका यह नियमसे बन्धक है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक है। दो संस्थान, तीन संहनन और पर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक है और कदाचित् अबन्धक है। यदि बन्धक है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक है।

६८. देवगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह ओघके समान है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह ओघके समान है। इतना विशेष है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक शरीर और आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करनेपर वह ओघके समान है।

६९. तैजस शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव कार्मण शरीर, हुण्ड-संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस शरीरके समान कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. समचदु० उक्क०ट्ठिदि० ओघं। णवरि ओरालि०अंगो०-असंपत्त० सिया[1]० संखेॅज्जदिभागू० । एवं पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें० । णग्गोद०-सादि०-खुज्ज-संठा० ओघं ।

७१. वामणसंठा० उक्क०ट्ठिदिबं० ओरालि०अंगो० णिय० । तं तु० । खीलियसंघ०-असंप० सिया० । तं तु० । सेसं ओघं ।

७२. ओरालि०अंगो० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-ओरालिय-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस-बादर-पज्जत्त०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेॅज्जदिभागू० । बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं०-वामण०-खीलिय०-असंप०-अपज्ज० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-हुंड०-पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-पज्जत्त०-दुस्सर

७०. समचतुरस्र संस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करने पर वह ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष कहना चाहिए। न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान, स्वाति संस्थान और कुब्जक संस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्षका विचार करने पर वह ओघके समान है।

७१. वामन संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है। तोउत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। शेष सन्निकर्ष ओघके समान है।

७२. औदारिक आङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्याप्त, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, वामन संस्थान, कीलक संहनन, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और अपर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त

१. मूलप्रतौ सिया० तं तु० संखे-इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं असंपत्त० । वज्जरि० ओघं । णवरि विसेसो ओरालि०अंगो० णिय० संखेंज्जदिभागू० ।

७३. सुहुम-अपज्जत्त-साधारणं ओघं । णवरि विसेसो । पज्जत्त० उक्क०ट्ठिदिबं० ओरालि०अंगो०-असंपत्तसे० आदेसेण सिया० । तं तु० । थिर० ओघं । णवरि विसेसो, ओरालि०अंगो०-असंपत्त० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं सुभ०-जसगि० । तित्थय० ओघं ।

७४. पुरिसवेदे सव्वाणं ओघं । णवुंसग० सत्तण्णं ओघं । णिरयगदि० ओघं । तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा-०क०-हुंड०[1]-ओरालि०-अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-

विहायोगति, पर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । वज्रर्षभनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । इतना विशेष है कि औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है ।

७३. सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । किन्तु यहाँ विशेष जानकर कहना चाहिए । पर्याप्तकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका आदेशसे कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । तीर्थंकर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है ।

७४. पुरुषवेदवाले जीवोंके सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवम्लबन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । नपुंसक वेदवाले जीवोंमें सात कर्मोंके उत्कृष्ट स्थितिका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । नरकगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धकरनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता

१. मूलप्रतौ हुंड० उज्जो० सिया तं तु० ओरा—इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णिय० बं० । तं तु० । [उज्जो० सिया० । तं तु० ।] एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जोव त्ति । मणुसगदि-देवगदि० ओघं ।

७५. एइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि० [णिय० बं० । णिय० अणु०] संखेंज्जदिभागू० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सिया० संखेंज्जदिभागू० । आदाव-सुहुम-अपज्जत्त-साधारणं सिया० । तं तु० । थावर० णिय० बं० । तं तु० । एवं थावर० । बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० ओघं ।

७६. पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-अप्प-

---

है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँभाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होताहै और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो कदाचित् उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और कदाचित् अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य गति और देवगतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है ।

७५. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है,नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है,तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है ।

७६. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । णिरयगदि-तिरिक्खगदि-ओरालिय-वेउव्विय०-दोअंगो०-असंपसत्त०-दोआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं पंचिंदियजादिभंगो तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमिण त्ति । पंचसंठा०-पंचसंघ० ओघं ।

७७. आदाव० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-ओरालिय-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । एइंदिय-थावर० णिय० । तं तु० । पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज० ओघं । सुहुम-अपज्जत्त-साधार० ओघं । णवरि अपज्जत्तस्स एइंदि०-थावर० सिया० । तं तु० ।

अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। पाँच संस्थान और पाँच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है।

७७. आतपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। किन्तु यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है। तथा सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका अवलम्बन लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तके साथ एकेन्द्रिय जाति और स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थिति का बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७८. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं । णवरि विसेसो, एइंदि०-आदाव-थावर० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । तित्थय० ओघं ।

७९. अवगदवे० आभिणिबो० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणाणा० णि० । णि० उक्कस्सा । एवं चदुणाणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत० ।

८०. कोधादि०४-मदि०-सुद०-विभंग० ओघं । आभि०-सुद०-ओधि० छण्णं कम्माणं ओघं । अपच्चक्खाणा०[1]कोध० उक्क०ट्ठिदिबं० एक्कारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स० । तं तु० । हस्स० उक्क०ट्ठिदिबं० बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगुणहीणं बं० ।

७८. स्थिर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है । इतना विशेष है कि एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष ओघके समान है ।

७९. अपगतवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८०. क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें अपनी अपनी सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है । अभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें छह कर्मोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष ओघके समान है । अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव ग्यारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुण हीन स्थितिका बन्धक होता है । रतिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका

---

१. मूलप्रतौ पच्चक्खाणा०४ कोध० इति पाठः ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

रदि० णिय० बं० । तं तु० । एवं रदीए ।

८१. मणुसग० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४--पसत्थवि०-तस०४--अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अज०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । एवं मणुसगदि-भंगो ओरालि०-ओरालि०अंगो-वज्जरिसभ०-मणुसाणु० ।

८२. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०--तस०४--अथिर--असुभ--सुभग--सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि० णिय० । तं तु० । तित्थय० सिया बं० । तं तु० । एवं देवगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-देवाणु०-तित्थय० ।

८३. पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं०[1] तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पस-

---

असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्ध का आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८१. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार मनुष्यगतिके समान औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है ।तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एकसमय न्यून स्थितिसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार देवगतिके समान वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थंकर प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८३ पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण

---

१. मूलप्रतौ बं० पंचिंदि० तेजा--इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेँज्ज-अजस०-णिमि० बं० । तं तु० । मणुसग०--देवग०--ओरालि०--वेउव्वि०--दोअंगोवं०--वज्जरि०--दोआणु०--तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं पंचिंदिय[1]-भंगो तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग--सुस्सर--आदेँज्ज--अजस०--णिमिण त्ति । आहार०-आहार०अंगो ओघं ।

८४. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० बं० संखेँज्जगुणहीणं बं० । मणुसगदि-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-वज्जरिस०-दोआणु० सिया० संखेँज्जगुणहीणं बं०[2] । सुभ-जसगित्ति० सिया० । तं तु० । असुभ-अजस०-तित्थ० सिया०

शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थंकर इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है।

८४. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका

१. मूलप्रतौ पंचिंदिय तेजादि भंगो इति पाठः । २. मूलप्रतौ बं० सुभग-जसगित्ति इति पाठः ।

संखेज्जगुणहीणं बं० । एवं सुभ-जसगित्ति० ।

८५. मणपज्जव० छण्णं कम्माणं ओघं । कोधसंज० उक्क०ट्ठि० तिण्णिसंज०[1] पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । हस्स० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० बं संखेज्जगुण-हीणं० । रदि० णिय० बं० । तं तु० । एवं रदीए ।

८६. देवगदि० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु० वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०--तस०४--अथिर--असुभ--सुभग--सुस्सर-आदेंज्ज०-अजस०-णिमि० णि० बं० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्ति प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८५. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें छह कर्मोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष ओघके समान है । क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । रतिका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८६. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । इसी प्रकार इनमेंसे प्रत्येकके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थंकर प्रकृतिका

[1] मूलप्रतौ-संज० बं० पुरिस० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थय० सिया० । तं तु० । आहार०-आहार०अंगो० ओघं ।

८७. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० देवगदिअट्ठावीसं तिण्णियुगलं वज्ज० णिय० बं० संखेंज्जदिगुणहीणं बं० । सुभ०-जस० सिया० । तं तु० । असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । एवं सुभ-जस० ।

८८. तित्थय० उक्क०ट्ठिदिबं० देवगदिअट्ठावीसं णिय० बं० । तं तु० । सामाइ०-छेदो०-परिहार० [मणपज्जवभंगो] ।

८९. सुहुमसं० आभिणिबो० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा० णिय० बं० उक्कस्सा । एवमण्णमण्णस्स । एवं चदुदं०-पंचंत० । संजदासंजद० परिहारभंगो । असंजद-चक्खुदं०-अचक्खुदं० ओघं । ओधिदं० ओधिणाणिभंगो । किण्णाए णवुंसगभंगो ।

कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष ओघके समान है ।

८७. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तीन युगलोंको छोड़कर देवगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्ति इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

८८. तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति आदि अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत और परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए ।

८९. सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । संयतासंयतोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है । असंयत, चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। अवधिदर्शनी जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । कृष्ण लेश्यामें नपुंसकवेदी जीवोंके समान भङ्ग है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९०. णील-काऊणं सत्तण्णं कम्माणं ओघं। णिरयगदि० उक्क० ट्ठिदि०बं० पंचिंदिय-तेजा०--क०--हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ० णिमि० णिय० बं०। णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० णिय० बं०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु०।

९१. तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पस०--तस०४--अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। मणुसगदिदुग-पंचसंठा-पंचसंघ०-पसत्थ०-थिरादिछ० णिरयभंगो।

९०. नील और कापोत लेश्यामें सात कर्मोका भङ्ग ओघके समान है। नरकगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९१. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे परस्पर सन्निकर्ष होता है। ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगतिद्विक पाँच संस्थान, पाँच संहनन, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छह इनके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९२. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु-४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० । णिय० अणु० संखेंज्जगुणहीणं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० णि० बं० अणु० संखेंज्जदिगुणहीणं० । देवाणु० णिय० बं० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं० । एवं देवाणु० ।

९३. एइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-दूभग-अणादें०-णिमि० णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं० । पर०-उस्सा-उज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०सिया बं० । यदि बं० णिय० अणु० संखेंज्जगुणहीणं । आदाव-सुहुमादि-तिण्णि० सिया० । तं तु० । थावर० णिय० । तं तु० । एवं थावर० ।

---

९२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९३. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, दुर्भग, अनादेय और निर्माण इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। आतप और सूक्ष्म आदि तीनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्थावर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९४. बीइंदि० उक्क०ट्ठिदि०बं० तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खा०-अगु०-उप०-तस-बादर-पत्ते०-दूभग--अणादे०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगुणहीणं० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-पज्ज०-थिराथिर-सुभासुभ-दुस्सर-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । अपज्ज० सिया० । तं तु० । एवं तीइंदि०-चदुरिं० ।

९५. आदाव० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-दूभग-अणादे०-णिमि० णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं० । एइंदि०-थावर० णिय० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया बं० । यदि बं० संखेंज्जगुणहीणं० ।

९६. पर०- अपज्ज० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड-सं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि० णिय० संखेंज्जगुण-

---

९४. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यात गुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुःस्वर, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। अपर्याप्तका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

९५. आतपकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट-की अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

९६. परघात और अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही० । चदुजादि-थावर-सुहुम-साधारण० सिया० । तं तु० । पंचिंदि०-ओरालि०अंगो-असंपत्त०-तस०-बादर-पत्ते० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । मणुसगदि-मणुसाणु० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० ।

९७. तित्थय० णिरयगदिभंगो । णवरि णीलाए तित्थय० देवगदिसंजुत्तं भाणिदव्वं । णवरि थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं । एवं धुविगाणं पि णिय० संखेंज्जगुणहीणं० ।

९८. तेऊए सत्तण्णं कम्माणं ओघं । देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिदि०-तेजा० क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० बं० संखेंज्जगुणहीणं० । वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । एवं देवगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०

अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रस, बादर और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

९७. तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नरकगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि नील लेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका सन्निकर्ष कहते समय देवगतिके साथ कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भी नियमसे संख्यातगुणहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है।

९८. पीत लेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्टसंख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगतिके समान वैक्रियिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगो०-देवाणु० । आहार०-आहार०अंगो० ओघं । सेसं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए वि । णवरि एइंदि०-आदाव-थावरं वज्ज० ।

९९. सुक्काए छण्णं कम्माणं ओघं । मोहणी० आणदभंगो । देवगदि० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जगुणहीणं० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणुपु० णि० बं० । तं तु० । थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणुपु० । सेसाणं आणदभंगो । भवसिद्धिया० ओघं । अब्भवसिद्धिया० मदिभंगो । सम्मादिट्ठी० ओधिभंगो ।

१००. खइगस० सत्तण्णं कम्माणं ओधिभंगो । मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-

---

शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धका आश्रय लेकर सन्निकर्ष जानना चाहिए। आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्षओघके समान है । तथा शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके आश्रयसे सन्निकर्ष सौधर्म कल्पके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनके एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इन तीन प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

९९. शुक्ल लेश्यामें छह कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है । मोहनीय कर्मका भङ्ग आनत कल्पके समान है । देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्त्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष आनत कल्पके समान है । भव्य जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है । अभव्य जीवोंमें मत्यज्ञानियोंके समान है तथा सम्यग्दृष्टियोंमें अवधिज्ञानियोंके समान है ।

१००. क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंमें सात कर्मोंका भङ्ग अवधिज्ञानियोंके समान है । मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्त्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-अजस०-णिमि० णिय० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० ।

१०१. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणुपु० णि० बं० । तं तु० । एवं वेउव्वियदुग-देवाणुपु० ।

१०२. पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-अजस०-णिमि० णि० बं० । तं तु० ।

अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०१. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक द्विक और देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०२. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसगदि-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-[दो]अंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदे पंचिंदियभंगो ।

१०३. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णिय० संखेंज्जदिभागू० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जदि-भागू० । सुभग-जसगि० सिया० । तं तु० । एवं थिरभंगो सुभ-जस० ।

१०४. वेदग०-उवसमस० ओधिभंगो । णवरि उवसम० तित्थय० उक्क०-ट्ठिदिबं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-अजस०-

होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी तथा तीर्थंकर प्रकृतिका स्यात् बन्धक होता है और स्यात् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान इन सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१०३. स्थिर प्रकृतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । सुभग और यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार स्थिर प्रकृतिके समान शुभ और यशःकीर्तिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१०४. वेदक सम्यक्त्व और उपशम सम्यक्त्वमें अपनी सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि उप-शम सम्यक्त्वमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव देवगति, पञ्चे-न्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जगुणहीo ।

१०५. सासणे छण्णं कम्माणं ओघं । अणंताणुबंधिकोध० उक्क०ट्ठिदिबं० पण्णारसक०-इत्थि०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० णि० बं० । णि० तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स । तं तु० । पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबं० सोलसक०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेॅज्जदिभागू० । हस्स-रदि० सिया० । तं तु० । अरदि-सोग सिया० संखेॅज्जदिभागू० । हस्स० उक्क०ट्ठिदिबं० सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं० संखेज्जदिभागू० । इत्थि० सिया० संखेॅज्जदिभागू० । पुरिस० सिया० । तं तु० । रदि० णियमा० । तं तु० । एवं रदीए वि ।

होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है ।

१०५. सासादन सम्यक्त्वमें छह कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पन्द्रह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थिति का बन्धक होता है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्य और रतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टको अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भागहीनतक स्थितिका बन्धक होता है। अरति और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। हास्यकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीनतक स्थितिका बन्धक होता है। रतिका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०६. तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-वामण-संठा०-ओरालि०अंगो०-खीलियसंघ०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

१०७. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-वण्ण०४-अगु०-अप्पसत्थवि०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० संखेंज्जदि-भागू० । । खुज्जसं०-वामणसं०-अद्ध०-खीलिय० सिया० संखेंज्जदिभागू० । मणु-साणु० णि० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

१०८. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-

---

१०६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वामन संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है और तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१०७. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। कुब्जक संस्थान, वामन संस्थान, अर्द्धनाराच संहनन और कीलक संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१०८. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । वेउव्वि०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें० णिय० । तं तु० । थिर-सुभ-जसगि० सिया० । तं तु० । अथिर-असुभ-अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु० ।

१०६. समचदु० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० संखेंज्जदिभागू० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-ओरालि०-ओरालिअंगो०-चदुसंघ०-दोआणु०-अप्पसत्थवि०-अथिरादिछ० सिया० संखेंज्जदिभागू० । देवगदि-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थवि०-थिरादिछ० सिया० । तं तु० । एवं समचदु०भंगो पसत्थवि०-थिरादिछ० ।

बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१०६. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार समचतुरस्र संस्थानके समान प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छहके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११०. णग्गोद० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिण्णिसंघ०--दोआणु०--उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । एवं वज्जणारायणं । एवं सादियं पि । णवरि णारायणं सिया० । तं तु० । [एवं] णारायणं ।

१११. खुज्ज० उक्क०ट्ठिदिबं० तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४--अप्पसत्थ०--तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । खीलिय०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० ।

११०. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवाँ भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवाँ भागहीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननके उत्कृष्ट स्थिति बन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहना चाहिए । तथा इसी प्रकार स्वातिसंस्थानके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१११. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । कीलक संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीन तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार अर्धनाराच संहननके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११२. सम्मामि० ओधिभंगो। मिच्छे मदिभंगो। सण्णि० मूलोघं। असण्णीसु पंचणा०-णवदंसणा०-मोहणी०छब्बीस-चदुआयु०-दोगोद०-पंचंत० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णिरयगदिसंजुत्ताणं णामपगदीणं तिरिक्खोघं। तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि० णि० संखेंज्जदिभागू०। एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर-सुहुम-अपज्ज०-साधार० णि०। तं तु०। एवमेदासिं तंतु० पदिदाणं सरिसो भंगो।

११३. मणुसग० उक्क०ट्ठिदिबं० मणुसाणु० णि०। तं तु०। सेसाणं संखेंज्जदिभागू०।

११४. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-वेउव्वि-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णि० णि० संखेंज्जदिभागू०। समचदु०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० णिय०। तं तु०। थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया०

---

११२. सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अवधिज्ञानियोंके समान भङ्ग है। मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानियोंके समान भङ्ग है। संज्ञी जीवोंमें मूलोघके समान भङ्ग है। असंज्ञी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, छब्बीस मोहनीय, चार आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। नरकगति सहित नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार 'तं तु' रूपसे कही गई इन प्रकृतियोंका सदृश भंग होता है।

११३. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेष प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

११४. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्जदिभागू० । एवं देवाणु० । चदुजादि० पंचिंदिय०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

११५. समचदु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णि० णिय० संखेंज्जदिभागू० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जोव-अप्पसत्थ०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-अणादें०-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । देवगदि-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० सिया० । तं तु० ।

११६. चदुसंठा०-ओरालि०अंगो--चदुसंघ०--आदाउज्जो०--थिर--सुभ--जसगि० अपज्जत्तभंगो । आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं उक्कस्स-सत्थाण-सण्णियासं समत्तं ।

११७. उक्कस्सपरत्थाणसण्णियासे पगदं । एत्तो उक्कस्सपरत्थाणसण्णियास-साधणट्ठं अट्ठपदभूदसमासलक्खणं वत्तइस्सामो । तं जहा--पंचिंदियसण्णीणं

असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीके उत्कृष्ट स्थिति बन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए । चार जातिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है ।

११५. समचतुरस्र संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । देवगति, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है ।

११६. चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, आतप, उद्योत, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका भङ्ग अपर्याप्तकके समान है । आहारक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । तथा अनाहारक जीवोंका भंग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

११७. अब उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । अतएव आगे उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षकी सिद्धिके लिए अर्थपदभूत समास लक्षणको बतलाते हैं । यथा--पञ्चेन्द्रिय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपज्जत्ताणं मिच्छादिट्ठीणं अब्भवसिद्धियपाओग्गं अंतोकोडाकोडिपुधत्तं बंधमाणस्स ट्ठिदिउस्सरणं। तदो सागरोवमसदपुधत्तं उस्सरिदूण मणुसायु० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवमसदपुधत्तं उस्सरिदूण तिरिक्खायु० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण उच्चागोदं बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण पुरिस०-समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें० एदाओ सत्त पगदीओ एँक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण णग्गोद०-वज्जणारा० एदासिं दोपगदीणं एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण सादिय०-णारायण० एदाओ दोपगदीओ एँक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण इत्थिवे० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण खुज्जसंठा०-अद्धणारा० एदाओ दोपगदीओ एँक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण वामणसंठा०-खीलियसंघ० एदाओ दोपगदीओ एँक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण मणुसग०-मणुसाणु० पज्जत्तसंजुत्ताओ दोपगदीओ बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण पंचिंदिय० पज्जत्तसंजुत्त० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण चदुरिंदिय० पज्जत्तसंजुत्त० बंधवोच्छेदो। तदो सागदोवम० उस्सरिदूण तेइंदिय० पज्जत्तसंजुत्त० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण बेइंदिय०-अप्पसत्थ०-दुस्सर०

संज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टियोंमें अभव्योंके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ी पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके स्थितिका उत्सरण होता है। इससे आगे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थिति का उत्सरण करके मनुष्यायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर तिर्यञ्चायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर उच्चगोत्रकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इन सात प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होनेपर न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान और वज्रनाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होनेपर स्वाति संस्थान और नाराचसंहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर स्त्री वेदकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर कुब्जक संस्थान और अर्धनाराचसंहननकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर वामन संस्थान और कीलक संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका उत्सरण होनेपर पर्याप्त प्रकृतिसे संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त चतुरिन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त त्रीन्द्रियजातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्स-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पज्जत्त० एदाओ तिण्णि पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण बादरएइंदियपज्जत्त०-पत्तेग०-आदाउज्जो०-जसगि० एदाओ पंच पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण बादरएइंदियपज्जत्त-साधारण० एदाओ दोपगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण सुहुमेइंदिय-पज्जत्त-पत्तेय० एदाओ दोपगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण सुहुमेइंदियपज्जत्त-साधार०-पर०-उस्सा०-थिर०-सुभ० एदाओ छ-पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण मणुसग०-मणुसाणु० अपज्जत्तसंजुत्ताओ दुवे पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण पंचिंदियअपज्जत्त० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरोवम० उस्सरिदूण चदुरिंदियअपज्जत्त० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरोवम० [उस्सरि०] तेइंदियअपज्जत्त० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण बेइंदियअपज्जत्त-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस० एदाओ चत्तारि पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण बादरेइंदियअपज्जत्त० पत्तेयसंजुत्ताओ दो पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण बादरेइंदिय-अपज्जत्त० साधारणसंजुत्ताओ एदाओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० उस्सरिदूण सुहुमे-इंदियअपज्जत्त० पत्तेग०संजुत्ताओ एदाओ दोण्णि पगदीओ एॅक्कदो बंधवोॅच्छेदो।

रण हो कर पर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वर इन तीन प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर पर्याप्त संयुक्त बादर एकेन्द्रिय जाति, प्रत्येक, आतप, उद्योत और यशःकीर्ति इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और साधारण इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और प्रत्येक इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, साधारण, परघात, उच्छ्वास, स्थिर और शुभ इन छह प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त पञ्चेन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त चतुरिन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त त्रीन्द्रिय जातिकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर अपर्याप्त संयुक्त द्वीन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रस इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध-व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण होकर सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका उत्सरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तदो सागरो० उस्सारिदूण सादावे०-हस्स-रदि० एदाओ तिण्णि पगदीओ अपज्जत्त-संजुत्ताओ एँक्कदो बंधवोच्छेदो । एत्तो सेसाणं पयडीणं एँक्कदो बंधवोच्छेदो होहिदि त्ति उक्कस्सए ट्ठिदिबंधे । एवमपज्जत्तबंधवोच्छेदा भवंति । एवं सव्वअपज्जत्ताणं ।

११८. उक्कस्सपरत्थाणसण्णियासे पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघेण आभिणिबोधि० उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण याव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागूणं बंधदि । णिरयायु० सिया बंधदि सिया अबंधदि । यदि बंधदि णियमा उक्कस्सा । आबाधा पुण भयणिज्जा । णिरय-तिरिक्खगदि-एइंदिय-पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेंक्कस्स । तं तु० कादव्वा ।

होकर अपर्याप्त संयुक्त सातावेदनीय, हास्य और रति इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है । इससे आगे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होनेपर शेष प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होगी । इस प्रकार अपर्याप्त संयुक्त प्रकृतियोंकी बन्धव्युच्छित्ति होती है । इसी प्रकार सब अपर्याप्तकोंके जानना चाहिए ।

११८. उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिबोधिकज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । उसमें भी उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । परन्तु आबाधा भजनीय है । नरकगति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । जो उत्कृष्ट भी होता है और अनुत्कृष्ट भी होता है । उसमें भी उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

११९. सादावे० उक्क०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णियमा बं०। णि० अणु०। उक्क० अणु० दुभागूणं बंधदि। इत्थिवे०-मणुसगदि०-मणुसाणु० सिया बं० सिया अबं०। यदि बं० णिय० अणु०। उक्क० अणु० तिभागूणं०। पुरिस०-हस्स-रदि-देवगदि-समचदु०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया बं०। तं तु०। णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-हुंडसं०-दोअंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ० तस-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू०। तिण्णिजादि०-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम-अपज्ज०-साधार० सिया० संखेज्जदि भागू०। एवं हस्स-रदीणं।

१२०. इत्थि० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-

११९. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह नियमसे अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है जो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इन प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। उसमें भी उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसक वेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्डसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रतिके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२०. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ० तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० । णि० अणु० । उक्क० अणु० चदुभागू० । तिरिक्खग०-हुंडसं०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० । यदि० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० । खुज्ज० वामणसंठा०-अद्धणारा०-खीलियसं० सिया० संखेंज्जदिभागू० ।

१२१. पुरिस० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० । णि० अणु० दुभागू० । सादावे०-हस्स-रदि-देवगदि--समचदु०--वज्जरि०--देवाणु०--पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । असादा०-अरदि-सोग-तिरिक्खग०-ओरालि०--वेउव्वि--हुंड०--दोअंगो०--असंपत्त०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०--अप्पसत्थ०--अथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० तिभागूणं

अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इन प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है । जो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। कुब्जक संस्थान, वामन संस्थान, अर्धनाराच संहनन और कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१२१. पुरुष वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, हास्य, रति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्ड संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं० । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-पसत्थ०-सुभग०-सुस्सर-आदेंज्ज त्ति ।

१२२. णिरयायु० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचणा०-णवदंसणा-असादावे०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-णिरयग०-पंचिंदि-०वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-णिरयाणु०-अगु०४--अप्पसत्थवि०--तस०४--अथिरादिछ०-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णि० । तं तु० उक्क० अणु० तिट्ठाणपदिदं बंधदि । असंखेंज्जभागहीणं वा संखेंज्जदिभागहीणं वा संखेंज्जदिगुणहीणं वा ।

१२३. तिरिक्खायु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०--समचदु०--ओरालि०अंगो०--वज्जरिसभ०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग--सुस्सर--आदें०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । णि० अणु० संखेंज्जदिगुणहीणं बं० । सादासा०-इत्थिवे०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-उज्जो-थिराथिर--सुभासुभ--जस०--

नुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान और चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२२. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, नरकगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो तीन स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है, या तो असंख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है, या संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है या संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१२३. तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व. सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजस० सिया० संखेंज्जदिगुणहीणं० । मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो । णवरि णीचागो० वज्ज० । उच्चा०[1] णि० बं० संखेंज्जदिगुणहीणं ।

१२४. देवायु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिसवे०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा० -पंचंत०-णि० बं० संखेंज्जगुणहीणं० । तित्थय० सिया बं० संखेंज्जगुणही० ।

१२५. णिरयगदि० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-णिरयाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४ अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० । तं तु० । णिरयायु० सिया बं० सिया अबं० । यदि बं० णि० उक्क० । आबाधा पुण भयणिज्जा । एवं णिरयगदिभंगो वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० ।

गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यायुका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इतनी विशेषता है कि नीचगोत्रको छोड़कर जानना चाहिए। उच्च गोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१२४. देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१२५. नरकगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक, शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, नरकगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आबाधा भजनीय है। इसी प्रकार नरकगतिके समान वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीकी प्रमुखतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

---

1. मूलप्रतौ णीचा० णि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२६. तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचागो००-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं ओरालि०-[ओरालि०अंगो०-] तिरिक्खाणु० उज्जो० ।

१२७. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०[ओरालि०]-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंतरा० णिय० बं० चदुभागू० । इत्थिवे० सिया० । तं तु० । णवुंस०-हुंडसं०-असंपत्त०-पर०-उस्सा०-

१२६. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत प्रकृतियोंकी प्रमुखतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२७. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसक वेद, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पसत्थ०-पज्जत्त०-दुस्सर० सिया० चदुभागू० । दोसंठा०-दोसंघ०-अपज्जत्त० सिया० संखेज्जगु० । मणुसाणु० णिय० बं० । णि० तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

१२८. देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगु०-पंचिंदि०-वेउव्वि०--तेजा०--क०--वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४--अगु०४--तस०४--णिमि०-पंचंत० णि० बं० दुभागू० । सादावे०-पुरिस०-हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस०-सिया० । तं तु० । असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० दुभागूणं बं० । इत्थिवे० सिया० तिभागू० । समचदु०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० णिय० बं० । तं तु० । एवं देवाणु० ।

१२६. एइंदि० उक्क०ट्ठिदि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगु०--तिरिक्खगदि--ओरालिय०--तेजा०--क०--

दो संस्थान, दो संहनन और अपर्यात इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणा हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२८. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट, दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्री वेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, नियमसे एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१२६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त--पत्तेय०--अथिरादिपंच--णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । आदाउज्जो० सिया० । तं तु० । एव-मादाव-थावर० ।

१३०. बीइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोल-सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-ओरालिय०--तेजा०--क०--हुंड०-ओरालि०अंगो०--असंपत्त०-वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-तस--बादर-पत्तेय०--अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० संखेज्जदिभागू० । पर०-उस्सा०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-वज्ज०-दुस्सर० सिया० संखेज्जदिभागू० । अपज्जत्त० सिया० । तं तु० । एवं बीइंदि० तीइंदि०-चदुरिंदि० ।

प्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३०. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, वज्रर्षभ नाराच संहनन और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। अपर्याप्त प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जातिके समान त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३१. पंचिंदियस्स उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं०। तं तु०। णिरयाणु० णाणावरणभंगो। णिरयगदि-तिरिक्खगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-असंपत्त०-दोआणु०-उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं पंचिंदियभंगो अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर०।

१३२. आहारसरी० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगुणही०। आहार०अंगो० णि० बं०। तं तु०। तित्थय० सिया० संखेज्जगुणहीणं०। एवं आहार०अंगो०।

१३१. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरक गत्यानुपूर्वीका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर प्रकृतियोंकी प्रमुखतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३२. आहारक शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुष वेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। आहारक शरीर आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३३. णग्गोद० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०। इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खग०-मणुसग०-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारायण०। सादिय० एवं चेव। णवरि णाराय० सिया०। तं तु०। [एवं णारायणं।]

१३४. खुज्ज० उक्क० ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० णि० संखेंज्जदिभागूणं०। दोसंघ०-उज्जोव०

१३३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्री वेद, नपुंसक वेद, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चहिए।

१३४. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० संखेंज्जदिभागू० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । वामणसंठा० तं चेव । णवरि खीलिय० सिया० । तं तु० । असंपत्त०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं खीलिय० ।

१३५. ओरालि०अंगो० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि--सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खगदि--पंचिंदियजादि--ओरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं असंपत्त० ।

१३६. वज्जरि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-

अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३५. औदारिक आङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१३६. वज्रर्षभ नाराच संहननकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञाना-

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

भय-दुगु०-पंचिंदि०-[ओरालि]०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस० ४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० दुभागू० । सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । असादा०-णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचागो० सिया० दुभागू० । इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु० सिया० तिभागू० । चदुसंठा० सिया संखेंज्जदिभागू० बंधदि।

१३७. सुहुम० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंसग०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदिय०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु० ४-उप०-थावर-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । पर०-उस्सा०-पज्जत्त-पत्तेग० सिया० संखेंज्जदिभागू० । अपज्जत्त-साधारण० सिया० । तं तु० । एवं साधारण० ।

वरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्य गति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थानका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१३७. सूक्ष्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। अपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३८. अपज्जत्त० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू०। एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस-थावर-बादर-पत्तेय० सिया० संखेंज्जदिभागू०। तिण्णिजादि-सुहुम-साधारणं सिया०। तं तु०।

१३९. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-णिमि०-पंचंत० णि० बं० दुभागू०। सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-देवगदि-समचदु०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभादि-पंच०-उच्चा० सिया०। तं तु०। असाद०-णवुंस-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालिय०-वेउव्विय०-हुंडसं०-दोअंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-आदा-

---

१३८. अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्च गति, औदारिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र और पांच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रस, स्थावर, बादर और प्रत्येक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, सूक्ष्म और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है, यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१३९. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, शुभ आदि पाँच और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, हुण्ड संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायो-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उज्जो०--अप्पसत्थ०--तस--थावर--बादर--पत्तेय०--असुभादिपंच--णीचा० सिया० दुभागू० । इत्थि०-मणुसगदि-मणुसाणु० सिया० तिभागू० । तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम-साधार० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । णवरि[1] अजस०-सुहुम-साधारणं वज्ज ।

१४०. तित्थय० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०---समचदु०--वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०--तस०४--अथिर--असुभ--सुभग--सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० णि० संखेंज्जगुणही० । उच्चा० पुरिसवेदभंगो । णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जोवं वज्ज ।

१४१. आदेसेण णेरइएसु आभिणिबोधियणाणा० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि--सोग--भय-दुगुं०--तिरि--क्खगदि--पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--हुंड०--ओरालि०अंगो०--असंपत्त०--

---

गति, त्रस स्थावर, बादर, पर्याप्त, अशुभ आदि पाँच और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति और मनुष्य गत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अयशःकीर्ति, सूक्ष्म और साधारण इन प्रकृतियोंको छोड़ कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४०. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुष वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि इसके तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इन तीन प्रकृतियोंको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१४१. आदेशसे नारकियोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संह-

---

१. मूलप्रतौ णवरि जस० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० । सिया० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

१४२. सादा० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत०णि० बं० णि० दुभागू० । इत्थि०-मणुसगदि०-मणुसाणु० सिया० बं० तिभागू० । णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-हुंड०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । चदुसंठा०-चदु-

नन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। और ऐसी अवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१४२. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है स्त्रीवेद, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान और चार संहननका कदाचित् बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संघ० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं सादभंगो पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ० ।

१४३. इत्थि० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० चदुभागू० । तिरिक्खगदि-हुंड०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० चदुभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० । दोसंठा०-दोसंघ०-सिया० संखेज्जदिभागू० ।

१४४. तिरिक्खायु० उक्क०हिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-पंचिंदियजादि-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगुणही० । सादावे०-असादावे०-सत्तणोक०-छस्संठा-०-छस्संघ०-उज्जो०-दोविहा०-

---

होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके समान पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति और स्थिर आदि छहकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१४३. स्त्री वेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट चार भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और दो संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१४४. तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, सात नोकषाय, छह संस्थान, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगति और स्थिर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थिरादिछ० सिया० संखेंज्जगुणहीं० ।

१४५. मणुसायु० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-मणुसगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगुणहीं० । थीणगिद्धितिग-सादासाद०-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-सत्तणोक०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयुग०-तित्थय०-णीचुच्चा० सिया० संखेंज्जगुणहीं० ।

१४६. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं । णवरि अपज्जत्तं वज्ज । चदुसंठा०-चदुसंघ०-तित्थय० ओघं । णवरि तित्थयरं मणुसगदिसंजुत्तं संखेंज्जगुणहीणं कादव्वं ।

१४७. एवं सत्तसु पुढवीसु । णवरि सत्तमाए मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० तित्थयरभंगो । सादादिपसत्थाओ इत्थिवे०-पुरिस०-हस्स-रदि-दोण्णिसंठा-दोण्णिसंघडण० णिय० तिरिक्खगदिसंजुत्ताओ सण्णियासे साधेदव्वाओ भवंति ।

१४८. तिरिक्खेसु आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदि०बं० चदुणाणा०-णवदंस०-असाद०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-णिरयगदि-पंचिंदि०-

---

आदि छह इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१४५. मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, साता वेदनीय, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, सात नोकषाय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, स्थिर आदि छह युगल, तीर्थङ्कर, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

१४६. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्त प्रकृतिको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति संयुक्त तीर्थङ्कर प्रकृतिको संख्यातगुणा हीन कहना चाहिए।

१४७. इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा साता आदि प्रशस्त प्रकृतियाँ, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो संस्थान और दो संहनन इन प्रकृतियोंको सन्निकर्षमें नियमसे तिर्यञ्चगति संयुक्त ही साधना चाहिए।

१४८. तिर्यञ्चोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, नरकगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्विय-तेजा०-क०-हुंड०-वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४-णिरयाणु०-अगु०-अप्पसत्थ०--तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं०। तं तु०। णिरयायु० सिया०। यदि० णि० उक्कस्सा। आबाधा पुण भयणिज्जा। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

१४९. सादावे० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं। णवरि तिरिक्खगदि--चदुजादि--ओरालि०-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०--थावर--सुहुम-अपज्जत्त-साधार० सिया० संखेंज्जदिभागू०। एवं हस्स-रदीणं।

१५०. इत्थिवे० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं। णवरि तिरिक्खगदि-दोसंठा०-तिण्णि-संघ०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू०। ओरालि०-ओरालि०अंगो० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०।

१५१. पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं। णवरि तिरिक्खग०-ओरालि०-चदु-

कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, नरक गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आबाधा भजनीय है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१४९. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, चार जाति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५०. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, दो संस्थान, तीन संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्ग इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१५१. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च गति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संठा०-ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं पुरिसभंगो समचदु०--वज्जरि०--पसत्थ०--सुभग--सुस्सर--आदेंज्ज० । आयु० ओघं ।

१५२. तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । चदुजादि--वामणसंठा०--ओरालि०अंगो०--खीलियसंघ०--असंपत्त०--आदाउज्जो०--थावरादि०४ सिया० । तं तु० । पंचिंदिय-पर०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-तस०४--दुस्सर० सिया० संखेंज्जदिभागू० । तिरिक्खाणु० णि० बं० । तं तु० । तिरिक्खगदीए सह तं तु० पदिदाणं णामाणं हेट्ठा उवरि तिरिक्खगदिभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्त्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेय इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आयुको अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है।

१५२. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, वामन संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत और स्थावर आदि चार इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। यहाँ तिर्यञ्चगतिके साथ 'तं तु०' रूपसे नाम कर्मकी प्रकृतियोंके आगे पीछेकी जितनी प्रकृतियाँ गिनाई गई हैं,उनके सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्चगति प्रकृतिके सन्निकर्षके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष स्वस्थानके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५३. मणुसगदिदुग० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं । णवरि ओरालिय०-ओरालिय-अंगो० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू० । खुज्जसं०-वामणसंठा०-तिण्णिसंघ०-अपज्जत्त० सिया० संखेंज्जदिभागू० ।

१५४. देवगदिदुग० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं । णग्गोद०-सादि०-खुज्जसं०-वज्जणा०-णाराय०-अद्धणारा० ओघं ।

१५५. थिर० उक्क०ट्ठिदिबं० ओघं । णवरि तिरिक्खगदि-चदुजादि-ओरालि०-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-चदुसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदउज्जो०-थावर-सुहुम-साधारण० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं सुभ-जस० । णवरि जसगित्तीए सुहुम-साधारणं वज्ज । एवमेसभंगो पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिणीसु ।

१५६. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-

---

१५३. मनुष्यगतिद्विककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यह औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। कुब्जक संस्थान, वामन संस्थान, तीन संहनन और अपर्याप्त इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

१५४. देवगतिद्विककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष ओघके समान है। न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान, स्वाति संस्थान, कुब्जक संस्थान, वज्रनाराच संहनन, नाराच संहनन और अर्धनाराच संहननकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष ओघके समान है।

१५५. स्थिर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, चार जाति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय सूक्ष्म और साधारणको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार यह सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंके जानना चाहिए।

१५६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीच-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

१५७. सादा० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० संखेज्जदिभागू० । हस्स-रदि० सिया० । तं तु० । अरदि-सोग० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं हस्स-रदीणं ।

१५८. इत्थिवे० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०-४अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० संखेज्जदिभागूणं० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-तिण्णिसंठा०-

---

गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१५७. साता प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। हास्य और रतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। अरति और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१५८. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्य

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तिण्णिसंघ०-दोआणु०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । उज्जो० सिया० संखेंज्जदिभागू० ।

१५६. पुरिस० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-दुस्सर-अणादेज्ज-जस०-अजस०-णीचा० सिया० संखेंज्जदिभागू० । समचदुर०-वज्जरि०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० सिया० । तं तु० । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० । णवरि उच्चागो०-तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० वज्ज ।

१६०. तिरिक्ख-मणुसायु० णिरयभंगो । णवरि संखेंज्जदिभागूणं बं० ।

गति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

१५६. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१६०. तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष नरकके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६१. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेंज्जदिभागू० । मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

१६२. बीइंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-बादर-अपज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंतरा० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेंज्जदिभागू० । ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तस० णि० बं० । तं तु० । एवं ओरालि०-अंगो०-असंपत्त०-तस० त्ति ।

१६१. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६२. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रस इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६३. तीइंदि०-चदुरिं०-पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० तं चेव। णवरि ओरालि०-अंगो०-असंपत्त०-तस० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०।

१६४. णग्गोद० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादेंज्ज-णिमि०-णीचा०-पंचतरा० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०। सादासादा०-इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-चदुसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारा०। सादिय० एवं० चेव। णवरि णारायणं सिया०। तं तु०। एवं णारायणं।

१६५. खुज्ज० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-

१६३. त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन और त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

१६४. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसक वेद, हास्य, रति, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवां भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६५. कुब्जक संस्थानकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागूणं० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि--सोग-तिरिक्खगदि--मणुसगदि--दोसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०--अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । अद्धणारायणं सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारायणं । वामणसंठाणं पि एवं चेव । णवरि खीलिय० सिया० । तं तु० । एवं खीलिय० ।

१६६. पर० उक०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-साधारण--दूभग--अणादें०--अज०--णिमि०--णीचा०--पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-अथिर-असुभ० सिया० संखेंज्जदिभागू० । पज्जत्त-उस्सा० णि० बं० । तं तु० । थिर०-सुह सिया० ।

चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१६६. परघात प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, अस्थिर और अशुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। पर्याप्त और उच्छ्वास प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं तु० । एवं उस्सास-पज्जत्त-थिर-सुभ० ।

१६७. आदाव० उक्क०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-दूभग०-अणादें०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० संखेंज्जदिभागू० । जस० सिया० । तं तु० । एवं उज्जोव-जस० ।

१६८. अप्पसत्थ० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-बेइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अं-गो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-दूभ०-अणादें०-णिमि०-णी-

स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर और शुभ प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार उच्छ्वास, पर्याप्त, स्थिर और शुभ प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६७. आतप प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, दुर्भग, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, स्थिर, अस्थिर शुभ, अशुभ, और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार उद्योत और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६८. अप्रशस्त विहायोगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, द्वीन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क, दुर्भग, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चा०-पंचंत० संखेँज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेँज्जदिभागू० । दुस्सर० णिय० बं० । तं तु० । एवं दुस्सर० ।

१६६. बादर० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावर-अपज्जत्त-साधार०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेँज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेँज्जदिभागू० ।

१७०. पत्तेय० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय-दु०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-तिरिक्खाणु०-वण्ण०४-अगु०-उप०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेँज्जदिभागू० । सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेँज्जदिभागू० ।

वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । दुःस्वर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार दुःस्वर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

१६९. बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है ।

१७०. प्रत्येक प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । सातावेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७१. उच्चा० उ०ट्ठि०बं० धुवपगदीणं णियमा संखेंज्जदिभागू० । सेसाओ परियत्तमाणियाओ तिरिक्खगदिसंजुत्ताओ वज्ज सिया संखेंज्जदिभागूणं० ।

१७२. मणुस०३ पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि आहारदुगं तित्थयरं ओघं । मणुसअपज्जत्त० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

१७३. देवेसु आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

---

१७१. उच्च गोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव ध्रुव प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। शेष जितनी परावर्तमान प्रकृतियाँ हैं उनमेंसे तिर्यञ्चगति संयुक्त प्रकृतियोंको छोड़कर बाकी की प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है।

१७२. मनुष्यत्रिकका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि आहारक द्विक और तीर्थंकर इन तीन प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। तथा मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

१७३. देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धकहोता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७४. सादावे० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०--ओरालि०--तेजा०--क०-वएण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि०-पंचंत० णि० बं० दुभागू० । इत्थि०-मणुसग०-मणुसाणु० सिया० तिभागू० । पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचिंदि०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-अथिरादिछ०-णीचा० सिया० दुभागू० । चदुसंठा०-चदु-संघ० सिया० संखेंज्जदिभागू० । एवं हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगित्ति० ।

१७५. इत्थि० उ०ट्ठि०बं० ओघं । पुरिस० उक्क०ट्ठिदि०बं० ओघं । णवरि देवगदिसंजुत्तं वज्ज । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-उच्चा० । णवरि उच्चा० तिरिक्खगदितिगं वज्ज ।

१७४. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह, कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट तीन भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,दो भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट,संख्यातवाँ भाग न्यून स्थिति का बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७५. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है। तथा पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ देवगति संयुक्तको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगतित्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७६. दो आयु० णिरयभंगो। मणुसग०-मणुसाणु०-चदुसंठा०-चदुसंघ० णिरयभंगो। एइंदियस्स उ०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरिं णाणावरणभंगो। णामाणं सत्थाणभंगो। एवं आदाव-थावर०। पंचिंदि० उ०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरि णाणावरणभंगो। णामाणं सत्थाणभंगो। एवं ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-अप्पसत्थवि०-तस-दुस्सर०। तित्थय० उक्क०ट्ठिदिबं० णि० भंगो।

१७७. भवण०-वाणवेंत०-जोदिसिय०-सोधम्मीसाणदेवेसु आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं०। तं तु०। आदाउज्जो० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स। तं तु०।

१७६. दो आयुओंका भङ्ग नारकियोंके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग नारकियोंके समान है। एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके आगे-पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है तथा नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके आगे-पीछेकी प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका भङ्ग नारकियोंके समान है।

१७७. भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म-ऐशान कल्पवासी देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्टस्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। आतप और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७८. सादावे० उक्क०ट्ठिदिबं० देवोघं । णवरि पंचिंदि०-चदुसंठा०-ओरालि०-अंगो०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० ।

१७९. इत्थि० उक्क०ट्ठिदिबं० देवोघं । णवरि पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० णिय० बं० संखेज्जदिभागू० । दोसंठा०-तिण्णिसंघ० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं मणुसग०-मणुसाणु० ।

१८०. पुरिस० उक्क०ट्ठिदि०बं० देवोघं । णवरि पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । चदुसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दुस्सर० सिया० संखेज्जदिभागू० । एवं पुरिसवेदभंगो समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० । णवरि उच्चागोदे तिरिक्खगदितिगं वज्ज ।

१८१. पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरि-

१७८. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति त्रस और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१७९. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और तीन संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१८०. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रस इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगतित्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१८१. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

क्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । वामणसंठा०-खीलिय०-असंपत्त० सिया० । तं तु० । हुंड०-उज्जोव० सिया० संखेंज्जदिभागू० । ओरालि०अंगो०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० णियमा० । तं तु० । एवं पंचिंदियभंगो वामणसंठा०-ओरालि०अंगो०-खीलिय०-असंपत्त०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर त्ति । एवं चेव तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ० । णवरि अट्ठारसीगाओ सिया० संखेंज्जदिभागू० । सोधम्मी० तित्थय० देवोघं ।

१८२. सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति णिरयभंगो । आणद याव णवगेवज्जा त्ति आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथि-

चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और अन्तराय पाँच इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट, संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । वामन संस्थान, कीलक संहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । हुण्ड संस्थान और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान वामन संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इन प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार तीन संस्थान और तीन संहननकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका अठारह कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है उनका यहाँ कदाचित् बन्ध होता है और कदाचित् बन्ध नहीं होता । यदि बन्ध होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होता है । सौधर्म और ऐशान कल्पमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है ।

१८२. सानत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें आभिनिबोधक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

१८३. सादा० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । इत्थि०-णवुंस०-अरदि-सोग-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा० सिया० बं० संखेंज्जदिभागू० । पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । एदाओ तं तु० । पडिदल्लिगाओ सादभंगो ।

१८४. आयु० देवोघं । चदुसंठा०-चदुसंघ० देवोघं । णवरि मणुसगदि० णि० बं० संखेंज्जदिभागू० । तित्थय० देवोघं ।

बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और ऐसी अवस्था यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है ।

१८३. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । यहां ये 'तं तु' पाठमें पठित जितनी प्रकृतियाँ हैं उनकी मुख्यतासे सन्निकर्षका विचार करने पर साता प्रकृतिकी मुख्यतासे कहे गये सन्निकर्षके समान जानना चाहिए ।

१८४. आयु कर्मकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है । चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष भी सामान्य देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि यह मनुष्यगतिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८५. अणुदिसादि याव सव्वट्ठा त्ति आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-छदंसणा०-असादा० बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-मणुसगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

१८६. सादा० उक्क०ट्ठिदिबं० हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० सिया। तं तु०। अरदि-सोग-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जदिभागू०। सेसाणि णिय० बं० संखेंज्जदिभागू०।

---

१८५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१८६. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रति, स्थिर, शुभ, और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समयन्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८७. एइंदिय-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त० विगलिंदिय-पज्जत्तापज्जत्त० पंचिंदिय-तस[1]अपज्जत्ता० पंचकायाणं बादर-सुहुम-पज्जत्ता[2]पज्जत्त० पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो । णवरि थावराणं सव्वाओ असंखेंज्जदिभागूणं बंधदि । पंचिंदिय-तस०२ मूलोघं । पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि० मूलोघं । ओरालियकायजोगि० मणुसभंगो । ओरालियमिस्से मणुसअपज्जत्तभंगो । णवरि देवगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जदिगुणहीणं बंधदि । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० तित्थयरं च । वेउव्वियकायजोगि० देवोघं । एवं वेउव्वियमिस्स० । णवरि किंचि विसेसो जाणिदव्वो ।

१८७. एकेन्द्रिय, इनके बादर और सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, विकलेन्द्रिय तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त त्रस अपर्याप्त, पाँच स्थावर काय, तथा इनके बादर और सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्थावरोंमें सब प्रकृतियोंको असंख्यातवें भाग न्यून बाँधते हैं। पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रस द्विक जीवोंमें सन्निकर्ष मूलोघके समान है। पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी और काययोगी जीवोंमें भी सन्निकर्ष मूलोघके समान है। औदारिककाययोगी जीवोंमें सन्निकर्ष मनुष्योंके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सन्निकर्ष मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक मिश्र काययोगी जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु यहाँ कुछ विशेष जानना चाहिए।

१. मूलप्रतौ-तसपज्जत्ता० इति पाठः। २. मूलप्रतौ-पज्जत्ता अपज्जत्त इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८८. आहार०-आहारमि० आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-छदंसणा०-असादा०—चदुसंजल०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०—देवगदि-पंचिंदि०—वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०—तस०४—अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेँक्कस्स । तं तु० ।

१८९. सादावे० उक्क०ट्ठिदिबं० हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० सिया० । तं तु० । अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जदिभागू० । सेसा० धुविगाओ णि० बं० संखेंज्जदिभागू० ।

१९०. देवायु० ओघं । एवं तं तु० सादभंगो ।

---

१८८. आहारक काययोगी और आहारक मिश्र काययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुष वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इस प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है ।

१८९. सातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । शेष ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है ।

१९०. देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। इस प्रकार यहाँ जितनी 'तं तु' पदवाली प्रकृतियाँ हैं उनका भङ्ग साता वेदनीयके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९१. कम्मइगेसु आभिणिबोधिय० उक्क०ट्ठिदिबं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसंठा०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । दोजादी० ओरालियभंगो । असंपत्त०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एॅक्कमेॅक्कस्स । तं तु० ।

१९२. सादावे० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेॅज्जदिभागू० । इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-पंच-संघ०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावरादिचदुयुगलं-

---

१९१. कार्मण काययोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। दो जातियों का भङ्ग औदारिक शरीरके समान है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब यह उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है या अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है।

१९२. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, नपुंसक वेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर आदि चार युगल, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, हास्य,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथिरादिछ०-णीचा० सिया० संखेॅज्जदिभागू० । पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्ज-रिस०-पसत्थवि०-थिरादिछ०-उच्चागो० सिया० । तं तु० । एवं हस्स-रदीणं ।

१९३. इत्थि० उक्क०द्विदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेॅज्जदिभागू० । तिरिक्खगदिदुग-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-उज्जो० सिया० संखेॅज्जदिभागू० । मणुसग०-मणुसाणु० सिया० । तं तु० ।

१९४. पुरिस० उक्क०द्विदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेॅज्जदिभागू० । सादा०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थवि०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० । तं तु० । असादा०-अरदि-सोग-दोगदि-पंच-

---

रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार हास्य और रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

१९३. स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगतिद्विक, तीन संस्थान, तीन संहनन और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

१९४. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्च गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा० सिया० संखेंज्ज-भागू० । एवं पुरिसभंगो समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० । णवरि उच्चागोदे तिरिक्खगदितिगं वज्ज ।

१९५. मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगु ०-पंचिंदि० एवं याव णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्ज-दिभागू० । इत्थिवे० सिया० । तं तु० । णवुंस०-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-पर०-उस्सा०-अप्पसत्थ०-पज्जत्तापज्जत्त-दुस्सर० सिया० संखेंज्जदिभागू० । मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, अरति, शोक, दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियम से अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी अपेक्षा सन्निकर्ष कहते समय तिर्यञ्चगति त्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१९५. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जातिसे लेकर निर्माण तक तथा नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, तीन संस्थान, तीन संहनन, परघात, उच्छ्वास, अप्रशस्त विहायोगति, पर्याप्त, अपर्याप्त और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९६. एइंदियजा० उक्क०ट्ठिदिबंध० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--अरदि-सोग--भय--दुगुं०--तिरिक्खग०--ओरालि०--तेजा०--क०-हुंडसं०-वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-अगुरु-उप०-थावर-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचागो०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधारण० सिया० । तं तु० । एवं आदाव-थावर० । णवरि आदावे सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० वज्ज ।

१९७. तिण्णिजादि० मणुसअपज्जत्तभंगो । चत्तारिसंठा०-चत्तारिसंह० देवोघं ।

१९८. पंचिंदियजादि० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणाणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-णाम० सत्थाणभंगो णीचागो०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । एवं ओरालि०अंगो०-असंप०-अप्प-सत्थ०-तस०-दुस्सर० ।

१९६. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्च गति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आतप और स्थावर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि आतप प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

१९७. तीन जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। तथा चार संस्थान और चार संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है।

१९८. पञ्चेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और स्वस्थान भंगके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक है। इसी प्रकार औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९९. परघाद० उक्क०ट्ठिदिबं० पंचणा०-णवदंस०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०--अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०--अगु०--उप०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० । तं तु० । एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि० अंगो०-असंप०-आदाउज्जो०-अप्पस०-तस-थावर-दुस्सर० सिया० । तं तु० । एवं उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० । उज्जो० तिरिक्खगदिभंगो । णवरि सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० वज्ज० ।

२००. सुहुम० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०--मिच्छ०-सोल--सक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०--तेजा०--क०-हुंड०-वण्ण०४--तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०--थावर-अपज्जत्त-साधारण--अथिरादिपंच--णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एवं अपज्जत्त-साधारणं ।

१९९. परघातकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर और दुःस्वर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्षका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२००. सूक्ष्मकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अपर्याप्त और साधारणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०१. थिर० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिभागू०। असादा०-इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-पंचजादि-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-पंचसंघ०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-तस-थावर-बादर-सुहुम-पत्ते०-साधारण-असुभादिपंच-णीचा० सिया० संखेंज्जदिभागू०। सादा०-पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज-जस०-उच्चा० सिया०। तं तु०। एवं सुभ-जस०। णवरि जस० सुहुम-अपज्जत्त-साधारणं वज्ज।

२०२. तित्थय० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जदिगुणही०। मणुसगदिपंचगं सिया० संखेंज्जदिगुणहीणं०। देवगदि०४

२०१. स्थिरकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक, साधारण, अशुभ आदि पाँच और नीच गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

२०२. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति पञ्चकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुण हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगति चतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० । तं तु० । एवं देवगदि० ४ । णवरि मणुसगदिपंचगं वज्ज ।

२०३. इत्थिवेदेसु आभिणिबोधि० उ०ट्ठि०बं० पढमदंडओ ओघं । णवरि ओरालि०अंगो०-असंपत्तसेवट्टसंघडणं वज्ज ।

२०४. सादा० उ०ट्ठि०बं० ओघं । णवरि ओरालि०अंगो०-असंपत्त० सिया० संखेंज्जदिभागू । सेसाणं पि सव्वाणं मूलोघं । णवरि ओरालि०अंगो०-असंपत्त० अट्ठारसिगाहि सह सण्णियासो साधेदव्वो । पुरिसवे० ओघं ।

२०५. णवुंस० आभिणिबो० उ०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-हुंड०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० । तं० तु० । णिरयगदि-तिरिक्खगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दो-अंगो०-अप्पसत्थ०-दो

अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार देवगति चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय मनुष्यगति पञ्चकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२०३. स्त्रीवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवकी अपेक्षा प्रथम दण्डक ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननको छोड़कर यह सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२०४. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि यह औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है । तथा शेष सब प्रकृतियों का सन्निकर्ष भी मूलोघके समान है । इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन इनका अठारह कोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिका बन्ध करनेवाली प्रकृतियोंके साथ सन्निकर्ष साधना चाहिए । पुरुषवेदवाले जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है ।

२०५. नपुंसकवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, हुण्ड संस्थान, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगति, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, अप्रशस्त विहायोगति, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

२०६. सादा० उ०ट्ठि०बं० ओघं । णवरि एइंदि०-आदाव-थावरं अट्ठारसिगाहि सह सण्णियासे साधेदव्वं । सेसाणं मूलोघं ।

२०७. अवगदवे० आभिणिबोधि० उ०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० । णि० उक्क० । एवं एदाओ एक्कमेक्केहि उक्कस्सा ।

२०८. कोधादि०४-मदि०-सुद०-विभंगे मूलोघं । आभिणि०-सुद०-ओधि०-आभिणि० उ०ट्ठि०बं० चदुणा०-छदंसणा०-असादा०--बारसक०--पुरिस०--अरदि-सोग--भय--दुगुं०--पंचिंदि०--तेजा०--क०--समचदु०--वण्ण०४--अगु०४-पसत्थवि०--तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-सुस्सर-आदें०-अजस०-णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । मणुसगदि-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-दोअंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-

है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और ऐसी अवस्थामें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

२०६. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इनको अठारह कोड़ा-कोड़ी सागरकी स्थितिवाली प्रकृतियोंके सन्निकर्षमें साध लेना चाहिए। तथा शेष प्रकृतियोंका सन्निकर्ष मूलोघके समान है।

२०७. अपगतवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ये सब प्रकृतियाँ परस्पर एक दूसरेके साथ उत्कृष्ट स्थितिकी बन्धक होती हैं।

२०८. क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष मूलोघके समान है। आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छः दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगति, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर इनका कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थय० सिया० । ^ तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

२०६. सादावे० उ०ट्ठि०बं० हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० सिया० । तं तु० । अरदि-सोग-अथिर-असुभ--अजस०--देवगदि--दोसरी०--दोअंगो०--वज्जरि०--दोआणु० तित्थय० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । सेसाओ णिय० बं० संखेंज्जगुणही० । एवं हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० ।

२१०. मणुसायु० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०--पुरिस०-भय-दु०-मणुसग०--पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--समचदु०--ओरालि०अंगो०--वज्जरि०--वण्ण०४--मणुसाणु०--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--आदें०---णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगुणही० । सादासा०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-तित्थय० सिया० संखेंज्जदिगुणहीणं० । देवायु० ओघं ।

बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थिति का बन्धक होता है तो नियम से उत्कृष्ट की अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब ऐसी स्थितिमें यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है ।

२०९. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, दो आनुपूर्वी और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२१०. मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छः दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकोर्ति, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है । देवायुकी अपेक्षा सन्निकर्ष ओघके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहार०-आहार०अंगो० ओघं।

२११. मणपज्जव०-संजद०-सामाइ०-छेदो०-परिहार० आहारकायजोगि-भंगो। णवरि सादावे० उ०ट्ठि०बं० अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस०-तित्थय० सिया० संखेज्जदिगुणहीणं। धुविगाओ णि० बं० संखेज्जगुणहीणं। एवं सादभंगो हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगित्ति-देवायु०। णवरि देवायु० असादावे०-अथिर-असुभ-अजस० वज्ज। सेसाणं णाणावरणादीणं तित्थयरं णाइस्सदि त्ति णादव्वं।

२१२. सुहुमसंपराइ० आभिणिबो० उ०ट्ठि०बं० चदुणा०चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० णि० उक्कस्सा। एवमेदाओ एक्कमेक्केण उक्कस्सा।

२१३. संजदासंजदा० परिहार०भंगो। असंजद०-चक्खुदं०-अचक्खुदं० ओघं। ओधिदं० ओधिणाणिभंगो। किण्णले० णवुंसगभंगो। णवरि देवायु० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगुणहीणं०।

समान है। आहारकशरीर और आहारकआङ्गोपाङ्गकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२११. मनःपर्ययज्ञानवाले, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत और परिहारविशुद्धि संयत जीवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी अपेक्षा सन्निकर्ष आहारक काययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साता प्रकृतिके समान हास्य, रति, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहते समय असाता वेदनीय, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। शेष ज्ञानावरणादिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव तीर्थङ्कर प्रकृतिको नहीं बाँधेगा, ऐसा जानना चाहिए।

२१२. सूक्ष्मसाम्परायिक शुद्धिसंयत जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार ये प्रकृतियाँ एक दूसरेकी अपेक्षा परस्पर उत्कृष्ट स्थितिबन्धको लिये हुए सन्निकर्षको प्राप्त होती हैं।

२१३. संयतासंयतोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है। असंयत, चक्षुदर्शनवाले और अचक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। अवधिदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानियोंके समान है। कृष्णलेश्यावाले जीवोंका भङ्ग नपुंसक वेदवाले जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्च गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१४. णील-काऊणं आभिणिबो० उ०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि बं०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। सादा०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-मणुसग०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-मणुसाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० तित्थयरं च णिरयभंगो।

२१५. णिरयायु० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगुणही०। णिरयग०-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० णिय० बं०। तं तु० उक्क० अणु० विट्ठाणपदिदं बंधदि, असंखेंज्जभागहीणं वा संखेंज्जदिभागहीणं वा बंधदि। तिण्णि-आयुगाणं ओघं।

---

२१४. नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस-चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका एक दूसरेकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब यह जीव उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह, उच्चगोत्र और तीर्थङ्कर इनका भङ्ग नारकियोंके समान है।

२१५. नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौदर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो असंख्यात भागहीन स्थितिका बन्धक होता है या संख्यात भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। तीन आयुओंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१६. णिरयग० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण० ४-अगु० ४-पसत्थ०-तस० ४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जगुणहीं०। णिरयायु० सिया०। यदि० णियमा उक्कस्सा। आबाधा पुण भयणिज्जा। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० णि० बं०। तं तु०। एवं वेउव्वि-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु०।

२१७. देवगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० णि० अणु० संखेंज्जगुणहीं०। सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-इत्थि०-पुरिस०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीं०। वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो० णि० बं० णि० संखेंज्जगुणहीं०। देवाणु० णि० बं०। तं तु०। एवं देवाणु०।

---

२१६. नरकगतिको उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। नरकायुका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है। परन्तु आबाधा भजनीय है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१७. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातगुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१८. एइंदि० उक्क०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-भय०-दु०-तिरिक्खगदि-ओरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-वएण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-दूभग-अणादें०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगुणहीं० । सादासा०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-पर०-उस्सा०-उज्जो०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीणं० । आदाव-सुहुम-अपज्जत्त-साधार० सिया० । तं तु० । थावर० णि० बं० । तं तु० । एवं आदाव-थावर० ।

२१९. बीइंदि० उ०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरिं एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो । एवं तीइंदि-चदुरिंदि० । सुहुम-साधारणं एइंदियभंगो । णवरि आदाउज्जोवं वज्ज । अपज्जत्त० उ०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरि एइंदियभंगो । णामाणं सत्थाणभंगो ।

उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१८. एकेन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसक वेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, दुर्भग, अनादेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावर प्रकृतिका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आतप और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२१९. द्वीन्द्रिय जातिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके नीचे और ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा सूक्ष्म और साधारण प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनी विशेषता है कि आतप और उद्योतको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। अपर्याप्त प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके नीचे और ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२०. तेऊए देवगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगुणहीं० । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगुणहीं० । वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो०-देवाणु० । तिरिक्ख-मणुसायुगं देवोघं ।

२२१. देवायु० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० संखेंज्जगुणहीणं० । थीणगिद्धितिय-मिच्छ०-बारसक०-तित्थय० सिया० संखेंज्जगुणहीं० । सेसाओ पगदीओ सोधम्मभंगो । णवरि आहारदुगं ओघं । एवं पम्माए वि । णवरि सहस्सारभंगो कादव्वो ।

२२०. पीत लेश्यावाले जीवोंमें देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्च गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य देवोंके समान है।

२२१. देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्च गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यात गुणहीन स्थितिका बन्धक होता है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पद्म लेश्यामें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसमें सहस्रार कल्पके समान कथन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२२. सुक्काए आणदभंगो । णवरि देवायु० ओघं । देवगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदिय०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० संखेज्जदिभागू० । सादासाद०-इत्थि०-पुरिस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिरादितिण्णियुगलं सिया० संखेज्जदिभागू० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णियमा बंधगो । तं तु० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० । आहारदुगं ओघं ।

२२३. भवसिद्धिया० अब्भवसिद्धिया० ओघं । सम्मादिट्ठि-खइगसम्मादि० वेदगस०-उवसमसम्मा० ओधिभंगो । णवरि उवसमे तित्थयरस्स संजदभंगो । सेसाणं सम्मादिट्ठीणं तित्थय० उ०ट्ठि०बं० देवगदि-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि०बं० । तं तु० । णवरि खइगे मणुसगदि-देवगदिसंजुत्ताओ सत्थाणे कादव्वाओ ।

---

२२२. शुक्ल लेश्यामें आनत कल्पके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । तथा देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति, अरति, शोक और स्थिर आदि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा आहारक द्विककी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है ।

२२३. भव्य और अभव्य जीवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष ओघके समान है । सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यक्त्वमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग संयत जीवोंके समान है । शेष सम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है । इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यक्त्वमें मनुष्यगति और देवगति संयुक्त प्रकृतियोंको स्वस्थानमें कहना चाहिए ।

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

२२४. सासणे[1] आभिणिबोधि० उक्क०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-असादा०-सोलसक०--इत्थि०--अरदि-सोग-भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-वामणसंठा०--ओरालि०अंगो०-खीलियसंघ०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि०-णीचा०-पंचंत०णि०बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

२२५. सादा० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--सोलसक०--भय--दुगुं०--पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत०णि० बं० संखेंज्जदिभागूणं बं० । इत्थि०-अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-मणुसगदि ओरालि०-चदुसंठा०-ओरालि० अंगो०-चदुसंघ०--दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ०--णीचा० सिया० संखेंज्जदिभागू० । पुरिस०-देवगदि-वेउव्वि०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वज्जरि०-देवाणु०-

२२४. सासादन सम्यक्त्वमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वामन संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, कीलक संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए और तब यह उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है।

२२५. साता वेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, चार संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और नीच गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद, देवगति, वैक्रियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ

१ मूलप्रतौ सासणे उक्क०ट्ठि०बं० आभिणिबोधि० चदुणा० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० सिया० बं० । तं तु० । एवं सादभंगो पुरिस०-हस्स-रदि-समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० । तिण्णिआयुगाणं ओघं ।

२२६. मणुसग० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०- सोलसक०-इत्थिवे०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०--णाम सत्थाणभंगो णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । इत्थि० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं मणुसाणु० ।

२२७. देवगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--सोलसक०--भय-दुगुं०-उच्चा०-पंचंत०-णि० बं० संखेज्जदिभागूणं० । सादा०-पुरिस०-हस्स--रदि सिया० । तं तु० । असादा०-इत्थिवे०-अरदि-सोग० सिया० संखेज्जदिभागू० । णामाणं सत्थाण-

नाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार सातावेदनीय प्रकृतिके समान पुरुषवेद, हास्य, रति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्च गोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीन आयुओंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२२६. मनुष्यगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भङ्गके समान नाम कर्मकी प्रकृतियाँ, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट,एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२२७. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, पुरुषवेद, हास्य और रति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यूनतक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगो। एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०। तिण्णिसंठा०--तिण्णिसंघ० ओघं।

२२८. सम्मामि० वेदग०भंगो। मिच्छादिट्ठि त्ति मदि०भंगो। सण्णि० ओघं। असण्णीसु आभिणिबोधि० उ०ट्ठि०बं० यथा तिरिक्खोघं पढमदंडओ तथा णेदव्वा। सादावे०-इत्थिवे०-हस्स-रदि-अरदि० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

२२९. पुरिस० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०--पंचिंदि०--तेजा०--क०--वण्ण०४--अगु०४--तस४--णिमि०--पंचंत० णि० बं० संखेज्जदिभागू०। सादासाद०-हस्स-रदि--अरदि-सोग-दोगदि--ओरालि०--पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-पंचसंघ०--दोआणु०-उज्जो०--अप्पसत्थ०-थिराथिर--सुभासुभ-जस०-अजस०-णीचा० सिया० संखेज्जदिभागू०। देवगदि-समचदु०-वज्जरिस०-देवाणु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० सिया०। तं तु०। वेउव्वि०-[वेउव्वि०]अंगो० सिया० संखेज्जदिभागू०। एवं पुरिसभंगो समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-

होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तीन संस्थान और तीन संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

२२८. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग वेदक सम्यग्दृष्टियोंके समान है। मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानियोंके समान है। संज्ञी जीवोंमें ओघके समान है। असंज्ञी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवके जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके प्रथम दण्डक कहा है, उस प्रकार जानना चाहिए। साता वेदनीय, स्त्रीवेद, हास्य, रति और अरतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिए।

२२९. पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, दो गति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है। देवगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेदके समान समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदे०-उच्चा० । णवरि उच्चागोदे तिरिक्खगदितिगं[1] वज्ज ।

२३०. दोण्हं आयुगाणं तिरिक्खगदीए । णवरि संखेज्जदिभागू० । णिरयायुग० उ०ट्ठि०बं० याओ पगदीओ बंधदि ताओ पगदीओ तं तु विट्ठाणपदिदं बंधदि, असंखेज्जदिभागहीणं वा संखेज्जदिभागहीणं वा । देवायु० उ०ट्ठि०बं० यथा तिरिक्खगदीए । णवरि पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जदिभागू० ।

२३१. तिरिक्खगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०-उप०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार० णि० बं० । तं तु० । एदासिं तं तु० पदिदाणं सरिसो भंगो कादव्वो । मणुसगदिदुगं यथा अपज्जत्तभंगो ।

नाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी मुख्यतासे समझना चाहिए । इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रमें तिर्यञ्चगतित्रिकको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

२३०. दो आयुओंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष तिर्यञ्चगतिके साथ कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि संख्यातवाँ भाग न्यून कहना चाहिए । नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव जिन प्रकृतियोंको बाँधता है उन प्रकृतियोंको वह दो स्थान पतित बाँधता है । या तो असंख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है या संख्यातवाँ भाग हीन बाँधता है । देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगतिमें कहे गये सन्निकर्षके समान सन्निकर्षको प्राप्त होता है । इतनी विशेषता है कि पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति प्रभृति अट्ठाईस प्रशस्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है ।

२३१. तिर्यञ्चगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग हीन स्थितिका बन्धक होता है । एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है । यहाँ इन 'तं तु' पतित प्रकृतियोंका एक समान भङ्ग करना चाहिए । तथा मनुष्यगति द्विककी मुख्यतासे सन्निकर्ष अपर्याप्तके समान है ।

१—मूलप्रतौ तिगं च दोण्हं इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३२. देवगदि० उ०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि० याव णिमिण त्ति पंचंत० णि० बं० संखेज्जदिभागू० । सादासाद०-इत्थिवे०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेज्जदि-भागू० । पुरिस० सिया० । तं तु० । समचदु०-देवाणु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज-उच्चा० णि० बं० । तं० तु० । [वेउव्वि०] वेउव्विअंगो० णि० बं० संखेज्जदि-भागू० । एवं देवाणु० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त० अपज्जत्तभंगो । आदाउज्जो०-थिर-सुभ-जस० अपज्जत्तभंगो ।

२३३. आहार० मूलोघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं उक्कस्सपरत्थाणसण्णियासो समत्तो ।

२३४. जहण्णए पगदं । एत्तो जहण्णपदसण्णियाससाधणट्ठं अट्ठपदभूद--समासलक्खणं वत्तइस्सामो । तं जहा–पंचिंदियाणं सण्णीणं मिच्छादिट्ठीणं अब्भव--

---

२३२. देवगतिकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जातिसे लेकर निर्माण तक और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भाग न्यून स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो उत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है और अनुत्कृष्ट स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट, एक समय न्यूनसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग न्यून तक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अनुत्कृष्ट संख्यातवाँ भागहीन स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष अपर्याप्तके समान है। तथा आतप, उद्योत, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष अपर्याप्तके समान है।

२३३. आहारक जीवोंमें अपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष मूलोघके समान है और अनाहारक जीवोंमें कार्मण काययोगी जीवोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान सन्निकर्ष समाप्त हुआ।

२३४. जघन्य सन्निकर्षका प्रकरण है। इस कारण जघन्य पद सन्निकर्षकी सिद्धि करनेके लिये अर्थपदभूत समास लक्षण कहते हैं। यथा—पञ्चेन्द्रिय संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवोंमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धिया० पाओग्गं अंतोकोडाकोडिपुधत्तं बंधमाणस्स णत्थि ट्ठिदिबंधवोच्छेदो। अंतोसागरोवमकोडाकोडीए अद्धट्ठिदिबंधट्ठाणं बंधमाणो पि ण बंधदि। तदो सागरोवमसदपुधत्तं ओसरिदूण णिरयायुबंधो ओच्छिज्जदि। तदो सागरोवम० ओसक्कि० तिरिक्खायुबंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० ओसक्कि० मणुसायु० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० ओसक्कि० देवायु० बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० ओसक्कि० णिरयगदि-णिरयाणुपु० एदाओ दुवे पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरोवम० ओसक्कि० सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० संजुत्ताओ एदाओ तिण्ण पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० सुहुम-अपज्जत्त-पत्तेय० संजुत्तओ तिण्णि पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० बादर-अपज्जत्त-साधारणं संजुत्ताओ एदाओ तिण्णि पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० बादर-अपज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ तिण्णि पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० बीइंदि०-अपज्जत्त० एदाओ दुवे पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० तीइंदि०-अपज्जत्त० एदाओ दुवे पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० चदुरिंदि०-अपज्जत्त० एदाओ दुवे पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० पंचिंदियअसण्णि-अपज्जत्त० एदाओ दुवे पगदीओ एक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० पंचि-

---

अभव्योंके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ी पृथक्त्व प्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके स्थितिकी बन्ध व्युच्छित्ति नहीं होती। अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके आधे स्थिति बन्ध स्थानका बन्ध करनेवाला भी नहीं बाँधता। पुनः इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होनेपर नरकायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होने पर तिर्यञ्चायुकी बन्ध-व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होनेपर मनुष्यायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर देवायुकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर सूक्ष्म, अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर बादर, अपर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर बादर अपर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर द्वीन्द्रिय जाति और अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर त्रीन्द्रिय जाति और अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति और अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय असंज्ञी और अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दियसण्णि-अपज्जत्त० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० [1]सुहुम-पज्जत्त-साधाराण० एदाओ तिण्णि पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० सुहुम-पज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ तिण्णि पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० [2]बादर-पज्जत्त-साधारण-संजुत्ताओ एदाओ तिण्णि पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० बादरएइंदि०-आदाव-थावर-पज्जत्त-पत्तेय० संजुत्ताओ एदाओ[3] पंच पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० बीइंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० तीइंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० चदुरिंदिय-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० पंचिंदि०असण्णि-पज्जत्त० संजुत्ताओ एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०उज्जो० संजुत्ताओ एदाओ तिण्णि पगदीओ ऍक्कदो बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० णीचा० बंधवोॅच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० एदाओ चदुपगदीओ ऍक्कदो

सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय संज्ञी और अपर्याप्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्ध व्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर सूक्ष्म, पर्याप्त और साधारण इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर सूक्ष्म, पर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर बादर, पर्याप्त और साधारण संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर बादर एकेन्द्रिय, आतप, स्थावर, पर्याप्त और प्रत्येक संयुक्त इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर द्वीन्द्रिय जाति और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर त्रीन्द्रिय जाति और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर चतुरिन्द्रिय जाति और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागरपृथक्त्वका अपसरण होकर पञ्चेन्द्रिय असंज्ञी और पर्याप्त संयुक्त इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत संयुक्त इन तीन प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागरपृथक्त्वका अपसरण होकर नीचगोत्रकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इन चार प्रकृतियोंकी एक साथ

---

१. मूलप्रतौ सुहुम अपज्जत्त इति पाठः।

२. मूलप्रतौ बादर अपज्जत्त इति पाठः।

३. मूलप्रतौ एदाओ दो पगदीओ इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० हुंडसं०-असंपत्त० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० णवुंस० बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० वामणसं०-खीलियसं० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० खुज्जसं०-अद्धणारा० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० इत्थिवे० बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० सादिय०-णाराय० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि णग्गोद०-वज्जणारा० एदाओ दुवे पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० मणुसगदि-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० एदाओ पंच पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। तदो सागरो० ओसक्कि० असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० एदाओ छ पगदीओ ऍक्कदो बंधवोच्छेदो। एत्तो पाए सेसाणि सव्वकम्माणि सव्वविसुद्धो बंधदि। एदेण अट्ठपदेण समासभूदलक्खणेण साधणेण।

२३५. जहण्णसण्णियासो दुविधो--सत्थाणसण्णियासो चेव परत्थाणसण्णियासो चेव। सत्थाणसण्णियासे पगदं। दुविधो णिद्देसो--ओघे० आदे०। ओघे० आभिणिबोधि० जहण्णट्ठिदिबंधमाणो चदुण्णं णाणावर० णियमा बंधगो। णियमा जहण्णा। एवमेक्कमेक्कस्स जहण्णा।

बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर हुण्ड संस्थान और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर नपुंसकवेदकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर वामन संस्थान और कीलक संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर कुब्जक संस्थान और अर्धनाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर स्त्रीवेदकी बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर स्वाति संस्थान और नाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान और वज्रनाराच संहनन इन दो प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर मनुष्यगति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन पाँच प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे सौ सागर पृथक्त्वका अपसरण होकर असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इन छह प्रकृतियोंकी एक साथ बन्धव्युच्छित्ति होती है। इससे आगे प्रायः शेष सब कर्मोंको सर्वविशुद्ध जीव बाँधता है। इस अर्थपद रूप समासभूत लक्षण साधनके अनुसार—

२३५. जघन्य सन्निकर्ष दो प्रकारका है—स्वस्थान सन्निकर्ष और परस्थान सन्निकर्ष। स्वस्थान सन्निकर्षका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर जघन्य स्थितिके बन्धक होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३६. णिद्दाणिद्दाए जहण्णट्ठिदिबंधतो पचलापचला थीणगिद्धी णिद्दा पचला य णिय० बंध० । तं तु जहण्णा वा अजहण्णा वा । जहण्णादो अजहण्णा समजुत्तरमादिं कादूण याव पलिदोवमस्स असंखेंज्जदिभाग०भहियं बंधदि । चदुदंसणा० णि० बं० णि०[1] अजह० असंखेंज्जगुण०भहियं बंधदि । एवं णिद्दणिद्द-भंगो चदुदंसणा० । चक्खुदं० जह०ट्ठि०बं० तिण्णिदंसणा० णि० बं० णि० जहण्णा० । एवमेक्कमेक्कस्स । तं तु जहण्णा० ।

२३७. साद० ज०ट्ठि०बं० असाद० अबंधगो । असाद० जह०ट्ठि०बं० साद० अबंधगो ।

२३८. मिच्छत्त० जह०ट्ठि०बं० बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगु० णि० बं० । तं तु जह० अजहण्णा वा । जह० अजह० समजुत्तरमादिं कादूण याव पलिदोवमस्स असंखेंज्जदिभाग०भहियं बंधदि । चदुसंज०-पुरिस० णि० बं० णि० अज० असंखेंज्जगुण०भहियं बं० । एवं मिच्छत्तभंगो बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगु० ।

२३९. कोधसंजल० जह०ट्ठि०बं० तिण्णिसंजलणं णि० बं० संखेंज्जगुण-

२३६. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्रा और प्रचला इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरणका सन्निकर्ष जानना चाहिए। चक्षुदर्शनावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु तब वह जघन्य स्थितिका बन्धक होता है।

२३७. साता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव असाता प्रकृतिका अबन्धक होता है। असाता प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव साता प्रकृतिका अबन्धक होता है।

२३८. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव बारह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मिथ्यात्वके समान बारह कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२३९. क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितका बन्धक होता है। मान

१ मूलप्रतौ णि० असंज० असांखे० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

०भहियं बं० । माणसंज० जह०ट्ठिदिबं० दोण्हं संजल० णि० बं। णि० अज० संखेंज्जगुण०भहियं बं० । मायासंज० जह०ट्ठि०बं० लोभसंज० णि० बं० संखेंज्ज-गुण०भहियं बं० ।

२४०. इत्थिवे० जह०ट्ठि०बं० मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं० [णि० बं०] असंखेंज्जभाग०भहियं बं० । चदुसंज० णि० बं० णि० अज० असंखेंज्जगुण०भहियं बं० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० असंखेंज्जभाग०भहियं बं० । एवं णवुंस० ।

२४१. पुरिस० जह०ट्ठि०बं० चदुसंज० णि० बं० संखेंज्जगुण०भहियं बं० ।

२४२. अरदि० जह०ट्ठि०बं० मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुं० णि० बं० णि० अज० असंखेंज्जभाग०भहियं बं० । चदुसंज० णि० बं० णि० अज० असंखें-ज्जगुण०भहियं बं० । सोग० णि० बं० । तं तु० । एवं सोग० ।

२४३. णिरयायु० ज०ट्ठि०बं० सेसाणं अबंधगो एवमण्णमण्णाणं अबंधगो ।

संज्वलनको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। माया संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४०. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४१. पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२४२. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४३. नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शेष आयुओंका अबन्धक होता है। इसी प्रकार परस्पर एक आयुका बन्ध करनेवाला अन्य आयुओंका अबन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४४. णिरयगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु० ४-अप्पसत्थवि०-तस०४-अथिरादिछ०-णि० णि० बं० संखेंज्जगुणब्भहियं बं०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० णि० बं० संखेंज्जभागब्भहियं। णिरयाणु० णि० बं०। तं तु०। एवं णिरयाणु०।

२४५. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालिय०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरा-दिपंच-णिमि० णि० बं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। जसगि० णि० बं० असंखेंज्जगुणब्भहियं०। एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०।

२४६. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-

---

२४४. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात गुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४५. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४६. मनुष्य गतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णि० बं० । तं तु० । जसगि० णि० बं० असंखेँज्जदिगुणब्भहियं बं० । एवं मणुसाणु० ।

२४७. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-तेजा०- क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेँज्जगुणब्भहियं बं० । वेउव्वि-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेँज्ज-गुणब्भहियं बं० । एवं वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० ।

२४८. एइंदि० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खग०-ओराति०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४--बादर-पज्जत्त--पत्ते०-दूभग-अणादेँ०--णिमि० णि० असंखेँज्जदिभागब्भहियं० । आदावं सिया० । तं तु० । उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-

चतुष्क, स्थिर आदि पाँच, और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४७. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२४८. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरु-लघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आतपका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजस० सिया० असंखेंज्जदिभागब्भहियं० । थावर० णि० बं० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेंज्जदिगुणब्भहियं० । एवं आदाव-थावर० ।

२४९. बीइंदि० जह०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदि-ओरालिय०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-अप्पसत्थ-तस०४--दूभग-दुस्सर-अणादें०-णिमि० णि० बं० असंखेंज्जदिभागब्भहियं० । उज्जो० सिया० । थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० असंखेंज्जदिभागब्भहियं० । जस० सिया० असंखेंज्जदिगु० । एवं तीइंदि०-चदुरिंदि० ।

२५०. पंचिंदि० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-तेजा०--क०--समचदु०--ओरालि० अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० बं० ।

अधिक स्थितिका बन्धक होता है । स्थावरका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियों की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२४९. द्वीन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२५०. पञ्चेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं तु० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-दोआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । जस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । एवं पंचिंदियभंगो ओरालिय-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमिण त्ति ।

२५१. आहार० जह०ट्ठि०बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०तेजा०-क०-समचदु०--वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४--देवाणु०--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिपंच--णिमि० णि० बं० संखेंज्जगुणब्भहियं० । आहार०अंगो० णि० बं० । तं तु० । जस० णि० बं० णि० असंखेंज्जगुणब्भहियं० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं आहारअंगो०-तित्थयरं ।

२५२. णग्गोद० जह०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--ओरालि०-

कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय जातिके समान औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५१. आहारक शरीरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५२. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर आदें०-णिमि०णि० बं० असंखेंज्जभागब्भहियं०। तिरिक्ख०-मणुसगदि-वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० असंखेंज्जदिभा०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। जस० सिया० असंखेंज्जगुण०। एवं वज्जणारा०।

२५३. सादिय० जह०ट्ठि०बं० णग्गोदभंगो। णवरि णाराय० सिया०। तं तु०। दोसंघ० सिया० असंखेंज्जदिभा०। एवं णारायण०।

२५४. खुज्ज० जह०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० असंखेंज्जदिभा०। तिरिक्ख०-मणुसगदि-तिण्णिसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभा-

---

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५३. स्वाति संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी अपेक्षा सन्निकर्ष न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि यह नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। दो संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५४. कुब्जक संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुभ--अजस० सिया० असंखेंज्जदिभा० । जस० सिया० असंखेंज्जदिगु० । अद्ध-णारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । एवं चेव वामणसंठा० । णवरि खीलिय० सिया० । तं तु० । एवं खीलिय० ।

२५५. हुंड० जह०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--ओरालि०-तेजा०--क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४--पसत्थ०--तस०४-सुभग--सुस्सर--आदें०-णिमि० णि० बं० । णि० असंखेंज्जदिभा० । दोगदि-पंचसंघ०--दोआणु०-उज्जो०--थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० असंखेंज्जदिभा० । असंपत्त० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेंज्ज-दिगु० । एवं असंपत्त० ।

भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५५. हुण्ड संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५६. अप्पसत्थ० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--ओरालि०-अंगो०--वण्ण०४--अगु०४--तस०४--णिमि० णि० बं० असंखेँज्जदिभा० । दोगदि-छस्संठाण--छस्संघ०--दोआणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुभासुभ--सुभग--सुस्सर--आदें०--अजस० सिया० असंखेँज्जदिभा० । दुभग--दुस्सर--अणादें० सिया० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेँज्जदिगु० । एवं दूभग-दुस्सर-अणादें० ।

२५७. सुहुमस्स ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदि--एइंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--हुंडसं०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४--थावर--पज्जत्त--पत्ते०---दूभग--अणादें०-अजस०--णिमि० णि० बं० असंखेँज्जदिभा० । थिराथिर-सुभासुभ० सिया० असंखेँज्जदिभा० ।

२५८. अपज्ज० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-ओरालि०-अंगो०-असंपत्त०-वण्ण०४-अगु०--उप०-तस-बादर-पत्ते०--अथिरादिपंच-णिमि० णि०

२५६. अप्रशस्त विहायोगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२५७. सूक्ष्म प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

२५८. अपर्याप्तकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं० असंखेंज्जदिभा० । दोगदि-दोआणुपु० सिया० असंखेंज्जदिभा० ।

२५९. अथिर० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--समचदु०--ओरालि०अंगो०--वज्जरिस०--वण्ण०४--अगु०४--पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-आदें०--णिमि० णि० बं० असंखेंज्जदिभा० । दोगदि--दोआणु०--उज्जो०--सुभग० सिया० असंखेंज्जदिभा० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जसगि० सिया० असंखेंज्जगुण० । एवं असुभ-अजस० ।

२६०. गोदे० वेदणीयभंगो अंतराइगं णाणावरणभंगो ।

२६१. आदेसेण णेरइगेसु पंचणा०-णवदंसणा० उक्कस्सभंगो । णवरि णियमा बं० । तं तु० समजुत्तरमादिं कादूण याव पलिदोवमस्स असंखेंज्जदिभागब्भहियं० । वेदणीयस्स उक्कस्सभंगो ।

२६२. मिच्छ० ज०ट्ठि० सोलसक०-पुरिस०--हस्स-रदि--भय-दुगुं० णि० बं० ।

स्थितिका बन्धक होता है । दो गति और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

२५९. अस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । दो गति, दो आनुपूर्वी, उद्योत और सुभग इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२६०. गोत्रकर्मका भङ्ग वेदनीयके समान है और अन्तराय कर्मका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है ।

२६१. आदेशसे नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण और नौ दर्शनावरणका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । इतनी विशेषता है कि नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । वेदनीयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष उत्कृष्टके समान है ।

२६२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं तु० जह० अज० समजुत्तरमादिं कादूण पलिदोवमस्स असंखेँज्जभागब्भहियं बं० । एवमेदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स । तं तु० ।

२६३. इत्थि० जह०ट्ठि०बंधंतो मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णिय० बं० तं तु संखेँज्जदिभागब्भहियं० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेँज्जदिभागब्भहियं० । एवं णवुंस० ।

२६४. अरदि० जह०ट्ठि०बं० मिच्छ०-सोलसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेँज्जदिभागब्भहियं । सोग० णि० बं० । तं तु० । एवं सोग० । आयुगाणं उक्कस्सभंगो ।

२६५. तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०-अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० बं० संखेँज्जदिभागब्भहियं० । छस्सं-

---

रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६३. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२६४. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुष वेद, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। आयुओंकी अपेक्षा भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

२६५. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, और स्थिर आदि छह युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठाणं छस्संघडणं दोविहा० थिरादिछयुगलं सिया० संखेंज्जदिभागब्भ० । तिरिक्खाणु० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०--उज्जो० ।

२६६. मणुसगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०--तेजा०--क०--समचदु०--ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०--वण्ण०४-मणुसाणु०--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिछ०--णिमि० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

२६७. पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०ओघं । णवरि णियमा मणुसगदिसंजुत्ताओ कादव्वाओ । तासु सेसाओ संखेंज्जदिभागब्भहि० ।

२६८. तित्थय० ज०ट्ठि०बं० मणुसगदि-पंचिंदि०-ओरालि०--तेजा०-क०- सम-

---

यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२६६. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२६७. पाँच संस्थान, पाँच संहनन और अप्रशस्त विहायोगति इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनको नियमसे मनुष्यगति संयुक्त करना चाहिए। तथा इनमें शेष प्रकृतियोंका अजघन्य स्थितिबन्ध होता है जो संख्यातवाँ भाग अधिक होता है।

२६८. तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० बं संखेज्जगुण० ।

२६६. गोदं वेदणीयभंगो । अंतराइगाणं णाणावरणीयभंगो । एवं पढम-पुढवीए ।

२७०. विदियाए णाणावरणी०-वेदणी०-आयु-गोद०-अंतराइगाणं णिरयोघं । णिद्दाणिद्दाए जं०ट्ठि०बं० पचलापचला-थीणगिद्धि० णि० बं० । तं तु० । छदंस० णि० बं० संखेज्जगु० । एवं पचलापचला-थीणगिद्धि० ।

२७१. णिद्दा० जह०ट्ठि०बं० पंचदंस० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्क-मेँक्कस्स । तं तु० ।

२७२. मिच्छ० जह०ट्ठि०बं० अणंताणुबंधि०४ णि० बं० । तं तु० । बारस क०-

---

प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणा अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

२६९. गोत्रकर्मका भङ्ग वेदनीयके समान है और अन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें जानना चाहिए ।

२७०. दूसरी पृथिवीमें ज्ञानावरण, वेदनीय, आयु, गोत्र और अन्तराय कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धि इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । छह दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२७१. निद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो वह नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है ।

२७२. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थिति का बन्धक होता है । बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि०बं० संखेंज्जगु० । एवं अणंताणुबंधि०४ ।

२७३. अपच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० एँकारसकसा०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ० तं तु० पदिदाओ एँक्कमेँक्कस्स । तं तु० ।

२७४. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु० णि० बं० संखेंज्जगु० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेंज्जगु० । एवं णवुंस० ।

२७५. अरदि० ज०ट्ठि०बं० बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंज्ज-भाग० । सोग० णि० बं० । तं तु० । एवं सोग० ।

२७६. तिरिक्खगदि० जह०ट्ठिदिबं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णि०[णि०]बं० संखेंज्जगु० । समचदु०-वज्जरि०-

---

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७३. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ग्यारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार 'तं तु' रूपसे प्राप्त इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

२७४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७५. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्य का असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७६. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस-चतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायो-गति, स्थिर आदि तीन युगल, सुभग, सुस्वर और आदेय इनका कदाचित् बन्धक होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पसत्थ०-थिरादितिण्णियुग०-सुभग-सुस्सर-आदें० सिया० संखेंज्जगु० । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० सिया० संखेंज्जदिभा० । तिरिक्खाणु० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

२७७. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०--वण्ण० ४-मणुसाणु०-अगु०--पसत्थ०-तस०४--थिरादिछ०-णि० [णि०] बं० । तं तु० । तित्थ० सिया० । तं तु० । एवं एदाओ एक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

२७८. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरा-

और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७७. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क और स्थिर आदि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

२७८. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लि०अंगो०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जदिगुण०। वज्जरि०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जदिगुण०। वज्जणारा० सिया०। तं तु०। एवं वज्जणारायणं।

२७६. चदुसंठा०-चदुसंघ० ज०ट्ठि०बं० धुविगाओ मणुसगदीए सह णग्गोद-भंगो। याओ सम्मादिट्ठिस्स जहण्णिगाओ ताओ सिया० णग्गोदभंगो। याओ मिच्छादिट्ठिस्स जह०पाओग्गाओ ताओ सिया० संखेंज्जभाग०भहियं०। एवं अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे०।

२८०. अथिर० जह०ट्ठि०बं० मणुसगदि सह गदाओ णियमा बं० संखेंज्ज-भाग०भहियं०। सुभ-जसगित्ति-तित्थय० सिया० संखेंज्जभाग०भहियं०। असुभ-अजस० सिया०। तं तु०। एवं असुभ-अजसगित्ति०। एवं याव छट्ठि त्ति।

चतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रर्षभनाराच संहनन, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२७९. चार संस्थान और चार संहननकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यगतिके साथ न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। जो प्रकृतियाँ सम्यग्दृष्टिके जघन्य स्थितिबन्धवाली हैं वे कदाचित् बन्धवाली हैं। तथा इनका भङ्ग न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है और जो मिथ्यादृष्टिके जघन्य स्थिति बन्धके योग्य हैं उनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८०. अस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगतिके साथ बन्धको प्राप्त होनेवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ, यशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अज-घन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्तिका कदा-चित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८१. सत्तमाए छपगदीओ विदियपुढविभंगो ।

२८२. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-वएण०४--अगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०--णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । तिरिक्खाणु० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० । मणुसगदिआदि० ज०ट्ठि०बं० सम्मादिट्ठिपाओग्गाओ विदियपुढविभंगो ।

२८३. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वएण०४--तिरिक्खाणु०--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । वज्जरिस०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस० अजस० सिया० संखेंज्जदिगु० । पंचसंठा०--पंचसंघ०--अप्पसत्थ०--दूभग-दुस्सर--

लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार छठी पृथिवी तक जानना चाहिए।

२८१. सातवीं पृथिवीमें छह प्रकृतियोंका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है।

२८२. तिर्यञ्च गतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराच संहनन, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यागुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगति आदिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके सम्यग्दृष्टि प्रायोग्य प्रकृतियोंका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है।

२८३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्च गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रर्षभनाराच संहनन, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणादेंज्जाणं एदेणेव विधिणा विदियपुढविभंगो ।

२८४. तिरिक्खेसु पंचणा०--णवदंसणा०--दोवेदणी०--चदुआयु०--दोगोद०-पंचंत० णिरयोघं । मिच्छत्त० ज०ट्ठि०बं० सोलसक०-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेंक्कस्स । तं तु० ।

२८५. इत्थि० ज०ट्ठि०बं मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णि० बं० असंखेंज्ज-दिभा० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० असंखेंज्जदिभा० । एवं णवुंस० ।

२८६. अरदि० ज०ट्ठि०बं० मिच्छत्त-सोलसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णि० बं० असंखेंज्जदिभा० । सोग० णि० बं० । तं तु० असंखेंज्जदिभागब्भहियं बं० । एवं सोग० ।

२८७. णिरयगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४-

---

होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका इसी विधिसे दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है।

२८४. तिर्यञ्चोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, चार आयु, दो गोत्र और पाँच अन्तराय इनका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

२८५. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८६. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतः से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२८७. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति तैजस, शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं० संखेँज्जगु० । वेउव्वि०-वेउव्वि० अंगो० णि० बं० संखेँज्जदिभागब्भहियं० । णिरयाणु०णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

२८८. सेसाओ पगदीओ मूलोघं । णवरि जासिं पगदीणं[1] असंखेँज्जगुणब्भहियं तासिं पगदीणं थिरभंगो कादव्वो । देवगदिचदुक्कं [संखेज्ज] गुणब्भहियं । जस० ज०ट्ठि० बं० पंचिंदियभंगो ।

२८९. पंचिंदियतिरिक्खेसु३ सत्तण्णं कम्माणं णिरयोघं । णिरयगदि० ज०ट्ठि० बं० पंचिंदियजा०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-हुंड०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-अप्पसत्थ०-तस०४-अथिरादिछ०-णिमि० णि० बं० संखेँज्जदिभागब्भहियं० । णिरयाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

चतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

२८८. शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है । इतनी विशेषता है कि जिन प्रकृतियोंका असंख्यातगुणा अधिक स्थितिबन्ध है, उन प्रकृतियोंका स्थिर प्रकृतिके समान भङ्ग जानना चाहिए । देवगतिचतुष्कका भङ्ग संख्यातगुणा अधिक कहना चाहिए । यशःकीर्तिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय जातिके समान है ।

२८९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

---

1 मूलप्रतौ पगदीणं जसगित्ति आसिं असंखे—इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९०. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जभागब्भ०। छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिछयु० सिया० संखेंज्जभागब्भ०। तिरिक्खाणु० णि० बं०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०। [उज्जोव० सिया०। तं तु०। एवं] उज्जो०।

२९१. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० णि० बं०। तं तु०। सेसाओ पंचिंदियाओ पसत्थाओ णियमा बंधदि संखेंज्जदिभा०। थिरादितिण्णियुग० सिया० संखेंज्जभागब्भ०। एवं मणुसगदि०।

२९२. देवगदि० जह०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-पसत्थट्ठावीसं

---

२९०. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, स्थिर आदि छह युगलका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९१. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष पञ्चेन्द्रियजाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंको नियमसे बाँधता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर आदि तीन युगलका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

२९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर और प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णि० बं० । तं तु० । एवं एदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स । तं तु० । चदुजादि० ओघं । णवरि याओ णि० बं० संखे०..........णिय० बं० तं तु । याओ सिया बं० तं तु० ताओ तथा चे० कादव्वा । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णिरयोघं ।

२६३. अथिर० ज०ट्टि०बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० संखेॅज्जदिभाग० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । सुभग-जसगि० सिया० संखेॅज्जदिभाग० । एवं असुभ-अजस०..........णवरि एइंदि० विगलिंदियसंजुत्ताओ ताओ पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

२६४. मणुस०३ सत्तण्णं कम्माणं मूलोघं । णवरि मोह-इत्थि०-णवुंस०-अरदि-सोगाणं याओ असंखेॅज्जदिभागब्भहियाओ ताओ संखेॅज्जभागब्भहियाओ । णिरयगदि-णिरयाणु० ओघं । तिरिक्ख०-मणुसगदि-ओरालिय०-तेजा०-क०-पंचसंठा०-

---

अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । चार जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि जिनका नियमसे बन्धक होता है, उनका संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है तथा जिनका कदाचित् 'तं तु' रूपसे बन्धक होता है, उनका उसी प्रकार बन्धक होता है । पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है ।

२६३. अस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । सुभग और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका भी बन्धक होता है । इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय सहित इनका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके समान है ।

२६४. मनुष्यत्रिकमें सात कर्मोंका भङ्ग मूलोघके समान है । इतनी विशेषता है कि मोहनीयके स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोक इनमेंसे जो प्रकृतियाँ असंख्यातवाँ भाग अधिक कही हैं उन्हें संख्यातवाँ भाग अधिक जानना चाहिए । नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है । तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस थावरादिणवयुगल-अजस०-णिमि० एदाणं णिरयोघं। णवरि जस० ओघभंगो कादव्वो। सव्वासिं देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि० पसत्थाणं णि० बं० संखेंज्ज-गुणब्भहियं०। णवरि वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं०। तं तु०। आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० सिया बं०। तं तु०। एवं वेउव्वि०-आहार०-दोअंगो०-देवाणु०-तित्थयरं च। मणुसअपज्जत्त० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

२९५. देवेसु एइंदिय-आदाव-थावर० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। एवं भवणवासि-वाणवेंतर०। जोदिसिय याव णवगेवज्जा त्ति विदियपुढविभंगो। णवरि जोदिसिय याव सोधम्मीसाण त्ति एइंदिय-आदाव-थावर देवोघं। सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति. तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु० उज्जो०। उवरि मणुसगदि० आणद याव णवगेवज्जा त्ति। अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति मणुसग० ज०ट्ठि०बं० णवगेवज्ज

शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस-स्थावर आदि नौ युगल, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका भङ्ग ओघके समान करना चाहिए। उक्त सब मनुष्योंमें देवगतिकी जघन्य स्थिति का बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, आहारक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

२९५. देवोंमें एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इनका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंके जानना चाहिए। ज्योतिषियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंका भङ्ग दूसरी पृथ्वीके समान है। इतनी विशेषता है कि ज्योतिषियोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्पतकके देवोंमें एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इन तीन प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सानत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तक तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतका सन्निकर्ष जानना चाहिए। आगे आनत कल्पसे लेकर नव ग्रैवेयक तक मनुष्यगतिकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

पढमदंडओ, अथिरादि विदियदंडओ य ।

२६६. सव्वएइंदियाणं तिरिक्खोघं । सव्वविगलिंदियाणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्त० सत्तएणं कम्माणं मणुसोघं । णामपगदीणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । आहार०-आहार०अंगो०-जस०-तित्थय० मूलोघं ।

२६७. पुढवि०-आउ०-वणप्फदिपत्तेय० पज्जत्तापज्जत्ता णियोदजीवा बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्ता मणुसअपज्जत्तभंगो कादव्वो । णवरि असंखेज्जदिभागब्भहियं० । तेउ०-वाउ०-बादरसुहुम-पज्जत्तापज्जत्त० सो चेव भंगो । णवरि सव्वाणं तिरिक्खधुविगाणं कादव्वं ।

२६८. तस-तसपज्जत्ता सत्तएणं कम्माणं मणुसोघं । णामस्स वेउव्वियछ०-आहारदुग-जसगि०-तित्थय० मूलोघं । सेसाणं बेइंदियपज्जत्तभंगो ।

२६६. पंचमण०-तिण्णिवचि० णाणावर० वेदणी० आयु० गोद० अंतराइगं च ओघं । णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पचलापचला-थीणगिद्धि० णि० बं० । तं तु० ।

सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नौ ग्रैवेयकका प्रथम दण्डक और अस्थिर आदिका दूसरा दण्डक जानना चाहिए ।

२९६. सब एकेन्द्रिय जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग जानना चाहिए । सब विकलेन्द्रियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग, यशःकीर्ति और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग मूलोघके समान है ।

२९७. पृथ्वीकायिक, जलकायिक और वनस्पतिकायिक प्रत्येक तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त तथा निगोद जीव और इनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान करना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यातवाँ भाग अधिक जानना चाहिए । अग्निकायिक और वायुकायिक तथा बादर और सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंके वही भङ्ग कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सबके तिर्यञ्च ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका कहना चाहिए ।

२९८. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है । नामकर्मकी वैक्रियिक छह, आहारकद्विक, यशःकीर्ति और तीर्थङ्कर प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है । तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग द्वीन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है ।

२९९. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें ज्ञानावरण, वेदनीय, आयु, गोत्र और अन्तरायकी प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । निद्रा निद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धिका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । निद्रा और प्रचलाका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिद्दा-पचला० णिय० बं० संखेंज्जगुण० । चदुदंस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । एवं थीणगिद्धि०३ ।

३००. णिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पचला णिय० बं० । तं तु० । चदुदंस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । एवं पचला० । चदुदंस० ओघं ।

३०१. मिच्छ० ज०ट्ठि०बं० अणंताणुबंधि०४ णि० बं० । तं तु० । अट्ठकसा०-हस्स०-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंज्जगु० । चदुसंज०-पुरिस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । एवं अणंताणुबंधि०४ ।

३०२. अपच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० तिण्णिकसा० णि० बं० । तं तु० । पच्चक्खाण०४-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंज्जगु० । चदुसंज०-पुरिस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । एवं तिण्णिक० ।

बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३००. निद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार दर्शनावरणका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार दर्शनावरणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

३०१. मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्कका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। आठ कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी-चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०२. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्य-की अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। प्रत्याख्यानावरण चार, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०३. पच्चक्खाणा०कोध० ज०ट्ठि०बं० तिण्णिकसा० णि० बं० । तं तु० । चदुसंज०-पुरिस० णि० बं० असंखेज्जगु० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगु० । एवं तिण्णिकसा० । चदुसंजल०-पुरिस० ओघं ।

३०४. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगु० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेज्जगु० । चदुसंज० णि०बं० असंखेज्ज० । एवं णवुंस० ।

३०५. हस्स० ज०ट्ठि०बं० चदुसंज०-पुरिस० णि० बं० असंखेज्जगु० । रदि-भय-दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवं रदि-भय-दुगुं० ।

३०६. अरदि० ज०ट्ठि०बं० चदुसंज०-पुरिस० णि०बं० असंखेज्जगु० । भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगु० । सोग० णि० । तं तु० । एवं सोग० ।

---

३०३. प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार संज्वलन और पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है।

३०४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०५. हास्यकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३०६. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलन और पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोकका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०७. णिरयग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-अथिर-असुभ-अजस०-णिमि० णि० बं० संखेज्जगुणब्भहि० । हुंड०-असंपत्त०-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णिमि० णि० संखेज्जभागब्भ० । णिरयाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

३०८. तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-वण्ण० ४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेज्जगु० । तिरिक्खाणु० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं० तु० । जस० णि० बं० असंखेज्जगु० । एवं तिरिक्खाणु०[1] । एवं तिरिक्खोघं उज्जो० ।

स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोक को मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०७. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुण्डसंस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३०८. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम से जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चके समान उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

---

1. मूलप्रतौ तिरिक्खाणु० णियमा उज्जो सिया एवं इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०९. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-ओरालि०अंगो०--वज्जरि०-मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । सेसाओ पसत्थाओ णि० बं० संखेंज्जगु० । जसगि० णि० बं० असंखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० । एवं ओरालि०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० ।

३१०. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०पसत्थपगदीओ णि० बं० । तं तु० । आहारदुग-तित्थय० सिया० । तं तु० । जसगि०-णि० बं० असंखेंज्जगुणब्भ० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

३११. एइंदि० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदि--ओरालि०--तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर--पज्जत्त--पत्ते०--णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । हुंड०-

---

३०९. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१०. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। आहारकद्विक और तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३११. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूभग-अणादे० णि० बं० संखेंज्जभागब्भ० । आदाव० सिया०। तं तु० । उज्जो०-थिराथिर-सुहासुह-अजस० सिया० संखेंज्जगु० । जस० सिया० असंखेंज्जगु० । थावर० णि० बं० । तं तु० । एवं आदाव-थावरं ।

३१२. बीइंदि० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । हुंडसं०-असंपत्त०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णि० बं० संखेंज्जदिभाग० । उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० संखेंज्जगु० । जस० सिया० असंखेंज्जगु० । एवं तीइंदि०-चतुरिं० ।

प्रत्येक और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । हुण्ड संस्थान, दुर्भग और अनादेयका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आतपका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । स्थावरका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३१२. द्वीन्द्रियजातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । हुण्ड संस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१३. णग्गोद०ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० संखेंज्ज-गुणब्भहियं। तिरिक्खगदि-मणुसगदि-वज्जरिस०-दोआणु०-उज्जो०थिराथिर-सुभा-सुभ-अजस० सिया० संखेंज्जगु०। जस० सिया० असंखेंज्जगु०। वज्जणारा० सिया० तं तु०। एवं वज्जणारायणं। एवं चेव सादिय०। णवरि णारायण० सिया० तं तु०। वज्जणारा० सिया० संखेंज्जभाग०। एवं णारा०।

३१४. खुज्जसं० ज०ट्ठि०बं० णग्गोद०भंगो। णवरि वज्जणारा० संखेंज्जभाग०। अद्धणारा० सिया०। तं तु०। एवं अद्धणारा०। एवं चेव

३१३. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्च-गति, मनुष्यगति, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानको मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्द्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१४. कुब्जक संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदा-चित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार वामन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वामणसंठा० । णवरि वज्जणारा०-णाराय०-अद्धणाराय० सिया० बं० संखेज्ज-भाग० । खीलिय० सिया० बं० । तं तु० । एवं खीलिय० । हुंड० ज०ट्ठि०बं० णग्गोदभंगो । णवरि चदुसंघ० सिया० बं० संखेज्जभाग० । असंपत्त० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेज्जगु० । एवं असंपत्त० ।

३१५. अप्पसत्थ० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०--क०--ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि० णि० बं० संखेज्जगु० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि०-समचदु०-वज्जरिस०-दोआणु०-उज्जो०-थिरादि०४-सुभग-सुस्सर--आदे० अजस० सिया० संखेज्जगु० । पंचसंठा०-पंचसंघ० सिया० संखेज्जभा० । दूभग-

---

संस्थानकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराच संहनन, नाराच संहनन और अर्ध नाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। कीलक संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलकसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। हुण्ड संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका सन्निकर्ष न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशः-कीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१५. अप्रशस्त विहायोगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-चतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर आदि चार, सुभग, सुस्वर, आदेय और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुस्सर-अणादें० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेंज्जगु० । एवं दूभग-दुस्सर-अणादें० ।

३१६. सुहुम० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदि-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पज्जत्त-पत्ते०-अजस०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । एइंदि०-हुंड०-थावर-दूभग-अणादें० णि० बं० संखेंज्जभा० । थिराथिर-सुभासुभ० सिया० संखेंज्जगु० । एवं साधारणं ।

३१७. अपज्जत्त० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०[1]-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०-उप०-तस-बादर-पत्ते०-अथिर-असुभ-अजस०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । दोगदि-दोआणु० सिया० संखेंज्जगु० । हुंड०-असंपत्त०-दूभग-अणादें० णि० बं० संखेंज्जदिभाग० ।

अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१६. सूक्ष्मकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, स्थावर, दुर्भग और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्थिर, अस्थिर, शुभ और अशुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार साधारण प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१७. अपर्याप्तकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति,औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, त्रस, बादर, प्रत्येक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दोगति और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, दुर्भग और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

---

१. मूलप्रतौ पंचिंदि तेजाक० ओरालि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१८. अथिर० ज०ट्ठि०बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० बं० संखेज्ज० । सुभ-तित्थय० सिया० संखेज्जगु० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जस० सिया० असंखेज्जगु० । एसिं जसगित्ती भणिदा तेसिं असंखेज्जगुणं कादव्वं । एवं असुभ-अजसगित्ती ।

३१९. वचिजोगि-असच्चमोसवचिजोगीसु तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-ओरालियकायजोगी० ओघं । ओरालियमिस्से एइंदियभंगो । णवरि देवगदि ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० संखेज्जगुण० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णिय० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवं वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०देवाणु०-तित्थय० ।

---

३१८. अस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। जिनके यशःकीर्ति प्रकृति कही है उनके असंख्यातगुणी कहनी चाहिए। इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३१९. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है। काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थिति का बन्धक होता है। तीर्थंकरका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

३२०. वेउव्वियकायजोगी० सत्तण्णं कम्माणं सोधम्मभंगो। तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु०। तिरिक्खाणु० णि० बं०। तं तु०। उज्जो० सिया०। तं तु०। एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०। मणुसगदी० सोधम्मभंगो। एइंदिय-आदाव-थावर० सोधम्मभंगो।

३२१. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-पसथ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु०। दोगदि-वजरि०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०

है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२०. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थिति का बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्य गतिका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इनकी अपेक्षा सन्निकर्ष सौधर्म कल्पके समान है।

३२१. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दोगति, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० संखेॅज्जगु० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । [एवं] वज्जणा० । एवं चेव सादिय० । णवरि णारायण० सिया० । तं तु० । वज्जणारा० सिया० संखेॅज्ज-भागब्भ० । एवं णारा० । खुज्ज० ज०ट्ठि०बं० णग्गोदभंगो । णवरि वज्जणारा० सिया० संखेॅज्जभागब्भ० । अद्धणारा० सिया० । तं तु० । एवं अद्धणारा० । वामण० ज०ट्ठि०बं० णग्गोदभंगो । णवरि खीलिय० सिया० । तं तु० । एवं खीलिय० । सेसाणं सोधम्मभंगो । एवं वेउव्वियमिस्से । णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जोव० सिया० संखेॅज्जभाग० ।

होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमको जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार स्वाति संस्थानकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्ध होता है। इसीप्रकार नाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। कुब्जकसंस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्ष न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अर्धनाराच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवां भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार अर्धनाराच संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। वामन संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्ष न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहननका कदाचित बन्धक होता है और कदाचित अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार कीलक संहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। शेष कर्मोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२२. आहार०--आहारमिस्स० सव्वट्ठभंगो णाम वज्ज। णवरि देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०-समचदु०--वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४--देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० बं०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०।

३२३. अथिर० ज०ट्ठि०बं० सुभ--जसगित्ति--तित्थय० सिया० संखेंज्जभागब्भ०। असुभ--अजस० सिया० बं०। तं तु०। सेसं णि० बं० संखेंज्जभागब्भहियं०। एवं असुभ-अजस०।

३२४. कम्मइगका० ओरालियमिस्सभंगो। णवरि तित्थय० ज०ट्ठि०बं० मणु-

३२२. आहारक काययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका भङ्ग सर्वार्थसिद्धि के समान है। किन्तु नामकर्मकी प्रकृतियोंको छोड़कर यह कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३२३. अस्थिर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शुभ, यशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अशुभ और अयशःकीर्ति की मुख्यता से सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२४ कार्मण काययोगी जीवोंमें भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्य गतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सगदि० सिया० संखेंज्जगु० । देवगदि० ४ सिया० । तं तु० ।

३२५. इत्थिवे०-पुरिसवेदेसु सत्तएणं कम्माणं पंचिंदियभंगो । णवरि कोध-संज० ज०ट्ठि०बं० तिरिणसंज० णि० बं० णि० जहरणा० । एवं तिरिणसंजल-णाणं ।

३२६. णवुंसगे मोहणी० इत्थिवेदभंगो । सेसं ओघं । अवगदवेदे ओघं । कोधादि०४ ओघं । णवरि विसेसो, कोधे कोधसंज० [ज०ट्ठि०बं०] तिरिणसंज० णि० बं० णि० जहरणा० । एवं तिरिणसंजलणाणं । माणे माणसंज० ज०ट्ठि०बं० दोरणं संजल० णि० बं० णि० जहरणा० । एवं दोरणं संजलणाणं । मायाए माया-संज० ज०ट्ठि०बं लोभसंज० णि० बं० णि० जहरणा० । एवं लोभसंजल० । लोभे ओघं चेव ।

३२७. मदि०-सुद० तिरिक्खोघं । विभंगे सत्तएणं कम्माणं णिरयोघं । णिरयग० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वरण०४-अगु०४-तस०४-

---

नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगति चतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३२५. स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें सात कर्मोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३२६. नपुंसकवेदी जीवोंमें मोहनीयका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। तथा शेष कर्मोंका भङ्ग ओघके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें ओघके समान है। क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधकषायवाले जीवोंमें क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है। जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मानकषायवाले जीवोंमें मान संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार दो संज्वलनोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। माया कषायवाले जीवोंमें माया संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ संज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार लोभ संज्वलनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। लोभकषायवाले जीवोंमें सन्निकर्ष ओघके समान ही है।

३२७. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। विभङ्गज्ञानमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क और निर्माण इनका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु० । हुंड०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णि० बं० संखेंज्ज-भाग० । णिरयाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० । तिरिक्खगदि० ज० ट्ठि०बं० पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० संखेंज्जगु० । ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-तिरिक्खाणु० णि०बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३२८. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-

---

नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । हुण्डसंस्थान, अप्रशस्तविहायोगति और अस्थिर आदि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३२८. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है । इसीप्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो गति, दो आनुपूर्वी और उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसाणु० । णवरि ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-दोगदि-दोआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० ।

३२६. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०-सादि-पसत्थट्ठावीसं णिय० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । चदुजादि--पंचसंठा०--पंचसंघ०--अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० मणजोगिभंगो । णवरि जसगि० ज० संखेज्जगुणब्भ० ।

३३०. आभिणि०-सुद०-ओधि० मण०भंगो । णवरि मिच्छत्तपगदिं वज्ज । मणुसगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--तेजा०-क०--समचदु०--वण्ण०४--अगु०४--पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेज्जगुणब्भ० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । जस० णि० बं० असंखेज्जगु० । तित्थय०

अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३२६. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, स्वातिसंस्थान प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्ध होता है। इसीप्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३३०. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंका भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व प्रकृतिको छोड़कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ नाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० संखेंज्जगु० । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

३३१. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिंदि०--पसत्थट्ठावीसं णि० बं० । तं तु० । णवरि जस० णि० बं० असंखेंज्जगु० । आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

३३२. अथिर० ज०ट्ठि०बं० देवगदि-पंचिंदि०--वेउव्वि०-तेजा०--क० समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णि० णि० बं० संखेंज्जगु० । सुभ०-तित्थय० सिया० संखे०गु० । जस० सिया० असंखेंज्जगु० । असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । एवं असुभ-अजस० ।

होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यगति पञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३१. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इतनी विशेषता है कि यशः-कीर्तिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार इनका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३३२. अस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ और तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३३. मणपज्जव०-संजद-सामाइ०-छेदो० ओधिभंगो। णवरि असंजद-संजदासंजदपगदीओ वज्ज। परिहार० आहारकायजोगिभंगो। णवरि अरदि० ज०ट्ठि०बं० सोग० णि० बं०। तं तु०। सेसं संखेज्जगु०। एवं सोग०।

३३४. अथिर० ज०ट्ठि०बं० देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४--देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०--तस०-४-सुभग--सुस्सर--आदे०-णिमि० संखेज्जगु०। सुभ--जस०--तित्थय० सिया० संखेज्जगु०। असुभ-अजस० सिया०। तं तु०। एवं असुभ-अजस०।

३३५. सुहुमसंप० ओघं। संजदासंजदे परिहारभंगो। णवरि मोह० अट्ठकसा०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० एदाओ एक्कमेक्कस्स। तं तु०। अरदि० ज०ट्ठि०बं० अट्ठ-

---

भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३३. मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि असंयत और संयतासंयतकी प्रकृतियोंको छोड़कर जानना चाहिए। परिहारविशुद्धि संयतोंका भङ्ग आहारककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव शोकका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३४. अस्थिरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शुभ, यशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अशुभ और अयशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३५. सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंका भङ्ग ओघसे समान है। संयतासंयत जीवोंका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकी आठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका परस्पर सन्निकर्ष होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। अरतिकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कसा०--पुरिस०--भय-दुगु ० णि० संखेंज्जगु० । सोग० णियमा बं० । तं तु० । एवं सोग० ।

३३६. असंजद० तिरिक्खोघं । णवरि तित्थय० ओघं । णवरि जस० णि बं० संखेंज्जगु० ।

३३७. चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदं० मूलोघं । ओधिदंस० ओधिणाणिभंगो ।

३३८. किण्ण--णील--काऊणं असंजदभंगो । णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थयरं देवगदिसह कादव्वो । काउए पढमपुढविभंगो । तेऊए छण्णं कम्माणं सोधम्मभंगो । मिच्छ० ज०ट्ठि०बं० अणंताणु-बंधि०४ णि० बं० । तं तु० । बारसकसा०--पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगु ० णि० बं० संखेंज्जगु० । एवं अणंताणुबंधि०४ ।

३३९. अपच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० तिण्णिकसा० णि बं० । तं तु० ।

जघन्य स्थितिका बन्धक जीव आठ कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शोक का नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भो बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३६. असंयत जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियम से बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३३७. चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है। अचक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग मूलोघके समान है। अवधिदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है।

३३८. कृष्ण, नील, और कापोत लेश्यावाले जीवोंका भङ्ग असंयत जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंके तीर्थंकर प्रकृति देवगति सहित कहनी चाहिए। कापोत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग पहली पृथ्वीके समान है। पीत लेश्यामें छह कर्मोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३३९. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगु० । एवं तिण्णिकसा० ।

३४०. पच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० तिण्णिक० णि० बं० । तं तु० । चदुसंज०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगु० । एवं तिण्णिकसा० ।

३४१. कोधसंज० ज०ट्ठि०बं० तिण्णिसंज०--पुरिस०--हस्स--रदि--भय--दुगुं० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

३४२. इत्थि० ज०ट्ठि०बं० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं० णि० बं० संखेज्जगुणब्भहियं० । हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेज्जगु० । एवं णवुंस० ।

३४३. अरदि० ज०ट्ठि०बं० चदुसंज०--पुरिस०-भय--दुगुं० णि० बं० संखे-

---

जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। आठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४०. प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। चार संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४१. क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है,किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३४२. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४३. अरतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार संज्वलन, पुरुषवेद भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

ज्जगु० । सोग० णि० बं० । तं तु० । एवं सोग० ।

३४४. तिरिक्खगदि--एइंदि०--पंचसंठा०-पंचसंघ०--तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें० सोधम्मभंगो । मणुसगदि० ज०ट्टि०बं० पंचिंदि०--तेजा०-क०--समचदु०--वण्ण०४--अगु०४--पसत्थवि०--तस४--थिरादि छ०-णिमि० णि० बं० सखेंज्जगुणब्भहियं० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० ।

३४५. देवगदि० ज०ट्टि०बं० परिहार-पढमदंडओ कादव्वो । अथिरं पि तस्सेव बिदिय-दंडओ । एवं पम्माए ।

३४६. सुक्काए सत्तण्णं कम्माणं मणजोगिभंगो । मणुसगदि-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० पम्माए भंगो । णवरि जस० णि० बं०

अधिक स्थितिका बन्धक होता है । शोकका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३४४. तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३४५. देवगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके परिहारविशुद्धिसंयतका प्रथम दण्डक कहना चाहिए और अस्थिर प्रकृति भी कहना चाहिए । तथा उसीके दूसरा दण्डक कहना चाहिए । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए ।

३४६. शुक्ललेश्यामें सात कर्मोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है । मनुष्यगति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है । इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका नियमसे बन्धक होता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जगु० । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० आणदभंगो । वज्जरि०-जस० सिया बं० संखेज्जगु० । सेसं पम्माए भंगो । णवरि जसगित्ति० असंखेज्जगु० ।

३४७. भवसिद्धिया० ओघं । अब्भवसिद्धिया० मदिभंगो । सम्मादि०-खइग-सम्मादि० ओधिभंगो । वेदगसम्मादि० पम्मभंगो । णवरि मिच्छ०पगदीओ वज्ज । सासणे सत्तण्णं कम्माणं णिरयोघं । णवरि मिच्छत्त-णवुंसग० वज्ज । तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचिदि०--ओरालि०--तेजा०--क०-समचदु०--ओरालि०अंगो०-वज्जरि०--वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो० ।

३४८. मणुसगदि० ज०ट्ठि०बं० तिरिक्खगदिभंगो । णवरि [मिच्छत्त-णवुं

जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका भङ्ग आनत कल्पके समान है। वज्रर्षभनाराच संहनन और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पद्मलेश्याके समान है। इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिकी असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३४७. भव्य जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। अभव्य जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। सम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। वेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंका भङ्ग पद्मलेश्यावाले जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियोंको छोड़कर कहना चाहिए। सासादन सम्यक्त्वमें सात कर्मोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसक वेदको छोड़कर कहना चाहिए। तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३४८. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और नपुंसकवेदको छोड़कर कहना चाहिए। देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स०] वज्ज । देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पसत्थट्ठावीसं णिय० । तं तु० ।

३४६. पंचिंदि० ज०ट्ठि०बं० तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि० णि० बं० । तं तु० । तिण्णिगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-तिण्णिआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४--अगु०४--पसत्थवि०--तस०४--थिरादिछ०--णिमिणं । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि० । णवरि दोगदि-दोआणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । सेसं पसत्थ [प-]गदीओ णि० बं० । तं तु० । चदुसंठा०--चदुसंघ०--अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० मणजोगिभंगो । णवरि थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०

है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३४९. पञ्चेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीन गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, तीन आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और निर्माणकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो गति, दो आनुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान, चार संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ और यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति इन तीन युगलोंका कदाचित् बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिण वि सिया० संखेज्जदिभा० ।

३५०. सम्मामिच्छ० वेदगभंगो । मिच्छादिट्ठी० मदिभंगो । सण्णि० मणुस-भंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं । आहार० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

३५१. जहण्णपरत्थाण-सण्णियासो दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० आभिणिबो०णाणावरणीयस्स जहण्णयं ट्ठिदिं बंधंतो चदुणाणा०-चदुदंसणा०-सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंतरा० णिय० बं० । णिय० जहण्णा० । एवमेदाओ एँक्क-मेँक्कस्स । तं तु० जहण्णा० ।

३५२. णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-पंचंतरा० णि० बं० । णि० अजह० असंखेज्जगु० । चदुदंस०-मिच्छ०-बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-पंचिंदि०--ओरालि०-तेजा०-क०--समचदु०-ओरालि० अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिपंच-णिमि० णि०बं० । तं तु० । दोगदि-दोआणु०-उज्जो०-णीचा० सिया० । तं तु० । उच्चा० सिया०

होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

३५०. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दृष्टियोंके समान है और मिथ्या-दृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है । संज्ञी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है और असंज्ञी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । आहारक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । तथा अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार जघन्य स्वस्थानसन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

३५१. जघन्य परस्थानसन्निकर्ष दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शना-वरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु वह जघन्य स्थितिका ही बन्धक होता है ।

३५२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शना-वरण, सातावेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । दो गति, दो आनुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेंज्जगु० । एवं णिद्दाणिद्दाए भंगो चदुदंस०-मिच्छ०-बारसक०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०--तिरिक्खगदि--मणुसगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०-अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४--उज्जो०-पसत्थवि०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि०-णीचागोद त्ति ।

३५३. असादा० ज०ट्ठि० बंधंतो खवगपगदीओ णिद्दाणिद्दाए भंगो । पंच-दंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०--पंचिंदि०-ओरालि०--तेजा०--क०--समचदु०-ओरालि०अंगो०--वज्जरि०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग--सुस्सर-आदें०-णिमि० णि०बं०संखेंज्जभाग० । हस्स-रदि-तिरिक्खगदि-मणुसगदि-दोआणु०-उज्जो०-थिर-सुभ-णीचा० सिया० असंखेंज्जभाग० । अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । जस०--उच्चा० सिया० असंखेंज्जगु० । एवं अरदि--सोग--अथिर-असुभ-अजस० ।

अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उच्चगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार निद्रानिद्राके समान चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि पाँच, निर्माण और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५३. असाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५४. कोधसंज० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादावे०-तिण्णिसंज०-, जस०-उच्चा०-पंचंत० णिय० बं० संखेज्जगु० । एवं तिण्णिसंज०-पुरिस० । णवरि माणे दोसंजलणं मायाए लोभसंज० पुरिस० चदुसंजलण त्ति भाणिदव्वं । लोभे णत्थि संजल०-पुरिस० ।

३५५. इत्थि० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ णिद्दाणिद्दाए भंगो । पंचदंस० मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०-४ अगु०-४ पसत्थ०-तस०-४ सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० असंखेंज्जभाग० । सादा०-जस०-उच्चा० सिया० असंखेंज्जगु० । असादा०-अरदि-सोग-तिरिक्ख०-मणुसग०-तिण्णिसंठा०-तिण्णिसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस०-णीचा०-सिया० असंखेंज्जभाग० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंच-संघ०-णिरयाणु० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० णि० बं० असंखेंज्जगु० । पंचदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-बारसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-चदुवीसणामपगदीओ-णीचा० णि० बं० संखेंज्जगु० । णिरयग०-वेउव्वि०-

३५४. क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, तीन संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मानमें दो संज्वलन, मायामें लोभ संज्वलन और पुरुषवेदमें चार संज्वलन कहना चाहिए। लोभमें संज्वलन और पुरुषवेदका सन्निकर्ष नहीं होता।

३५५. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, तीन संस्थान, तीन संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ अयशःकीर्ति और नीच गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसक वेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान, पाँच संहनन और नरकगत्यानुपूर्वीकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, चौबीस नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वि०अंगो०--णिरयाणु० णि० बं० णि० अज० । जह० अज० विट्ठाणपदिदाणं बंधदि संखेंज्जभाग० संखें ज्जगु० ।

३५६. तिरिक्खायु० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ णि० बं० असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०--णवुंस०-भय--दुगुं०--तिरिक्खगदि० अपज्जत्तसंजुत्ताओ पगदीओ णीचा० णि० बं० । णि० अज० । जह० अज० विट्ठाणपदिदं असंखेंज्ज-भाग० संखेंज्जगु० । सादावे० सिया० असंखेंज्जगु० । असादा०-हस्स-रदि-अरदि-सोग--पंचजादि--ओरालि०अंगो०--असंपत्त०--तस-थावर--बादर-सुहुम--पत्तेय-साधार० सिया० । यदि०[1] बं० णि० अज० विट्ठाणपदिदं असंखेंज्जभा० संखेंज्जगु० । एवं मणुसायु० । णवरि एइंदियसंजुत्ताओ वज्ज ।

३५७. देवायु० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ णि० बं० असंखेंज्जगु० । पंच-दंस०--मिच्छ०-बारसक०--हस्स-रदि--भय--दुगुं०-पसत्थणामाओ चदुवीसं णि० बं० संखेंज्जगु० । इत्थि० सिया० संखेंज्जगु० । पुरिस० सिया० असंखेंज्जगु० । देवगदि-

नरकगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, नियमसे दो स्थान पतित स्थितियोंका बन्धक होता है। या तो संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३५६. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, अपर्याप्तसंयुक्त प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है, या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे असं-ख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, पाँच जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, प्रत्येक और साधारण इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य, दो स्थानपतित स्थितिका बन्धक होता है या तो असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति संयुक्त प्रकृतियोंको छोड़कर जानना चाहिए।

३५७. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा और नामकर्मकी चौबीस प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता

१. मूलप्रतौ यदि० णि० बं० णि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु० णि० बं०, णि० अज० विट्ठाणपदिदं संखेंज्जभा० संखेंज्जगु० ।

३५८. णिरयग० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ [णिय० बं०] असंखेंज्जगु० । पंचदंस०--असादा०---मिच्छ०--बारसक०--णवुंस०--अरदि--सो०--भय-दुगुं०--णाम० सत्थाणभंगो णीचा० णि० बं०[1] संखेंज्जगु० । णिरयाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

३५९. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०--हस्स--रदि-भय-दुगुं०-णाम० सत्थाणभंगो णीचा० णि० बं० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०--उज्जो० । मणुसगदि० तिरिक्खगदिभंगो । णवरि उच्चा० णि० बं० असंखेंज्जगु०[2] ।

है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य दो स्थानपतित स्थितिका बन्धक होता है या तो संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३५८. नरकगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भंगके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३५९. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपकप्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भङ्गके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और नीच गोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। मनुष्यगतिका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि उच्च गोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

---

१. मूलप्रतौ बं० असंखेज्ज० इति पाठः। २. मूलप्रतौ असंखेज्जगु० देवगदि० असंखेज्जगु० देवगदि० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६०. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ [णि० बं०] असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-चदुणोक० णिय० संखेंज्जगु० । णाम सत्थाणभंगो ।

३६१. एइंदि०-ज०ट्ठि०बं० खव०पगदीओ णि० बं० असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छ०--बारसक०--णवुंस०-भय-दुगुं०--णीचा० णि० बं० असंखेंज्जभा० । सादा० सिया० असंखेंज्जगु० । असादा०--हस्स-रदि-अरदि--सोग० सिया० असंखेंज्जभा० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं आदाव-थावर० । एवं बीइंदि०-तीइं०-चदुरिं० ।

३६२. आहार० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं णि० बं० असंखेंज्जगु० । हस्स-रदि-भय--दुगुं० णि० बं० संखेंज्जगु० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं आहार०अंगो० तित्थय० ।

३६३. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीओ णि० बं० असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छ०--बारसक०--भय-दुगुं० णि० बं० असंखेंज्जभा० । सादा० सिया०

---

३६०. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय और चार नोकषाय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है।

३६१. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा और नीच गोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार आतप और स्थावर प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६२. आहारक शरीरकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६३. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्सा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेंज्जगु० । हस्स-रदि-अरदि-सोग-णीचा० सिया० असंखेंज्जभा० । णाम० सत्थाणभंगो । एवं चदुदंस०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णग्गोदभंगो । णवरि खुज्ज०-वामण०-अद्धणारा०-खीलिय०-इत्थिवे० सिया० असंखेंज्जभा० । पुरिस० सिया० असंखेंज्जगु० ।

३६४. हुंड०-असंपत्त० ज०ट्ठि०बं० इत्थि०-णवुंस० सिया० असंखेंज्जगु० । एवं अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें०-तिण्णिवेदाणि भाणिदव्वाणि । सुहुम-साधारण० एइंदियभंगो । णवरि सगपगदीओ जाणिदव्वाओ । एवं सव्वेसिं णामाणं । णवरि अप्पप्पणो सत्थाणं कादव्वं ।

३६५. आदेसेण णेरइएसु आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण० ४-मणुसाणु०-अगु० ४-

इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीयका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, अरति, शोक और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानके समान चार दर्शनावरण पाँच संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुब्जकसंस्थान, वामन संस्थान, अर्धनाराच संहनन, कीलक संहनन और स्त्रीवेद इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६४. हुण्डसंस्थान और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इस प्रकार अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और तीन वेदोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सूक्ष्म और साधारण प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी प्रकृतियाँ जाननी चाहिए। इसी प्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंको जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्वस्थान कहना चाहिए।

३६५. आदेशसे नारकियोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पसत्थ०-तस०४-थिरादिछक्क-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स । तं तु० ।

३६६. असादा० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालिय०-तेजा०-क०-समचदु० ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेॅज्जभा० । हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि० सिया० संखेॅज्जभा० । अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । एवं अथिर-असुभ-अजस० ।

३६७. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-मणुस०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-मणुसाणु०-

---

प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु तब वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३६६. असाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँभाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३६७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगु०४- पसत्थवि०--तस०४- सुभग-सुस्सर-आदें०--णिमि०उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जभागब्भहियं० । सादासाद०--हस्स-रदि--अरदि--सोग--तिण्णिसंठा०--तिण्णि-संघ०--थिराथिर--सुभासुभ--जस०--अजस० सिया० संखेंज्जभा० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ० ।

३६८. तिरिक्खायु० ज०ट्ठि०बं० पंचणाणावरणादिधुविगाणं णि० बं० संखेंज्जगु० । सेसाओ परियत्तमाणियाओ सव्वाओ सिया० संखेंज्जगु० । एवं मणु-सायु० । णवरि णीचुच्चा० सिया० संखेंज्जगु० ।

३६९. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ०--सोलसक०-भय-दु०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जभा० । सादासाद०-तिण्णिवे०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० सिया० संखेंज्जभाग० । णाम० सत्थाणभंगो । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० ओघं । सगपगदीओ संखेंज्जभाग० । णवरि उच्चा० धुविगाणं कादव्वं । णामस्स अप्पप्पणो सत्थाणभंगो ।

पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, तीन संस्थान, तीन संहनन, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशः कीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान और पाँच संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है।

३६८. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण आदि ध्रुवबन्ध-वाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान सब प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नीचगोत्र और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात-गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३६९. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, तीन वेद, हास्य, रति, अरति और शोक इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मका भङ्ग स्वस्थानके समान है। पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष ओघके समान है। किन्तु अपनी प्रकृतियोंकी स्थितिको संख्यातवाँ भाग अधिक कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रको ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके साथ कहना चाहिए। तथा नामकर्मकी अपनी अपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७० तित्थय० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादावे०--बारसक०-पुरिस०-हस्स--रदि--भय-दुगु०--उच्चागो०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । णाम सत्थाणभंगो । एवं पढमाए पुढवीए ।

३७१. बिदियाए पुढवीए आभिणिबो० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०-छदंसणा०-सादावे०-बारसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-मणुसगदियाओ णिरयोघं पढमदंडओ उच्चा०--पंचंत० णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एँक्कमेँक्कस्स । तं तु० ।

३७२. णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-पढमदंडओ णि० बं० संखेंज्जगु० । पचलापचला--थीणगिद्धि--मिच्छत्त-अणंताणुबंधि०४ णि० बं० । तं तु० । एवं थीणगिद्धितिय-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ ।

---

३७०. तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुष वेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार पहिली पृथ्वीमें जानना चाहिए।

३७१. दूसरी पृथ्वीमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पुरुष वेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा और मनुष्यगति आदि प्रकृतियाँ सामान्य नारकियोंके समान प्रथम दण्डकमें कही गई प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

३७२. निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण आदि प्रथम दण्डकमें कही गई प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७३. असादा० ज०ट्ठि०बं० पंचणाणा० मणुसगदिसंजुत्ताओ णिरयोघं। णवरि सम्मादिट्ठिपगदीओ बंधदि। एवं अरदि-सो०-अथिर-असुभ-अजस०।

३७४. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ०-सोलसक०--भय-दु०-णाम मणुसगदिसंजुत्ताओ उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु०। सादासाद०-चदुणोक०-समचदु०-वज्जरिस०-थिरादितिण्णियुगलं सिया० संखेंज्जगु०। दोसंठा०-दोसंघ० सिया० संखेंज्जभा०। एवं णवुंस०। णवरि चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेंज्जभा०। आयु० णिरयोघभंगो।

३७५. तिरिक्खग० ज०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरि णवुंसगभंगो। णामसत्थाणभंगो। एवं पंचसंठा०--पंचसंघ०--अप्पसत्थवि०--दूभग--दुस्सर--अणादें० हेट्ठा उवरि। णामं अप्पप्पणो सत्थाणभंगो। एवं चदुसु पुढवीसु। सत्तमाए पुढवीए एसो चेव भंगो। णवरि णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पचलापचला-थीणगिद्धि-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-

भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३७३. असातावेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके पाँच ज्ञानावरण आदि मनुष्यगति संयुक्त प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यह सम्यग्दृष्टि सम्बन्धी प्रकृतियोंको बाँधता है। इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३७४. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, नामकर्मकी मनुष्यगति संयुक्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, स्थिर आदि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और दो संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आयुकर्मकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य नारकियोंके समान है।

३७५. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे नीचे ऊपरकी अपनी-अपनी प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा नामकर्मकी अपनी अपनी प्रकृतियोंका भंग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार तीसरी आदि चार पृथिवियोंमें जानना चाहिए। सातवीं पृथ्वीमें यही भंग है। इतनी विशेषता है कि निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० तिरिक्खगदिसंजुत्ताओ कादव्वाओ ।

३७६. तिरिक्खेसु मूलोघं । णवरि खवगपगदीणं णिद्दाणिद्दाए भंगो । पंचिंदिय-तिरिक्ख०३ आभिणिबो० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिछ०-णिमि०-उच्चागो०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० । असादा० ज०ट्ठि०बं० णिरयोघं । णवरि देवगदिसंजुत्तं ।

अनन्तानुबन्धी चार, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष होता है । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनको तिर्यञ्चगति सहित कहना चाहिए ।

३७६. तिर्यञ्चोंमें मूलोघके समान भङ्ग जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता-वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । असाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगति संयुक्त कहना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७७. मणुसगदि० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्ज०-मणुसाणु० णि० बं० । तं तु० । पुरिस० उच्चा० णि० बं० संखेंज्जभा० । एवं सव्वाणं धुविगाणं । सादासाद० चदुणोक० थिरादितिण्णियुगलं सिया० संखेंज्जभाग० । एवं तं तु पदिदाणं । इत्थिवे०--णवुंस०--तिरिक्खग०--पंचसंठा०--पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० हेट्ठा उवरिं मणुसगदिभंगो । णवरि वेदविसेसा जाणिदव्वा । णाम० सत्थाणभंगो । णवरि इत्थिवे० मणुसगदि--देवगदिसंजुत्तं कादव्वं । चदुआयु० ओघं । णवरि धुवियाओ ताओ णि० बं० विट्ठाणपदिदं बंधदि संखेंज्जभा० संखेज्जगु० । परियत्तमाणियाओ सिया० विट्ठाणपदिदं बंधदि संखेंज्जभा० संखेंज्जगु० । णिरयगदि--चदुजादि--णिरयाणु०--आदाव--थावरादि०४ तिरिक्खोघं । णवरि संखेंज्जभा० । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ता० णिरयोघं । णवरि दोआयु० जोणिणिभंगो ।

३७७. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेद और उच्चगोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार सब ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए। सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय और स्थिर आदि तीन युगल इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार "तं तु" रूपसे पठित प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका नीचे ऊपर मनुष्यगतिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वेद विशेष जानना चाहिए। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदको मनुष्यगति और देवगति सहित कहना चाहिए। चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि जो ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियाँ हैं उनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है या तो संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य दो स्थान पतित स्थितिका बन्धक होता है। या तो संख्यातवां भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है या संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नरकगति, चार जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, आतप और स्थावर आदि चार इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष सामान्य तिर्यञ्चोंके समान जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संख्यातवाँ भाग अधिक करना चाहिए। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग योनिमती तिर्यञ्चोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७८. मणुस०३ खवगपगदी० ओघं । देवगदि०४ आहार०भंगो० । णिरयगदि-णिरयाणु० ओघं । सेसं पढमपुढविभंगो । मणुसअपज्जत्तेसु पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

३७९. देवेसु णिरयोघं । णवरि एइंदिय-आदाव-थावरं णादव्वं । एवं भवण०-वाणवेंत० । जोदिसि०-सोधम्मीसा० विदियपुढविभंगो । णवरि एइंदिय-आदाव-थावर० भाणिदव्वा । सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति विदियपुढविभंगो । एवं चेव आणद याव णवगेवज्जा त्ति । णवरि तिरिक्खगदिचदुक्कं वज्ज । अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति पढमदंडओ विदियपुढविभंगो । एवं विदियदंडओ वि । असादा०-मणुसायु० णि० ।

३८०. सव्वएइंदिएसु तिरिक्खोघं । विगलिंदियपज्जत्तापज्जत्त-पंचिंदिय-तसअपज्जत्त० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्त० खवगपगदीणं ओघं । सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

३८१. पंचकायाणं तिरिक्खोघं । णवरि तेउ०-वाउ० तिरिक्खगदि०-तिरिक्खाणु०-णीचा० पुव्वं कादव्वं । तस-तसपज्जत्ता खवगपगदीणं मूलोघं । सेसाणं मणुसोघं । णवरि वेउव्वियछक्कं ओघं ।

३७८. मनुष्यत्रिकमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । देवगतिचतुष्कका भङ्ग आहारक शरीरके समान है । नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है ।

३७९. देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर प्रकृतियाँ जाननी चाहिए । इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंके जानना चाहिए । ज्योतिष्क, सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर प्रकृतियाँ कहनी चाहिए । सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दूसरी पृथ्वीके समान भङ्ग है । तथा इसी प्रकार आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति चतुष्कको छोड़कर सन्निकर्ष जानना चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें प्रथम दण्डकका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है । इसी प्रकार दूसरा दण्डक भी जानना चाहिए । तथा असाता वेदनीय और मनुष्यायुका नियमसे बन्धक होता है ।

३८०. सब एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भंग है । विकलेन्द्रिय पर्याप्त, विकलेन्द्रिय अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है । पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है ।

३८१. पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र इनको पहिले कहना चाहिए । त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है । इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक छः ओघके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८२. पंचमण०--तिण्णिवचि० आभिणिबोधि०आदि ओघं। णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--सादावे०--चदुसंज०-पुरिस०-जस०--उच्चा०--पंचंत० णि० बं० असंखेंज्जगु०। पचलापचला-थीणगिद्धि-मिच्छत्त-अणंताणुबंधि०-४ णिय० बं०। तं० तु०। णिद्दा-पचला-अट्ठकसा०-हस्स-रदि--भय--दुगुं०-देवगदि-वेउव्विय०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४--देवाणु०-अगु०४--पसत्थवि०-तस०४-थिरादिपंच-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु०। एवं थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४।

३८३. णिद्दाए ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं णिद्दाणिद्दाए भंगो। पचला णि० बं०। तं तु०। हस्स-रदि-भय-दु०--देवगदि--पसत्थसत्तावीसं णि० बं० संखेंज्जगु०। आहारदुगं तित्थयरं सिया० संखेंज्जगु०। एवं पचला०।

३८४. असादा० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं णिद्दाए भंगो। णिद्दा-पचला-भय

३८२. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण आदिका भङ्ग ओघके समान है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चार इनका नियमसे बन्धक होता है किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आंगोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि पाँच और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८३. निद्राकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके सब प्रकृतियोंका भङ्ग निद्रानिद्राके समान है। प्रचलाका नियमसे बन्धक होता है। जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियाँ इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आहारक द्विक और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्ध होता है। इसी प्रकार प्रचला प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८४. असाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुगुं०--देवगदि--पंचिंदि०--वेउव्वि०--तेजा०--क०-समचदु०--वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--आदें०--णिमि० णि० बं० संखेज्जगु०। हस्स-रदि-थिर-सुभ० सिया० संखेज्जगु०। जस० सिया० असंखेज्जगु०। अरदि--अथिर--असुभ--अजस० सिया०। तं तु०। एवं अरदि--सोग--अथिर--असुभ-अजस०।

३८५. अपच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं णिद्दाए भंगो। तिण्णिक० णि० बं०। तं तु०। सेसाणं णिद्दाए भंगो। एवं तिण्णिकसा०।

३८६. पच्चक्खाणकोध० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं णिद्दाए भंगो। सेसाओ हेट्ठा उवरिं संखेज्जगु०। तिण्णिक० णि० बं०। तं० तु०। एवं तिण्णिक०।

शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, स्थिर और शुभ इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। यशःकीर्तिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८५. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थिति का भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थिति का बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३८६. प्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग निद्राके समान है। शेष प्रकृतियोंका नीचे ऊपर नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीन कषायोंका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८७. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--चदुसंज०--पंचंत० णि० बं० असंखेज्जगु० । पंचदंस०--मिच्छ०--बारसक०--भय--दुगुं०--पंचिंदि०--तेजा०--क०--वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर--आदें०--णिमि० णि० बं० संखेज्जगु० । सादा०-जस०-उच्चा० सिया० संखेज्जगु० । असादा०--चदुणोक०--तिण्णिगदि-दोसरीर--समचदु०-दोअंगो०-वज्जरि०-तिण्णिआणु०--उज्जो०--थिराथिर--सुभासुभ-अजस०-णीचा० सिया० संखेज्जगु० । णग्गोद०-सादि०-वज्जणारा०-णाराय सिया० संखेज्जभा०। एवं णवुंस० । णवरि दोगदि-समचदु०-वज्जरिस०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अज०-णीचा० सिया० संखेज्जगु० । चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेज्जभा० ।

३८८. आयुगाणं चदुण्णं पि खवगपगदीणं असंखेज्जगु० । सेसाणं मणुसभंगो ।

३८९. णिरयगदि० ज०ट्ठि०बं० खवगपगदीणं ओघं । पंचदं०--असादा०-

३८७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, चार नोकषाय, तीन गति, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अयशःकीर्ति और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। न्यग्रोधसंस्थान, स्वातिसंस्थान, वज्रनाराच संहनन और नाराच संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दोगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अयशःकीर्ति और नीचगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३८८. चार आयुओंकी भी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव क्षपक प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है।

३८९. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिच्छ०-बारसक०-अरदि-सोग-भय-दु०-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०-अंगो०-वण्ण०४-अगु०-तस०४-अथिर-असुभ-अजस०-णिमि०-णीचा० णि० बं० संखेंज्जगु० । णवुंस०-हुंडसं०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णि बं० संखेंज्जभा० । णिरयाणु० णि० बं० । तं तु० । एवं णिरयाणु० ।

३६०. तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि०बं० खवगाणं णिरयगदिभंगो । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-हस्स-रदि-भय-दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-थिरादिपंच णि० बं० संखेंज्जगु० । तिरिक्खाणु०-णीचा० णि० बं० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचागो० ।

३६१. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणु-

समान है । पाँच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारहकषाय, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँभाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नरकगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँभाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार नरकगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३९०. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगतिके समान है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारहकषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क और स्थिर आदि पाँच इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार तिर्यञ्च-गत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३९१. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव औदारिक शरीर, औदारिक आंगोपांग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साणु० णि० बं० । तं तु० । सेसाणं तिरिक्खगदिभंगो । णवरि तित्थय०सिया० संखेज्जगु० । एवं मणुसगदिपंचगस्स ।

३९२. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--सादा०--चदुसंज०--पुरिस०--जस०--उच्चा०--पंचंत० णि० बं० असंखेज्जगु० । हस्स--रदि--भय--दु० णि० बं० संखेज्जगु० । पंचिंदियादिपसत्थसत्तावीसं णि० बं० । तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

३९३. एइंदि० ज०ट्ठि०बं खविगाणं ओघं । पंचदं०--मिच्छ०--बारसकसा०--भय--दु०--णाम सत्थाणभंगो णीचा० णि० बं० संखेज्जगु० । सादा०--जस० सिया०

है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसीप्रकार मनुष्यगतिपञ्चककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

३९२. देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । पञ्चेन्द्रिय जाति आदि प्रशस्त सत्ताईस प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है ।

३९३. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, नाम कर्मकी स्वस्थान भङ्गवाली प्रकृतियाँ और नीचगोत्रका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । साता वेदनीय और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेंज्जगु० । असादा०--चदुणोक०--थिराथिर--सुभासुभ--अज०-उज्जो० सिया० संखेंज्जगु० । णवुंस०-हुंड०--दूभग-अणादें० णि० बं० संखेंज्जभा० । एवं वीइं०-तीइं०-चदुरिं० हेट्ठा उवरिं एइंदियभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

३९४. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० खविगाणं ओघं। सेसाणं इत्थिवेदभंगो । णाम० सत्थाणभंगो । सव्वाणं संघड०--अप्पसत्थ०--दूभग--दुस्सर-अणादेंज्जाणं हेट्ठा उवरिं इत्थिवेदभंगो। णवरि किं चि विसेसो जाणिदव्वो। वेदेसु णाम अप्पप्पणो सत्थाणभंगो।

३९५. वचिजोगि--असच्चमोसवचिजोगि० तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-ओरालियकायजोगि० ओघं । ओरालियमिस्से तिरिक्खोघं । णवरि देवगदि० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--छदंसणा०--सादावे०-बारसक०-पंचणोक०--पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४--पसत्थ०--तस०४--थिरादिछ०--णिमि०--उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । वेउव्वि०--वेउव्वि०अंगो०--देवाणु० णि० बं० । तं तु० । तित्थय०

यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अयशःकीर्ति और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, दुर्भग और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँभाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसीप्रकार द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रिय जातिके समान है। तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

३९४. न्यग्रोध परिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। सब संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि कुछ विशेष जानना चाहिए। तीन वेदोंमें नामकर्मकी अपनी-अपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

३९५. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस पर्याप्तकोंके समान है। काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंमें ओघके समान है। औदारिक मिश्र काययोगमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और देवगत्यानुपूर्वीका नियमसे बन्धक होता है; किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

३६६. वेउव्वियका० आभिणिदंडओ जोदिसियपढमदंडओ व्व असाद० विदिय-दंडय० । णिद्दाणिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पचलापचलादीणं मिच्छ०--अणंताणुबंधि०४ णियमा बं० । तं तु० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० सिया० । तं तु० । मणुसग०--मणुसाणु०--उच्चा० सिया० संखेंज्जगु० । धुविगाणं णि० बं० संखेंज्जगु० । एवं थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ ।

३६७. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ०--सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०--ओरालि०--तेजा०--क०--ओरालि०अंगो०--वण्ण०४--अगु०४-पसत्थ०-

---

भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

३९६. वैक्रियिक काययोगमें आभिनिबोधिक प्रथमदण्डक ज्योतिषी देवोंके प्रथम दण्डकके समान है तथा असाता वेदनीय दूसरा दण्डक भी इसीप्रकार है। निद्रानिद्राकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव प्रचलाप्रचला आदि, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योत इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। मनुष्य गति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

३९७. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस०४-सुभग-सुस्सर--आदें०-णिमि०--पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । सादासाद०-चदुणोक०--दोगदि--समचदु०--वज्जरि०--दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर--सुभासुभ-जस०-अजस०--दोगोदं सिया० संखेंज्ज० । दोसंठा०--दोसंघ० सिया० संखेंज्जभा० । एवं णवुंस० । णवरि पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआयु० देवोघं ।

३९८. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--णवदंसणा०--मिच्छ०--सोलसक०--पुरिस०--भय--दु०--पंचिंदि०---ओरालि०--तेजा०--क०--ओरालि०अंगो०--वण्ण०४--अगु०४--पसत्थ०--तस०४--सुभग--सुस्सर--आदें०--णिमि०--पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । सादासाद०-चदुणोक०-दोगदि-वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-णीचुच्चा० सिया० संखेंज्जगु० । वज्जणारा० [सिया०]। तं तु० । एवं वज्जणारा० । चदुसंठा०-चदुसंघ०--अप्पसत्थ०--दूभग-दुस्सर-अणादें० णग्गोद-

---

त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, चार नोकषाय, दोगति, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराच-संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो संस्थान और दो संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच संस्थान, पाँच संहनन और दो आयुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है।

३९८. न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, चार नोकषाय, दो गति, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। चार संस्थान, चार संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। इतनी विशेषता है कि कुब्जक संस्थान, वामन संस्थान, अर्द्धनाराच संहनन और कीलक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंगो। णवरि खुज्जसंठा०-वामणसंठा०-अद्धणारा०-खीलिय० इत्थि० सिया० संखेज्ज-भाग०। पुरिस० सिया० संखेज्जगु०। हुंड०-असंपत्त०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० पुरिस० सिया० संखेज्जगु०। इत्थिवे०-णवुंस० सिया० संखेज्जभा०।

३६६. एइंदि० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेज्जगु०। सादासादा०-चदु-णोक०-उज्जो०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० सिया० संखेज्जगु०। णवुंस०-हुंडसं०-दूभग-अणादें० णि० बं० संखेज्जभाग०। आदाव० सिया०। तं तु०। थावरं णि० बं०। तं तु०। एवं आदाव-थावर०। एवं वेउव्वियमिस्स०। णवरि मिच्छत्त-

संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

३९९. एकेन्द्रिय जातिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, नीच गोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, असाता वेदनीय, चार नोकषाय, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेद, हुण्डसंस्थान, दुर्भग और अनादेय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। आतपका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। स्थावरका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार आतप और स्थावरकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पगदी यम्हि संखेज्जगुणब्भहियं तम्हि संखेज्जभागब्भहियं कादव्वं। सम्मत्तपगदीओ संखेज्जगुणब्भहियाओ।

४००. आहार०--आहारमिस्स० आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०--छदं--सणा०-सादा०-चदुसंज०-पंचणोक०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं०। तं तु०। तित्थय० सिया०। तं तु०। एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स। [तं तु०]।

४०१. असादा० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दु० देवगदि-पसत्थपणवीस-उच्चा०-पंचंत० णि० संखेज्जभाग०। हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस०-तित्थय० सिया० संखेज्जभाग०। अरदि--सोग--अथिर--असुभ--अजस० सिया०। तं तु०। एवं अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस०।

इसी प्रकार वैक्रियिक मिश्रकाययोगमें अपनी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ जहाँपर संख्यातगुणी अधिक कही हैं वहाँ पर संख्यातवां भाग अधिक कहनी चाहिए और सम्यक्त्व सम्बन्धी प्रकृतियाँ संख्यातगुणी अधिक कहनी चाहिए।

४००. आहारककाययोग और आहारक मिश्रकाययोगमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरण की जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४०१. असातावेदनीयको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि पच्चीस प्रशस्त प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और तीर्थंकर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यको अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०२. देवायु० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-चदुसंज०-पंचणोक०-देवगदि--पसत्थट्ठावीस--उच्चा०--पंचंत० णि० बं० संखेज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेज्जगु० ।

४०३. कम्मइग० ओरालियमिस्सभंगो। णवरि तित्थय० ज०ट्ठि०बं० मणुसगदिपंचगस्स सिया० संखेज्जगु० । देवगदि०४ सिया० । तं तु० पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभा० ।

४०४. इत्थि०–पुरिस० अभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०–चदुदंस०–सादावे०–चदुसंज०-पुरिस०–जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० जहण्णा० । एवमण्णमण्णाणं जहण्णा० । सेसाओ पगदीओ पंचिंदियभंगो ।

४०५. णवुंसगे खविगाओ इत्थिवेदभंगो । सेसा पगदी मूलोघं ।

४०६. अवगदवे० आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०--चदुदंस०--सादा०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० जहण्णा० । एवमण्णमण्णस्स जहण्णा० । चदुसंज० मूलोघं ।

---

४०२. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४०३. कार्मण काययोगी जीवोंका भङ्ग औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव मनुष्यगति पञ्चकका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। देवगति चतुष्कका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है,तो वह नियमसे अजघन्य पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४०४. स्त्रीवेद और पुरुषवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सबका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है।

४०५. नपुंसकवेदवाले जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मूलोघके समान है।

४०६. अपगतवेदवाले जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०७. कोध-माण-माया० ओघं । णवरि खवगपगदीणं इत्थिवेदभंगो । मोह० विसेसा० । [कोहे] कोधसंज० [ज०ट्ठि०बं०] तिण्णिसंज० णि०बं०णि० जहण्णा० । पुरिस० ओघं । माणे माणसंज० ज०ट्ठि०बं० दोण्णं संज० णि० बं० णि० जहण्णा० । मायाए मायसंज० ज०ट्ठि०बं० लोभसंज० णि० बं० णि० जहण्णा० । [लोभे लोभसंज०] मूलोघं ।

४०८. मदि०-सुद० तिरिक्खोघं । विभंगे आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०-णवदंसणा०--सादा०--मिच्छ०-सोलसक०--पंचणोक०--देवगदिपसत्थट्ठावीस--उच्चा०-पंचंत० णि० बं० । तं तु० । एवमेदाओ ऍक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

४०९. असादा० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दु०-पुरिस०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०--वण्ण०४--अगु०४—पसत्थ-तस०४-सुभग-

---

अवस्थामें वह नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। चार सञ्ज्वलनका भङ्ग मूलोघके समान है।

४०७. क्रोध, मान और माया कषायवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। मोहनीयकी कुछ विशेषता है। क्रोधकषायमें क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव तीन संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका भङ्ग ओघके समान है। मान कषायमें मान संज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव दो संज्वलनोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। माया कषायमें माया सञ्ज्वलनकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव लोभ सञ्ज्वलनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे जघन्य स्थितिका बन्धक होता है। लोभ कषायमें लोभ सञ्ज्वलनका भङ्ग मूलोघके समान है।

४०८. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है। किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है, तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है।

४०९. असातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुस्सर-आदें०-णिमि०पंचंतरा० णि० बं० संखेंज्जगु० । हस्स-रदि-तिण्णिगदि-ओरालि०-वेउव्वि०सरीर-दोअंगो०-वज्जरि०-तिण्णिआणु०-उज्जो०-थिर-सुभ-जस०-दोगोद० सिया० संखेंज्जगु० । अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । एवं अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० ।

४१०. इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । सादा०-हस्स-रदि-तिण्णिगदि-दोसरीर-समचदु०-दोअंगो०-वज्जरि०-तिण्णिआणु०-उज्जो०-थिरादितिण्णि--दोगोद०-सिया-संखेंज्जगु० । असादा०-अरदि-सोग दोसंठा०-दोसंघ०--अथिरादितिण्णि० सिया० संखेंज्जभा० । एवं णवुंस० । णवरि चदुसंठा०-चदुसंघ० सिया० संखेंज्जभा० ।

बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, तीन गति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच-संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४१०. स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, हास्य, रति, तीन गति, दो शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर आदि तीन और दो गोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, अरति, शोक, दो संस्थान, दो संहनन और अस्थिर आदि तीन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४११. णिरयायु० ज०ट्टि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-णीचा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । असाद०-णवुंस०-अरदि-सोग-णिरयगदि-हुंड०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ०-अथिरादिछ० णि० बं० संखेंज्जभाग० ।

४१२. तिरिक्खायु० ज०ट्टि०बं० तिरिक्खगदि याव मण०भंगो । मणुसायु० ज०ट्टि०बं० तिरिक्खायुभंगो ।

४१३. देवायु० ज०ट्टि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदि-पसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत०णि० बं० संखेंज्जगु० । इत्थिवे० सिया० संखेंज्जभा० । पुरिस० सिया० संखेंज्जगु० ।

४१४. णिरय० ज०ट्टि०बं० हेट्ठा उवरिं णिरयायुभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

४१५. तिरिक्खग० ज०ट्टि०बं० पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-णाम सत्थाणभंगो पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । तिरिक्खायु०

४११. नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, हुण्डसंस्थान, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिर आदि छह इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४१२. तिर्यञ्चायुकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके तिर्यञ्चगति आदि प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। मनुष्यायुकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग तिर्यञ्च आयुके समान है ।

४१३. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४१४. नरकगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे-ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग नरकायुके समान है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है ।

४१५. तिर्यञ्चगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय स्वस्थानके समान नामकर्मकी प्रकृतियाँ और पाँच अन्तरायका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णीचागो० णि० । तं तु० । उज्जो० सिया० । तं० तु० । एवं तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचागो० ।

४१६. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० हेट्ठा उवरिं तिरिक्खगदिभंगो । णाम० सत्थाणभंगो ।

४१७. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०–णवदंसणा०–मिच्छ०–सोलसक०–पुरिस०-भय-दु०–णाम सत्थाणभंगो पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । सादाबं०-हस्स-रदि-णीचुच्चागो० सिया० संखेंज्जगु० । असादा०–अरदि-सोग–अथिर-असुभ–अज० सिया० संखेंज्जदिभा० । तिरिक्ख-मणुसगदि-वज्जरि०-दोआणु०–थिर-सुभ-जसगि० सिया० संखेंज्जगु० । वज्जणारा० सिया० । तं तु० । एवं वज्जणारायण० ।

इनका नियमसे बन्धक होता है जो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। उद्योतका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४१६. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। नाम कर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

४१७. न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, स्वस्थान भङ्ग रूपसे कही गई नामकर्मकी प्रकृतियाँ और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। साता वेदनीय, हास्य, रति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। वज्रनाराचसंहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार वज्रनाराचसंहननकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१८. चदुसंठा०-चदुसंघ० हेट्ठा उवरिं णग्गोदभंगो। णाम अप्पप्पणो सत्थाणभंगो। णवरि विसेसो कादव्वो। अप्पसत्थविहा०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णग्गोदभंगो। णवरि किंचि विसेसो णादव्वो।

४१९. आभिणि०-सुद०-ओधि० आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणाणावरणादिखविगाणं ओघं। णिद्दाए ज०ट्ठि०बं० पंचणा० मणजोगिभंगो। एवं पचला०। असादा० ज०ट्ठि०बं० मणजोगिभंगो।

४२०. मणुसायु० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० असंखेंज्जगु०। णिद्दा-पचला०-अट्ठक०-भय-दु०-मणुसगदिपंच०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०-४ अगु०-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० णि० बं० संखेंज्जगु०। सादा०-जस० सिया० असंखेंज्जगु०। असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सिया० संखेंज्जगु०। हस्स-रदि-थिर-सुभ-तित्थय० सिया० संखेंज्जगु०।

---

४१८. चार संस्थान और चार संहननकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके नीचे ऊपरकी प्रकृतियोंका भङ्ग न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। नामकर्मकी अपनी-अपनी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता हो,उसे जानकर कहनी चाहिए। अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान है। किन्तु यहाँ जो विशेषता है, उसे जानकर कहनी चाहिए।

४१९. आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके चार ज्ञानावरण आदि क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। निद्राकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके पाँच ज्ञानावरण आदिका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार प्रचलाकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। असाता वेदनीयको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है।

४२०. मनुष्य आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगतिपञ्चक, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और निर्माण इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यात गुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, स्थिर, शुभ और तीर्थंकर प्रकृति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२१. देवायु० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०--चदुदंस०--सादा०-चदुसंज०--पुरिस०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । णिद्दा-पचला-अट्ठकसा०-हस्स-रदि-भय-दुगु०-देवगदिपसत्थट्ठावीसं णि० बं० संखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० ।

४२२. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० असंखेंज्जगु० । णिद्दा-पचला-अट्ठक०--हस्स-रदि-भय-दुगुं० णि० बं० संखेंज्जगु० । णाम० सत्थाणभंगो ।

४२३. देवगदि० ज०ट्ठि०बं० खविगाओ ओघं । णाम० सत्थाणभंगो । हस्स-रदि-भय-दु० णि० बं० संखेंज्जगु० ।

४२४. मणपज्जव-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार० ओधिभंगो । सुहुमसांपराइ० ओघं । संजदासंजद० आभिणिबो० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०-छदंसणा०-सादावे०--अट्ठकसा०--पुरिस०-हस्स--रदि-भय-दु०-देवगदिपसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० ।

इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४२१. देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव, पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा और देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४२२. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है ।

४२३. देवगतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवके क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है । हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है ।

४२४. मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत और परिहारविशुद्धिसंयत इनका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । सूक्ष्म साम्पराय संयत जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । संयतासंयत जीवोंमें अभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय, आठ कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है । किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तं तु० । तित्थय० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं तु० ।

४२५. असादा० ज०ट्ठि०बं० हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० सिया० संखेंज्जगु० । एवं तित्थय० । अरदि-सोग--अथिर--असुभ--अजस० सिया० । तं तु० । धुविगाणं णि० बं० संखेंज्जगु० । एवं अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० ।

४२६. असंजद० तिरिक्खोघं । णवरि तित्थय० ज०ट्ठि०बं० धुवपगदीओ देवगदिसंजुत्ताओ पसत्थणामपगदीओ यदि बं० संखेंज्जगु० । चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदं ओघं । ओधिदं० ओधिणाणिभंगो । किण्ण-णील-काऊ० तिरिक्खोघभंगो । णवरि तित्थय० असंजदस्स० संजदाभिमुहस्स देवगदिसंजुत्ताओ पसत्थाओ णि०

अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए । किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है ।

४२५. असाता वेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है । ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । इसी प्रकार अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्तिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

४२६. असंयत जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिको जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुव प्रकृतियोंको देवगतिसंयुक्त बाँधता है । तथा नामकर्मकी प्रशस्त प्रकृतियोंको यदि बाँधता है तो संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है । चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है । अचक्षुदर्शनवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । अवधिदर्शनवाले जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके अभिमुख हुए असंयत जीवके तीर्थंकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जगु० । किण्ण०-णील० मणुसो सत्थाणे विसुज्झमाणो तित्थयरस्स असंजद-सामित्तेण असंजदभंगो । काऊए तित्थय० णिरयोघं ।

४२७. तेऊए आभिणिबो० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०--छदंसणा०--सादा०--चदु-संज०-पंचणोक०--देवगदि--पसत्थट्ठावीस--उच्चा०-पंचंत णि० । तं तु० । आहारदुगं तित्थयरं सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एक्कमेक्कस्स । तं० तु० ।

४२८. दंसणतिय-असादा०--मिच्छ०-बारसक०-अरदि-सोग० मणजोगिभंगो । इत्थिवे० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग--सुस्सर-आदे०-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । दोगदि-दोसरीर--दोअंगो०-दोआणु० सिया० संखेंज्जगु० । सादा-

---

प्रकृतिका जघन्य स्थितिबन्ध होता है । तथा देवगति संयुक्त प्रशस्त प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। कृष्ण और नील लेश्यामें मनुष्य स्वस्थानमें विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ तीर्थंकर प्रकृतिका बन्धक होता है। जिसके असंयत स्वामित्वकी अपेक्षा असंयतके समान भङ्ग है । कापोत लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है ।

४२७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें अभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है । यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४२८. तीन दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, अरति और शोक इनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष मनोयोगी जीवोंके समान है। स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और दो आनुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है । यदि बन्धक होता है तो नियमसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-समचदु०-वज्जरि०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० सिया० संखेंज्जगु० । णग्गोद०-सादि०-वज्जरि०-णारा० सिया० संखेंज्जभा० । एवं णवुंस० । णवरि चदुसंठा०-चदुसंघ [सिया० संखेज्जभा० ।]

४२६. तिरिक्ख-मणुसायु० देवभंगो। देवायु० ज० ट्ठि० बं० पंचणा० छदंसणा०-सादावे०-बारसक०हस्स-रदि-भय-दु०-देवगदिपसत्थट्ठावीस-उच्चा०-पंचंत० णि० बं० संखेंज्जगु० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-पुरिस० सिया० संखेंज्जगु० । इत्थिवे० सिया० संखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखेंज्जगु० ।

४३०. मणुस० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-बारसक०-पंचणोक०-णामसत्थाणभंगो उच्चा०-पंचंत०-णि० बं० संखेंज्जगु० । तित्थय० सिया० संखें-ज्जगु० । एवं ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु० । तिरिक्खग०-

---

अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थान, स्वातिसंस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन और नाराचसंहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि चार संस्थान और चार संहनन इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४२६. तिर्यञ्च आयु और मनुष्य आयुका भङ्ग देवोंके समान है। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार और पुरुषवेद इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। स्त्रीवेदका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३०. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँचनोकषाय, नामकर्मकी स्वस्थानके समान प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। तीर्थंकर प्रकृतिका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार औदारिक शरीर, औदारिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थवि०-थावरं सोधम्म-भंगो। एवं पम्माए वि।

४३१. सुक्काए मणजोगिभंगो। णवरि इत्थि०-णवुंस०-मणुसगदि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-अप्पसत्थवि०-दूभग-दुस्सर-अणादे० जहण्णसण्णियासे संजम०-सम्मत्त०-मिच्छ०पाओग्गाओ पगदीओ णादूण सण्णियासेदव्वं।

४३२. भवसिद्धि० ओघं। अब्भवसिद्धिया० मदिभंगो। सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० ओधिभंगो। णवरि वेदगसं० जहण्णगाणि पमत्ता अप्पमत्ता करेंति।

४३३. मणुसग० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०-छदंसणा० वेदगे करेदि। तण्णादूण सण्णियासेदव्वं तेउभंगो।

४३४. [सासणे आभिणिबो०ज०ट्ठि०बं०] चदुणा०--णवदंसणा०--सादा०--सोलसक०--पंचणोक०--पंचिंदि०-तेजा०--क०--समचदु०--वण्ण०४-अगु०४--पसत्थ०-तस०४--थिरादिछ०--णिमि०--पंचंत० णि० बं०। तं तु०। तिण्णिगदि--दोसरीर--

---

आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति और स्थावर इनका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इसीप्रकार पद्मलेश्यामें भी जानना चाहिए।

४३१. शुक्ल लेश्यामें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय तथा जघन्य सन्निकर्षमें संयम, सम्यक्त्व और मिथ्यात्वके योग्य प्रकृतियोंको जानकर सन्निकर्ष कहना चाहिए।

४३२. भव्य जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। अभव्य जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है। सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि वेदक सम्यक्त्वमें प्रमत्त और अप्रमत्त जीव जघन्य सन्निकर्ष करते हैं।

४३३. मनुष्यगतिकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण और छह दर्शनावरणको वेदक सम्यक्त्वमें करता है। उसे जानकर पीतलेश्याके समान सन्निकर्ष साध लेना चाहिए।

४३४. सासादन सम्यक्त्वमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु-चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। तीन गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोअंगो०-वज्जरि०--तिरिणआणु०-उज्जो०--णीचुच्चागो० सिया० । तं तु० । एव-मेदाओ ऍक्कमेॅक्कस्स । तं तु० ।

४३५. असादा० ज०ट्ठि०बं० धुविगाओ णि० बं० संखेॅज्जभाग० । अरदि-सोग-अथिर असुभ-अजस० सिया० । तं तु० । हस्स--रदि--तिरिणगदि-दोसरीर-दोअंगो०--वज्जरिस०--तिरिणआणु०--उज्जो०--थिर--सुभ--जस०---णीचुच्चा० सिया० संखेॅज्जभा० ।

४३६. इत्थिवे० असादभंगो । णवरि तिरिणसंठा०--तिरिणसंघ० सिया० संखेॅज्जदिभा० । णवुंसगे इत्थिभंगो । णवरि तिरिक्ख-मणुसगदि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु० सिया० संखेॅज्जदिभा० । सेसाओ परावत्तमाणियाओ सिया०

नाराचसंहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिकतक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका परस्पर सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४३५. असातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवप्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियम-से जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, तीन गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभ-नाराचसंहनन, तीन आनुपूर्वी, उद्योत, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३६. स्त्रीवेदका भङ्ग असातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन संस्थान और तीन संहननका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन और दो आनुपूर्वीका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थिति-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जगु० । एवं मणुस्सायु० । देवायु० ज०ट्ठि०बं० णाणावरणादि० णि० अज० संखेज्जगु० ।

४३७. तिरिक्खायु० ज०ट्ठि०बं० धुविगाओ णि० बं० संखेज्जगु० । सेसाओ परियत्तमाणियाओ सिया० संखेज्जगु० । एवं मणुसायुगं पि । देवायु० ज०ट्ठि०बं० णाणावरणादि० णि० बं० संखेज्जगु० ।

४३८. णग्गोद० ज०ट्ठि०बं० पंचणा०–णवदंसणा०–सोलसक०–भय–दु०–पंचिंदि०–तेजा०–क० णि० बं० संखेज्जभा० । असादा०–हस्स–रदि–अरदि–सोग–णीचुच्चा० सिया० संखेज्जभा० । पुरिस० णियमा संखेज्जभा० । णाम० सत्थाण-भंगो । एवं णग्गोदभंगो तिण्णिसंठा०-चदुसंघ०-अप्पसत्थवि०-दूभग-दुस्सर अणादें० ।

४३९. सम्मामिच्छ० आभिणिबोधि० ज०ट्ठि०बं० चदुणा०–छदंसणा०–सादा०–बारसक०–पंचणोक०–पंचिंदि०–तेजा०–क०–समचदु०–वण्ण०४-अगु०४-

---

का बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ज्ञानावरणादिका नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३७. तिर्यञ्च आयुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। शेष परावर्तमान प्रकृतियोंका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार मनुष्यायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। देवायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ज्ञानावरण आदिका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है।

४३८. न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, और कार्मण शरीर इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। असातावेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, नीचगोत्र और उच्चगोत्र इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। पुरुषवेदका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है। नामकर्मकी प्रकृतियोंका भङ्ग स्वस्थानके समान है। इसी प्रकार न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानके समान तीन संस्थान, चार संहनन, प्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

४३९. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिक ज्ञानावरणकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव चार ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय, बारह कषाय, पाँच नोकषाय, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनका नियमसे बन्धक होता है, किन्तु वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पसत्थ०--तस०४-थिरादिछ०--णिमि०-उच्चा०--पंचंत० णि० बं० । तं तु० । दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०--वज्जरि०--दोआणु० सिया० । तं तु० । एवमेदाओ एँकमेकस्स । तं तु० ।

४४०. असादा० ज०ट्ठि०बं० धुविगाणं णि० बं० संखेंज्जगु० । हस्स--रदि-दोगदि--दोसरीर--दोअंगो०--वज्जरि०--दोआणु०--थिर--सुभ-जस० सिया० बं० संखेंज्जगु० । अरदि-सोग-अथिर-अजस० सिया० । तं० तु० ।

४४१. मिच्छादिट्ठी० मदि०भंगो। सण्णि० मणुसभंगो। असण्णि० तिरिक्खोघं। णवरि णिरयायु० ज०ट्ठि०बं० णिरयगदि--वेउव्वि०--वेउव्वि०अंगो०--णिरयाणु० णि० बं० संखेंज्जभा० । सेसाणं संखेंज्जगु० । एवं देवायु० । आहार० ओघं ।

नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन और दो आनुपूर्वी इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार इन सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु ऐसी अवस्थामें वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य, एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४४०. असातावेदनीयकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। हास्य, रति, दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है। यदि बन्धक होता है तो नियमसे संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। अरति, शोक, अस्थिर और अयशःकीर्ति इनका कदाचित् बन्धक होता है और कदाचित् अबन्धक होता है यदि बन्धक होता है तो वह जघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है और अजघन्य स्थितिका भी बन्धक होता है। यदि अजघन्य स्थितिका बन्धक होता है तो नियमसे जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य,एक समय अधिकसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक तक स्थितिका बन्धक होता है।

४४१. मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। संज्ञी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। असंज्ञी जीवोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नरकायुकी जघन्य स्थितिका बन्धक जीव नरकगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनका नियमसे बन्धक होता है जो नियमसे अजघन्य संख्यातवाँ भाग अधिक स्थितिका बन्धक होता है तथा शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणी अधिक स्थितिका बन्धक होता है। इसी प्रकार देवायुकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणाहार० कम्मइ० भंगो ।

एवं जहण्णसण्णियासो समत्तो ।

एवं सण्णियासो समत्तो ।

४४२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०–जह० उक्क० । उक्कस्सए पगदं । तं तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिभंगो कादव्वो । एदेण अट्ठपदेण दुवि०–ओघे० आदे० । ओघे० णिरय–मणुस–देवायूणं उक्कस्सा० अणुक्कस्सा० अट्ठभंगो । सेसाणं पगदीणं उक्कस्स०-अणुक्कस्सा० तिण्णिभंगो । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं पुढवि०–आउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं च बादर०-बादरवणप्फदिपत्तेय०-कायजोगि--ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०--णवुंस०--कोधादि०४--मदि०--सुद०--असंज०--अचक्खु०--किण्ण०-णील०-काउ०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि०-आहार०-अणाहारगे त्ति ।

४४३. एइंदिय--बादरपुढवि०--आउ०-तेउ०-वाउ०--बादरवणप्फदिपत्तेय०अप--ज्जत्त--सव्वसुहुम-वणप्फदि-णियोद० आयूणि दोण्णि ओघं । सेसाणं उक्क० अणुक्क० बंधगा य अबंधगा य ।

४४४. मणुसअपज्जत्त०--ओरालियमि०---कम्मइग०--अणाहार० देवगदि०४--तित्थय० वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगद०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-

आहारक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है तथा अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार जघन्य सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

इस प्रकार सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

४४२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसके विषयमें यह अर्थपद मूल प्रकृतिबन्धके समान कहना चाहिए । इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे नरकायु, मनुष्यायु और देवायुके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धकके आठ भङ्ग होते हैं । शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिबन्धके तीन भङ्ग होते हैं । इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और इनके बादर, बादरवनस्पतिकायिकप्रत्येक, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

४४३. एकेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, बादरजलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिकअपर्याप्त, बादरवायुकायिकअपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सब सूक्ष्म, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके दो आयु ओघके समान हैं । शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं ।

४४४. मनुष्य अपर्याप्त, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क और तीर्थंकर प्रकृतिके तथा वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूक्ष्मसाम्परायिक संयत, उपशमसम्यग्दृष्टि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति सव्वपगदीणं उक्कस्सा० अणुक्कस्सा० अट्ठभंगा।

४४५. बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्जत्ता० देवगदिभंगो। आयु० णिरयायुभंगो। सेसाणं णिरयाओ याव सण्णि त्ति ओघं। एवमुक्कस्सं समत्तं

४४६. जहण्णए पगदं। तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिभंगो। एदेण अट्ठपदेण दुवि०--ओघे० आदे०। ओघे० खवगपगदीणं तिण्णिआयु--वेउव्वियछक्क--तिरिक्खगदि०४-आहारदुग-तित्थय० जह० अजह० उक्कस्सभंगो। सेसाणं पगदीणं जह० अज० अत्थि बंधगा य अबंधगा य। एवं ओघभंगो कायजोगि--ओरालियका०--णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारए त्ति।

४४७. तिरिक्खगदीए तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० उक्कसभंगो। सेसाणं जह० अज० अत्थि बंधगा य अबंधगा य। एवं तिरिक्खोघं ओरालियमि०-कम्मइ०-मदि०-सुद०-असंजद०-किण्ण०-णील०-काउले०-अब्भवसि०--मिच्छादि०--असण्णि०--अणाहारग त्ति। णवरि ओरालियमिस्स-कम्मइ-अणाहारगे देवगदिपंचगं उक्कस्सभंगो।

सासादन सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिबन्धके आठ भङ्ग होते हैं।

४४५. बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिकपर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके देवगतिके समान भङ्ग है। तथा आयुका नरकायुके समान भङ्ग है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक सब मार्गणाओंमें ओघके समान भङ्ग है।

इस प्रकार उत्कृष्ट भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ।

४४६. जघन्यका प्रकरण है। उस विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृतिस्थिति बन्धके समान है। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा क्षपक प्रकृतियाँ, तीन आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगति चार, आहारकद्विक और तीर्थंकरकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य स्थितिबन्धके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४४७. तिर्यञ्चगतिमें तीन आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य स्थितिबन्धके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं। इस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंके देवगति पञ्चकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४८. एइंदिएसु [मणुसग०-] मणुसाणु०-तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ओघो। सेसं उक्कस्सभंगो। पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तिरिक्खायु० ओघं। सेसं उक्कस्सभंगो। बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय० अपज्जत्त-सव्वसुहुम-वणप्फदि-णियोदे० मणुसायु० ओघं। सेसाणं अत्थि बंधगा य अबंधगा य। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति उक्कस्सभंगो।

एवं जहण्णयं समत्तं।

४४९. भागाभागं दुविधं–जहण्णयं उक्कस्सयं च। उक्कस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघेण तिण्णिआयु०–वेउव्वियछ०–तित्थय० उक्क०ट्ठि०बंधगा सव्वजीवाणं केवडियो भागो? असंखेज्जदिभागो। अणु०ट्ठि०बंधगा सव्वजी० के०? असंखेज्जा भागा। आहार०–आहार०अंगो० उ०ट्ठि०बं० सव्वजी० के०? संखेज्जदिभा०। अणु०ट्ठि०बं० के० [1]संखेज्जा भा०। सेसाणं पगदीणं उ०ट्ठि०बं० सव्वजी० के०? [2]अणंतभो भागो। अणु०ट्ठि०बं० सव्व० के०? अणंता भागा। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि०-ओरालि०–ओरालियमि०–कम्मइ०–णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंजद०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०–भवसिद्धि०–अब्भवसि०–मिच्छादि०-

४४८. एकेन्द्रियोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर-जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग ओघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सब सूक्ष्म, वनस्पति कायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीव होते हैं और अबन्धक जीव होते हैं। नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक शेष सब मार्गणाओंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

इस प्रकार जघन्य भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ।

४४९. भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। इसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन आयु, वैक्रियिक छह और तीर्थङ्कर प्रकृतिके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। शेष सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? अनन्त बहुभाग प्रमाण हैं। इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले,

१ मूलप्रतौ संखेज्जदिभाग० इति पाठः। २ मूलप्रतौ अणंता भागा इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहार०-अणाहारग त्ति। णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदिपंचगस्स आहारसरीरभंगो। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति ए असंखेंज्जजीविगा तेसिं तित्थयरभंगो। एवं ए संखेंज्जजीविगा तेसिं आहारसरीरभंगो। एइंदिय-वणप्फदि-णियोदाणं तिरिक्खायु० ओघं। सेसाणं पगदीणं मणुसअपज्जत्तभंगो।

एवं उक्कस्सभागाभागं समत्तं।

४५०. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० खवगपगदीणं[1] तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ज०ट्ठि०बं० सव्व० केव? अणंतओ भागो। अज०ट्ठि०बं० सव्व० केव०? [2]अणंता भा०। आहार०-आहार०अंगो उक्कस्सभंगो। सेसाणं पगदीणं ज०ट्ठि०बं० सव्व० केव०? असंखेंज्जदिभागो। अज०ट्ठि०बं० सव्व० केव०? असंखेंज्जा भागा। एवं ओघभंगो कायजोगि०-ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसिद्धि०-आहारग त्ति।

४५१. तिरिक्खेसु तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ओघं। सेसाणं पगदीणं देवगदिभंगो। एवं तिरिक्खोघभंगो एइंदि०-ओरालियमि०-कम्मइ०-मदि०-

भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकका भङ्ग आहारक शरीरके समान है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक जिन मार्गणाओंमें जो असंख्यात जीव-राशियाँ हैं, उनका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है। तथा इसी प्रकार जो संख्यात जीव-राशियाँ हैं, उनका भङ्ग आहारक शरीरके समान है। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके तिर्यञ्चायुका भङ्ग ओघके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट भागाभाग समाप्त हुआ।

४५०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे क्षपक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रके जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? अनन्त बहुभाग प्रमाण हैं। आहारक शरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। इस प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

४५१. तिर्यञ्चोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भंग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग देवगतिके समान है। इस प्रकार सामान्य

१. मूलप्रतौ —गदीणं तिरिक्खगदीणं तिरिक्ख—इति पाठः। २. मूलप्रतौ अणंतभा० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि०-अणाहारग त्ति। णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० आहारसरीरभंगो। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति ए संखेज्जजीविगा ए अ असंखेज्जजीविगा तेसिं जह० अज० उक्कस्सभंगो।

एवं भागाभागं समत्तं।

४५२. परिमाणं दुवि०-जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघेण णिरयायु०-वेउव्वियछ० उक्क० अणु० ट्ठिदिबंधगा केत्तिया? असंखेज्जा। तिरिक्खायु० उ०ट्ठि०बं० केत्तिया? संखेज्जा। अणु०ट्ठि०बं० केत्तिया? अणंता। मणुसायु०-देवायु०-तित्थय० उक्क०ट्ठि०बं० केत्तिया? संखेज्जा। अणु०ट्ठि० केत्ति०? असंखेज्जा। आहा०२-उक्क० अणु० ट्ठि०बं० केत्ति०? संखेज्जा। सेसाणं पगदीणं उ०ट्ठि०बं० केत्ति०? असंखेज्जा। अणु०ट्ठि०बं० केत्ति०? अणंता। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालि०मि०-कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-आहार०-अणाहारग त्ति। णवरि किण्ण० णील०[1]-तित्थय० उ० अणु० ट्ठि०बं०

तिर्यञ्चोंके समान एकेन्द्रिय, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क और तीर्थंकर प्रकृतिका भंग आहारक शरीरके समान है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञीतक जितनी मार्गणाएँ हैं इनमें जो संख्यात जीव-राशियाँ हैं और जो असंख्यात जीव-राशियाँ हैं, उन सबमें जघन्य और अजघन्यका भंग उत्कृष्टके समान है।

इस प्रकार जघन्य भागाभाग समाप्त हुआ।

इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

४५२. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे नरकायु और वैक्रियिक छहकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। मनुष्यायु, देवायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। आहारक द्विककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं? अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीललेश्यामें

१. मूलप्रतौ णील० ओरालिय तित्थय० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्जा। ओरालियमि०--कम्मइ०--अणाहार० देवगदि०४--तित्थय० उक्क० अणु० ट्ठि०बं० केत्ति० ? संखेंज्जा।

४५३. णिरएसु मणुसायु० उ० अणु० ट्ठि०बं० संखेंज्जा। सेसाणं उक्क० अणु० के० ? असंखेंज्जा। एवं सव्वणिरय-सव्वदेव०। णवरि सव्वट्ठसि० सव्वपगदीणं उ० अणु० ट्ठि०बं० केत्ति० ? संखेज्जा।

४५४. पंचिंदियतिरिक्ख०३तिण्णिआयु० उ०ट्ठि०बं० केत्ति०? संखेंज्जा। अणु०-ट्ठि०बं० केत्ति० ? असंखेंज्जा। सेसाणं पगदीणं उ० अणु० ट्ठि०बं० केत्तिया ? असंखेंज्जा। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० मणुसायु० उ०ट्ठि०बं० केत्ति०? संखेंज्जा। अणु०-ट्ठि०बं० केत्ति० ? असंखेंज्जा। सेसाणं उ० अणु० ट्ठि०बं० केत्ति० ? असंखेंज्जा। एवं मणुसअपज्जत्त-सव्वविगलिंदिय० चदुण्हं कायाणं बादरवणप्फदिपत्तेय०।

४५५. मणुसेसु दोआयु०-वेउव्वियछ०-आहार०२-तित्थय० उ० अणु० ट्ठि०बं० के० ? संखेंज्जा। सेसाणं उ०ट्ठि०बं० के०? संखेंज्जा। अणु०ट्ठि०बं० केत्तिया ? असंखेंज्जा। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सव्वाणं पगदीणं दो पदा संखेंज्जा।

४५६. एइंदिय--वणप्फदि--णियोदेसु तिरिक्खायु० उक्क० असंखेंज्जा। अणु०

तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं।

४५३. नारकियोंमें मनुष्यायुकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी और सब देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थ-सिद्धिमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं।

४५४. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें तीन आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, चार स्थावर काय और बादर वनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए।

४५५. मनुष्योंमें दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके दो पदवाले जीव संख्यात हैं।

४५६. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं। मनुष्यायुकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंता । मणुसायु० उक्क० अणु० ओघं । सेसाणं उक्क० अणु० अणंता ।

४५७. पंचिंदिय--तसपज्जत्ता०२ तिण्णि आयु० तित्थय० उ०ट्ठि०बं० संखेंज्जा । अणु० असंखेंज्जा । आहार०२ उक्क० अणु० संखेंज्जा । सेसाणं उक्क० अणु० असंखेंज्जा । एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति । पंचिंदि०-तसअपज्जत्त० तिरिक्खभंगो ।

४५८. वेउव्वि०-वेउव्वि० [मिस्स०] देवोघं । णवरि मिस्से तित्थय० दो वि पदा संखेंज्जा । आहार०--आहारमिस्स--अवगदवे०--मणपज्जव०--संजद--सामाइय--छेदोव०-परिहार०-सुहमसं० सव्वपगदीणं उक्क० अणु० ट्ठि०बं० के० ? संखेंज्जा ।

४५६. विभंगे तिण्णिआयु० उ०ट्ठि०बं० के० ? संखेंज्जा ! अणु० के० ? असंखेंज्जा । सेसाणं उक्क० अणु० ट्ठि०बं० केत्ति० ? असंखेंज्जा । आभि०-सुद०-ओधि० मणुसायु०--आहार०२ दो वि पदा संखेंज्जा । देवायु०--तित्थय० उ०ट्ठि०बं केत्ति० ? संखेंज्जा । अणु०असंखेंज्जा । सेसाणं उ० अणु० ट्ठि०बं० के० ? असंखेंज्जा । एवं ओधिदं०-सम्मादि०-वेदगसम्मा०-[उवसमसम्मा० ।] णवरि उवसमस० आहार०२-तित्थय० दो वि पदा संखेंज्जा। संजदासंजदेसु देवायु० उ०ट्ठि०बं० संखेंज्जा। अणु०

उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव ओघके समान हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं ।

४५७. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें तीन आयु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारक द्विककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी चक्षुदर्शनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग हैं।

४५८. वैक्रियिक काययोगी और वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक मिश्रकाययोगमें तीर्थंकर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। आहारक काययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामयिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत और सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं।

४५९. विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें तीन आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु और आहारक द्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। देवायु और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें आहारक द्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। संयतासंयत जीवोंमें देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जा। तित्थय० दो वि पदा संखेज्जा। सेसाणं उक्क० अणु०ट्ठि०ब० असंखेज्जा।

४६० तेउ-पम्मासु मणुसायु० देवोघं। देवायु० उ०ट्ठि०ब० संखेज्जा। अणु० असंखेज्जा। सेसाणं उ० अणु०ट्ठि०बं० के०? असंखेज्जा। सुक्काए खइगे दोआयु०-आहार०२ दो पदा संखेज्जा। सेसाणं उक्क० अणु० असंखेज्जा। सासणे तिरिक्ख-देवायु० उक्क० संखेज्जा। अणु०ट्ठि०बं० असंखेज्जा। मणुसायु० दो वि पदा संखेज्जा। सेसाणं उक्क० अणु० असंखेज्जा। सम्मामिच्छा० सव्वाणं उक्क० अणु० असंखेज्जा। असण्णीसु णिरय-देवायु० उक्क० अणु० असंखेज्जा। तिरिक्खायु० उक्क० असंखेज्जा। अणु० अणंता। सेसाणं ओघं।

एवं उक्कस्सपरिमाणं समत्तं।

४६१ जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जस०-उच्चा०-पंचंत० जह०ट्ठि०बंधगा केत्तिया? संखेज्जा। अज० केत्ति०? अणंता०। तिण्णि आयु०-वेउव्वियछ० जह० अज० असंखेज्जा। आहार० २ उक्कस्सभंगो। तित्थय० ज०ट्ठि० संखेज्जा। अज० असंखेज्जा। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० जह० असंखेज्जा। अज० अणंता। सेसाणं जह० अज०

स्थितिके बंधक जीव असंख्यात हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बंधक जीव असंख्यात हैं।

४६०. पीत और पद्म लेश्या में मनुष्यायुका भंग सामान्य देवोंके समान है। देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। शुक्ल लेश्या और क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयु और आहारक द्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीव असंख्यात हैं। सासादन सम्यक्त्वमें तिर्यञ्चायु और देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। असंज्ञी जीवोंमें नरकायु और देवायुकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बंधक जीव असंख्यात हैं। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघ के समान है।

इस प्रकार उत्कृष्ट परिमाण समाप्त हुआ।

४६१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, साता वेदनीय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। तीन आयु और वैक्रियिक छहकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारक द्विकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंता । एवं ओघभंगो कायजोगि–ओरालि०–णवुंस०–कोधादि०४–अचक्खु०–भवसि०–आहारगे त्ति । णवरि ओरालि० तित्थय० उक्कस्सभंगो ।

४६२ णिरएसु उक्कस्सभंगो । तिरिक्खेसु तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-तिरिक्खगदि ४ ओघं । सेसाणं जह० अज० अणंता । सव्वपंचिंदियतिरिक्खेसु सव्वपगदीणं जह० अज० असंखेज्जा । एवं पंचिंदिय०तिरिक्खभंगो सव्वअपज्जत्त--विगलिंदि० चदुण्णं कायाणं बादरवणप्फदिपत्ते० ।

४६३ मणुसेसु खविगाणं जह० संखेज्जा । अज० असंखेज्जा । दो आयु–वेउव्वियछ०--आहार०२–तित्थय० दो पदा संखेज्जा । सेसाणं दो वि पदा असंखेज्जा । मणुसपज्जत्त--मणुसिणीसु उक्कस्सभंगो ।

४६४ एइंदि० तिरिक्खगदि–तिरिक्खाणु–उज्जो०–णीचा० ओघं । सेसाणं जह० अज० अणंता । एवं सव्ववणप्फदि–णियोदाणं । णवरि तिरिक्खगदि०४ जह० अज० अणंता ।

४६५ पंचिंदिय–तस०२ खविगाणं तित्थय० जह० संखेज्जा । अज० असंखेज्जा । आहार०२ ओघं । सेसाणं जह० अज० असंखेज्जा ।

४६६ पंचमण-तिण्णिवचि० पंचणा०–णवदंसणा०--सादासाद०--चदुवीसमोह०-

अनन्त हैं । इसीप्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि औदारिक काययोगमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है ।

४६२. नारकियोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है । तिर्यञ्चों में तीन आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगति चारका भंग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्त हैं । सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चके समान सब अपर्याप्त, विकलेन्द्रिय, चारकायवाले और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंके जानना चाहिए ।

४६३. मनुष्योंमें क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं । दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदवाले जीव संख्यात हैं । तथा शेष प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है ।

४६४ एकेंद्रियोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बंधक जीव अनंत हैं । इसी प्रकार सब वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बंधक जीव अनंत हैं ।

४६५ पंचेंद्रिय, पंचेंद्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें क्षपक प्रकृतियों और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं । आहारद्विकका भंग ओघके समान है । तथा शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं ।

४६६. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवगदि--पंचिंदिय०--वेउव्विय--तेजा०--क०--समचदु०--वेउव्वि०अंगो०--वण्ण०४--देवाणु०--अगु०४--पसत्थ-०तस०४--थिराथिर-सुभासुभ-सुभग - सुस्सर - आदेज्ज-जस०-अजस०--णिमि०--तित्थय०--उच्चा०--पंचंत० जह० संखेज्जा । अज० असंखेज्जा । आहारदुगं ओघं । सेसाणं दो वि पदा असंखेज्जा । वचिजो०-असच्चमो०-इत्थि०-पुरिस० पंचिंदियभंगो । णवरि इत्थि० तित्थय० जह० अज०संखेज्जा ।

४६७ ओरालियमि०-कम्मइ०--अणाहार० तिरिक्खोघं । णवरि देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्सभंगो । वेउव्वि०-वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगद०-मणपज्जव०--संजद--सामाइ०-छेदोव०-परिहार०-सुहुमसंप० उक्कस्सभंगो । मदि-सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि० तिरिक्खोघं । णवरि असंजद० तित्थय० जह० संखेज्जा । अज० असंखेज्जा । किण्ण०--णील० तित्थय० जह० संखेज्जा । काऊए तित्थय० दो वि पदा असंखेज्जा ।

४६८. विभंगे पंचणा०--णवदंसणा०--सादा०--मिच्छ०--सोलसक०--पंचणोक०--देवगदि--पसत्थट्ठावीस--उच्चा०--पंचंत० जह० संखेज्जा । अज० असंखेज्जा । सेसाणं जह०

सातावेदनीय, असातावेदनीय, चौबीस मोहनीय, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आंगोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, अस्थिर शुभ, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं, तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारक द्विकका भंग ओघके समान है, तथा शेष प्रकृतियोंके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं। वचनयोगी, असत्यमृषावचनयोगी, स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवों में भंग पञ्चेन्द्रियों के समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदियोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं।

४६७ औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्क और तीर्थंकर प्रकृति का भंग उत्कृष्टके समान है। वैक्रियिक काययोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी अपगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भंग उत्कृष्टके समान है। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवों में अपनी सब प्रकृतियोंका भंग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि असंयतोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। कृष्ण और नील लेश्यामें तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बंधक जीव संख्यात हैं। कापोत लेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिके दोनों ही पदवाले जीव असंख्यात हैं।

४६८. विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, देवगति आदि प्रशस्त अट्ठाईस प्रकृतियाँ, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज० असंखेज्जा। आभि-०सुद०-ओधि०-मणुसायु०-आहारदुगं उक्कस्सभंगो। मणुसग-दिपंचगं देवायु० ज० अज० असंखेज्जा। सेसाणं ज० संखेज्जा। अज० [असंखेज्जा]। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०। णवरि खइगे दो आयु० उवसमे यथासंखाए तित्थय० उक्कस्सभंगो। चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो।

४६९. तेऊए इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्ख--देवायु--तिरिक्खगदि०४--मणुसगदिपंचग-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-आदाव०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें० ज० अज० असंखेज्जा। सेसाणं ज० संखेज्जा। अज० असंखेज्जा। मणुसायु-आहारदुगं दो वि पदा संखेज्जा। एवं पम्माए वि। णवरि एइंदियतिगं वज्ज। सुक्काए इत्थि०-णवुंस०-मणुसगदिपंचग-पंचसंठा०- पंचसंघ०- अप्पसत्थ०- दूभग - दुस्सर -- अणादें० णीचा० ज० अज० असंखेज्जा। दोआयु--आहारदुगं उक्कस्सभंगो। सेसाणं जह० संखेज्जा। अज० असंखेज्जा।

४७०. सासण०-सम्मामि० पसत्थाणं ज० अज० असंखेज्जा। मणुसायु० उक्कस्सभंगो। सण्णीसु खविगाणं देवगदि०४-तित्थय० जह० संखेज्जा। अज०

असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु और आहारकद्विकका भंग उत्कृष्टके समान है। मनुष्यगति पञ्चक और देवायुकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयु और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें क्रमसे तीर्थंकर प्रकृतिका भंग उत्कृष्टके समान है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भंग त्रस पर्याप्तकोंके समान है।

४६६. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चायु, देवायु, तिर्यञ्चगति चतुष्क, मनुष्यगतिपंचक, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, आतप, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायु और आहारकद्विकके दोनों ही पदवाले जीव संख्यात हैं। इसी पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है एकेन्द्रियत्रिकको छोड़कर कहना चाहिए। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मनुष्यगतिपञ्चक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। दो आयु और आहारकद्विकका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

४७०. सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। संज्ञी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियाँ, देवगति चार और तीर्थङ्कर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यात हैं। *अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। शेष*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जा। आहारदुगं ओघं। सेसाणं जह० अज० असंखेज्जा। एवं परिमाणं समत्तं।

खेत्तपरूवणा

४७१. खेत्तं दुवि०–जह० उक्क०। उक्कस्सए पगदं। दुवि०–ओघे० आदे०। ओघेण तिण्णि आयुगाणं वेउव्वियछ०–आहारदुग-तित्थय० उक्क० अणु० ट्ठि० केवडि खेत्ते? लोगस्स असंखेज्जदिभागे। सेसाणं उक्क० लोगस्स असंखेज्जदिभागे। अणु० सव्वलोगे। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघो कायजोगि–ओरालि०–ओरालियमि०–कम्मइ०–णवुंस० – कोधादि०४–मदि०–सुद०–असंज० – अचक्खु०– तिण्णिले०–भवसि०–अब्भवसि०–मिच्छादि०–असण्णि०–आहार०–अणाहारग त्ति। णवरि किण्ण०–णील०–काउ० तित्थय० उक्क० अणुक्क० लोगस्स असंखेज्जदिभागे।

४७२ एइंदिएसु पंचणा०–णवदंस०–सादासाद०–मोहणीय०२४–तिरिक्खगदि–एइंदि०–ओरालि०–तेजा०–क०–हुंडसं०–वण्ण०४– तिरिक्खाणु०–अगु०४–थावर–सुहुम–पज्जत्तापज्जत्त–पत्ते०– साधार०–थिराथिर – सुभासुभ–दूभग -अणादे०–अज०–णिमि०–णीचा०–पंचंत० उक्क० अणु० सव्वलोगे। इत्थि०–पुरिस०–चदुजादि–पंचसंठा०–ओरालि०अंगो०–छस्संघ०–आदाउज्जो०–दोविहा०–तस–बादर– सुभग–सुस्सर–दुस्सर–आदेज्ज०–जस० उक्क० लोग० संखेज्ज०। अणु० सव्वलोगे। तिरिक्ख-

---

प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यात हैं। परिमाण समाप्त हुआ।

क्षेत्रप्ररूपणा

४७१. क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्ट का प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थंकरकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकका असंख्यातवाँ भाग क्षेत्र है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्र काययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्ण, नील और कापोत लेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

४७२. एकेन्द्रियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, चौबीस मोहनीय, तिर्यञ्च गति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, सुभग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसायु०-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं। बादरएइंदियपज्जत्तापज्जत्त० थावरपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलो०। मणुसायु०-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चा० उक्क० अणु० लोग० असंखेंज्ज०। तिरिक्खायु० उक्क० लोग० असंखेंज्ज०। अणु० लोग० संखेंज्जदि०। सेसाणं उक्क० अणु० लोग० संखेंज्जा०। सुहुमएइंदिय-पज्जत्ता-पज्जत्त० तिरिक्ख-मणुसायु ओघं। सेसाणं सव्वपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलोगे। एवं सव्वसुहुमाणं।

४७२ पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० सव्वाणं ओघं। बादरपुढविका०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्ते० थावरपगदीणं उक्क० लो० असंखेंज्ज०। अणु० सव्वलो०। तिरिक्खायु०-तसपगदीणं उक्क० अणु० लो० असंखेंज्ज०। बादरपुढवि-०आउ०-तेउ-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्ते०पज्जत्ता० विगलिंदियभंगो। बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्ते०अपज्जत्ता० थावरपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलो०। मणुसायु० ओघं। तिरिक्खायु० तसपगदीणं च उक्क० अणु० लो० असंखेंज्ज०। णवरि बादरवाऊणं आयु० अणु० लो०

जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भंग ओघके समान है। बादर एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यात बहुभाग प्रमाण है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायु का भङ्ग ओघके समान है। तथा शेष सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इसी प्रकार सब सूक्ष्म जीवोंके जानना चाहिए।

४७२. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, और वायुकायिक जीवोंमें सब प्रकृतियों का भङ्ग ओघके समान है। बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवों में स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों का क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों का क्षेत्र सब लोक है। तिर्यञ्चायु और त्रसप्रकृतियों की उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंका भङ्ग विकलेन्द्रिय जीवोंके समान है। बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चायु और त्रस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि बादर वायु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्ज० । सेसाणं यम्हि लोगस्स असंखेंज्ज० तम्हि लोगस्स संखेंज्ज० कादव्वो । वणप्फदि-णियोद० थावरपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलो० । मणुसायु० ओघो । तिरिक्खायु०-तसपगदीणं लोग० असंखेंज्ज० । अणु० सव्वलोगे । बादरवणप्फदि-णियोद० पज्जत्तापज्जत्तगाणं च बादरपुढवि०अपज्जत्तभंगो । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेंज्जासंखेंज्जरासीणं उक्क० अणु० लोग० असंखेंज्जदिभागे ।

एवं उक्कस्सं समत्तं

४७४ जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-मणुसगदि-मणुसाणु०-जस०-उच्चा०-पंचंत० जह० लो० असंखेज्ज० । अज० सव्वलोगे । तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० जह० अज० उक्कस्सभंगो । तिरिक्खायु०-सुहुमणाम० ज० अज० सव्वलो० । सेसाणं ज० लो० संखेज्ज० । अज० सव्वलो० । एवं ओघभंगो कायजोगि-ओरालि०-णवुंस० कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारग त्ति ।

४७५ तिरिक्खेसु वेउव्वियछ०-तिण्णिआयु०-मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं । तिरिक्खायु०-सुहुमणामाणं जह० अज० सव्वलो० । सेसाणं ओघं । एवं एइंदि०-

---

कायिक जीवों में आयुकी अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है । शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका जहाँ लोकका असंख्यातवाँ भाग क्षेत्र कहा है,वहाँ वह लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण जानना चाहिए । वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । मनुष्यायुका भंग ओघके समान है । तिर्यञ्चायु और त्रस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है , तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों क्षेत्र सब लोक है । बादर वनस्पतिकायिक और निगोद जीव तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका भंग बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान है । शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक संख्यात और असंख्यात राशिवाले जीवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट क्षेत्र समाप्त हुआ ।

४७४. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र उत्कृष्टके समान है । तिर्यञ्चायु और सूक्ष्म इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागका प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

४७५. तिर्यञ्चोंमें वैक्रियिक छह, तीन आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है । तिर्यञ्चायु और सूक्ष्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बंधक जीवोंका क्षेत्र सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बादरएइंदि०-पज्जत्तापज्जत्त० । थावरपगदीणं च एवं चेव । तिरिक्खायु०-तसपगदीणं च ज० अज० लोग० संखेज्ज० । मणुसायु-मणुसगदिदुग० दो पदा लोग० असंखेज्ज० । सव्वसुहुमाणं मणुसायु० ओघं । सेसाणं सव्वपगदीणं ज० अज० सव्वलो० ।

४७६ पुढवि०--आउ०-तेउ०--वाउ० तिरिक्ख-मणुसायु० ओघं । सेसाणं ज० लो० असं० । अज० सव्वलो० । बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० थावरपगदीणं ज० लो० असंखे० । अज० सव्वलो० । सेसाणं ज० अज० लोग० असंखे० । बादरपुढवि०-आउ०--तेउ०--वाउ०पज्जत्त० विगलिंदियभंगो । बादरपुढवि०--आउ०--तेउ०-वाउ०-अपज्जत्त० थावरपगदीणं जह० लोग० असंखे० । अज० सव्वलो० । दोआयु०-तसपगदीणं जह० अज० लोग० असंखे० । सुहुमं दो वि सव्वलोगे । णवरि वाऊणं सव्वत्थ जह० लो० असंखे० तम्हि लोगस्स संखेज्जदिभागं कादव्वं । वणप्फदि-णियोदाणं दोआयु०-सुहुमणाम० ओघं । सेसाणं ज० लो० असंखेज्ज० । अज०

लोक है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसीप्रकार एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । स्थावर प्रकृतियोंका क्षेत्र इसी प्रकार है । तिर्यञ्चायु और त्रस प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण है । मनुष्यायु और मनुष्यगतिद्विक इनके दोनों ही पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सब सूक्ष्म जीवोंके मनुष्यायुका भंग ओघके समान है । शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है ।

४७६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायु का भंग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवों का क्षेत्र सब लोक है । बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादरवायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त और बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग विकलेन्द्रियोंके समान है । बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । दो आयु और त्रस प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सूक्ष्मके दोनों ही पदवाले जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंके सर्वत्र जहाँ लोकका असंख्यातवां भाग क्षेत्र कहा है वहाँ लोकका संख्यातवाँ भाग क्षेत्र कहना चाहिए । वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें दो आयु और सूक्ष्मनामकी अपेक्षा क्षेत्र ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । बादरवणप्फदि-णियोदाणं पज्जत्तापज्जत्ता० थावरपगदीणं ज० लो० असंखेंज्ज० । अज० सव्वलो० । सेसाणं पगदीणं ज० अज० लोग० असंखेंज्ज० । सुहुम० दो वि पदा सव्वलो० । बादरवणप्फदिपत्ते० बादरपुढविभंगो ।

४७७. ओरालियमि० तिरिक्ख-मणुसायु-मणुसगदि-मणुसाणु-देवगदि०४--तित्थय०--उच्चा० ओघं । सेसाणं तिरिक्खोघं । एवं कम्मइ०--अणाहारग त्ति । मदि०-सुद०--असंजतिण्णि०--अब्भवसि०--मिच्छादि०--असण्णि० तिरिक्खोघं । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि० संखेंज्जासंखेंज्जरासीणं जह० अज० लो० असंखेंज्ज० । एवं खेत्तं समत्तं

फोसणपरूवणा

४७८. फोसणं दुवि०--जह० उक्क० । उक्कस्सए पयदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा--णवदंसणा-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक०--णवुंस०--अरदि--सोग- भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०--तेजा०--क०--हुंड०--वण्ण०४--तिरिक्खाणु०--अगु० ४--उज्जो०--बादर--पज्जत्त--पत्ते०--अथिर--असुभ-दूभग--दुस्सर--अणादें०--जस०--अजस०--णिमि०--णीचा०--पंचंत० उक्कस्सट्ठिदिबंधगेहि केवडियं खेत्तं फोसिदं ? लोगस्स असंखेंज्ज० अट्ठ--तेरसचोंद्दसभागा वा देसूणा । अणु० सव्वलो० । सादा०-हस्स

जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। बादर वनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सूक्ष्मके दोनों ही पदोंका क्षेत्र सब लोक है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंका भङ्ग बादर पृथिवीकायिक जीवोंके समान है।

४७७. औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, देवगति चतुष्क, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्र इनका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इसी प्रकार कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष नरक गतिसे लेकर संज्ञीतक संख्यात और असंख्यात राशिवाली सब मार्गणाओंमें जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इस प्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

स्पर्शन प्ररूपणा

४७८. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, कुछ कम आठबटे चौदहराजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रदि-थिर-सुभ० उक्क० लो० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-चोद्दसभागा वा देसूणा। अणु० सव्वलो०। सादा०-हस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० लो० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-चोद्दसभागा वा देसूणा सव्वलोगो वा। अणु० सव्वलो०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर०-आदे० उक्क० लोगस्स असंखे० अट्ठ-बारह०। अणु० सव्वलो०। णिरय-देवायु०-आहारदुगं खेत्तभंगो। एवं सव्वत्थ। तिरिक्खायु-तिण्णिजादि० उक्क० खेत्त०। अणुक्क० सव्वलो०। मणुसायु० उक्क० खेत्त०। अणु० अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो। णिरयग०-णिरयाणु० उक्क० अणु० लोगस्स असंखे० छचोद्दस०। मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव०-उच्चा० उक्क० लोगस्स असंखे० अट्ठचोद्दस०। अणु० सव्वलो०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० उक्क० लो० असंखे० छचोद्दस०। अणु० बारहचोद्दस०। देवग०-देवाणु० उक्क० लो० असंखे० अथवा दिवड्ढचोद्दस०। अणु० छचोद्दस०। एइंदि०-थावर० उक्क० अट्ठ-णवचोद्दस०। अणु० सव्वलो०। सुहुम-अपज्जत्त-

लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, और शुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर और शुभकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और आहारकद्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार इन तीन प्रकृतियोंके आश्रयसे सर्वत्र स्पर्शन जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु और तीन जातिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण अथवा कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधारण० उक्क० लो० असंखे० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० । तित्थय० उक्क० खेत्तभंगो । अणु० अट्ठचोॅद्द्स० ।

४७६. आदेसेण णेरइएसु दोआयु–मणुसग०–मणुसाणु०–तित्थय०–उच्चा० उक्क० अणु० खेत्तं । सेसं उक्क० अणु० छच्चोॅद्द्स० । पढमाए पुढवीए खेत्तभंगो । विदियादि याव सत्तम त्ति दोआयु–मणुसगदिदुग–तित्थय०–उच्चा० उक्क० अणु० खेत्तभंगो । सेसाणं उक्क० बे–तिण्णि–चत्तारि–पंच–छच्चोॅद्द्स० ।

४८० तिरिक्खेसु पंचणा०–णवदंस०–असादा०–मिच्छ०–सोलसक०–णवुंस०–अरदि–सोग–भय–दुगुं०–पंचिंदि–तेजा०–क०–हुंड०–वण्ण०४–अगु०४–अप्पसत्थ०–तस०४–अथिरादिछ०–णिमि०–णीचा०–पंचंत० उक्क० छच्चोॅद्द्स० । अणु० सव्वलो० । सादा०–हस्स–रदि–तिरिक्खगदि – एइंदि०– ओरालि०–तिरिक्खाणु०–थावरादि०४–थिर–सुभ० उक्क० लो० असं० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० । इत्थि०–तिरिक्खायु०–मणुसगदि–तिण्णिजादि–चदुसंठा०–ओरालि०अंगो०–छस्संघ०–आदाव० खेत्तभंगो ।

बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया हैं ।

४७६. आदेशसे नारकियों में दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्र के समान है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पहिली में सब प्रकृतियोंके स्पर्शनका भङ्ग क्षेत्रके समान है । दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवीं तक दो आयु, मनुष्यगतिद्विक, तीर्थङ्कर और उच्च गोत्रकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजू, कुछ कम दो बटे चौदह राजू, कुछ कम तीन बटे चौदह राजू कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

४८०. तिर्यञ्चों में पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व सोलह कषाय, नपुंसक वेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, अस्थिर आदि छह, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सातावेदनीय हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद, तिर्यञ्चायु, मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरिस०-समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० उक्क० दिवड्ढचोंद्दस० । अणु० सव्वलो० । वेउव्वियछ० ओघं । उज्जो०-जसगि० उक्क० सत्त-चोंद्दस० । अणु० सव्वलो० । मणुसायु० ओघं । णवरि वज्जे णत्थि ।

४८१ पंचिंदियतिरिक्खतिगिण० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ-असादा० सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-अगु०४ पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० लो० असंखें० छच्चोंद्दस० । अणु० सव्वलो० । सादावे०-हस्स-रदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४-थिर-सुभ० उक्क० अणु० लोग० असंखे० सव्वलो० । इत्थि० उक्क० खेत्तं । अणु० दिवड्ढचोंद्दस० । पुरिस०-देवगदि-समचदु०-देवाणु०-पसत्थ-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० उक्क० खेत्तभंगो । किं णिमित्तं भवणवासीए उप्पज्जदि सोधम्मीसाणे ण उपज्जदि त्ति उक्कस्सट्ठिदिबंधंतो तेण खेत्तं, इदरत्थ दिवड्ढ-चोंद्दस० । अणु० छच्चोंद्दस० । णिरयग०-णिरयाणु० उक्क० अणु० छच्चोंद्दस० । पंचिंदि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-तस० उक्क० छच्चोंद्दस० । अणु० बारह० ।

संहनन और आतप इनकी मुख्यतासे स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन ओघके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

४८१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक में पाँच ज्ञानावरण, नौदर्शनावरण, मिथ्यात्व, असाता वेदनीय, सोलहकषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवों ने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, देवगति, समचतुरस्र-संस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। क्योंकि यह जीव भवनवासियोंमें उत्पन्न होता है; सौधर्म और ऐशान कल्पमें नहीं उत्पन्न होता, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवका स्पर्शन क्षेत्रके समान कहा है। अन्यत्र कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू स्पर्शन है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति और नरगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और त्रस इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पसत्थ०–दुस्सरं णिरयगदिभंगो। उज्जो०–जस० उक्क० अणु० सत्तचोद्दस०। बादर० उक्क० छच्चोद्दस०। अणु० तेरहचोद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० खेत्तभंगो।

४८२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० पंचणा०–णवदंसणा०–सादासाद०–मिच्छ०–सोलसक०–णवुंस०–हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि-एइंदि०–ओरालि०–तेजा०–क०–हुंड०–वण्ण०४–तिरिक्खाणु०–अगु०४–थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्ते० साधार०–थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-अणादे०–अजस०–णिमि०–णीचा–पचंत० उक्क० अणु० लो० असंखे० सव्वलो०। उज्जो०–बादर-जसगि० उक्क० अणु० सत्तचोद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० लो० असंखे०। एवं मणुसअपज्जत्त–सव्वविगलिंदि०–पंचिंदि०–तसअपज्जत्त। बादर-बादरपुढवि०–आउ०-तेउ०–वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्जत्ता०।

४८३. मणुस-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु पंचणा०-णवदंसणा०–असादा०–मिच्छ०–सोलसक०–णवुंस०–अरदि–सोग–भय–दुगुं०–तेजा०-क०–हुंड०–वण्ण० ४–अगु० ४

त्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रशस्त-विहायोगति और दुःस्वर इनकी मुख्यतासे स्पर्शन नरकगतिके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

४८२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पाँच ज्ञानवरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिः इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

४८३. मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनी जीवों में पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, अस्थिर आदि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पज्जत्त-पत्ते०—अथिरादिपंच-णिमि०—णीचा०—पंचंत० उक्क० खेत्तं। अणु० लो० असंखे० सव्वलो०। सादा०—हस्स-रदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०—ओरालि०—तिरिक्खाणु०—थावरादि०४—थिर-सुभ० उक्क० अणु० लो० असंखेज्जदि० सव्वलो०। उज्जो०—जसगि० उक्क० अणु० लोग० असंखे० सत्तचो०। बादर० उक्क० खेत्तं। अणु० सत्तचो०। सेसाणं खेत्तं।

४८४ देवेसु इत्थि०—पुरिस०—दोआयु०—मणुसग०—पंचिंदि०—पंचसंठा०—ओरालि०अंगो०—छस्संघड०—मणुसाणु०—आदाव-दोविहा०—तस-सुभग-दुस्सर-आदेज्ज०-तित्थय०—उच्चा० उक्क० अणु० अट्ठचोद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ठ-णवचोद्दस०। एवं सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं कादव्वं।

४८५. एइंदिएसु थावरपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलो०। दोआयु० तिरिक्खोघं। उज्जो० बादर०—जस० उक्क० सत्तचोद्दस०। अणु० सव्वलो०। सेसाणं पगदीणं उक्क० खेत्तं। अणु० सव्वलो०। बादरएइंदि०पज्जत्तापज्जत्त० थावरपगदीणं उक्क०

पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्र के समान है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता वेदनीय, हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति के बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें-भाग प्रमाण और कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

४८४. देवोंमें स्त्रीवेद, पुरुषवेद, दो आयु, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पांच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दुःस्वर, आदेय, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछकम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए।

४८५. एकेन्द्रियोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणु० सत्तचो० । मणुसायु०-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चा० उक्क० अणु० लोग० असंखेंज्ज० ।

४८६ पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० थावरपगदीणं उक्क० लोग० असंखेंज्ज० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० । तिरिक्ख-मणुसायु० तिरिक्खोघं । उज्जो०-बादर०-जस० उक्क० सत्तचो० । अणु० सव्वलो० । तसपगदीणं आदाव उक्क०लोग० असंखेंज्ज० । अणु० सव्वलो० ।

४८७. बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-थावरपगदीणं उक्क० लोग० असंखेंज्ज० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० । दोआयु० खेत्तभंगो । उज्जो०-बादर०-जस० उक्क० अणु० लोग० असंखेंज्ज० सत्तचोंद्दस । सेसाणं उक्क० अणु० लोग० असंखेंज्ज० ।

४८८. बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० अपज्जत्ताणं थावरपगदीणं उक्क० अणु० सव्वलो० । उज्जो०-बादर०-जसगि० उक्क० अणु० सत्तचोंद्दस० । सेसाणं उक्क० अणु० लोग० असंखें० । णवरि वाऊणं यम्हि लोगस्स असंखेंज्ज० तम्हि लोगस्स संखेंज्ज० कादव्वो ।

चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

४८६. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । त्रसप्रकृतियाँ और आतप इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

४८७. बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो आयुका भङ्ग क्षेत्रके समान है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

४८८. बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि जहाँ पर लोकका असंख्यातवाँ भाग प्रमाण स्पर्शन कहा है वहाँ पर वायुकायिक जीवोंके लोकके संख्यातवाँभाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८९. सव्वसुहुमाणं सव्वपगदीणं उक्क० अणु० खेत्तं। णवरि तिरिक्खायु० उक्क० लोग० असंखें० सव्वलो०। अणु० सव्वलो०। मणुसायु० उक्क० अणु० लोग० असंखेंज० सव्वलो०। वणप्फदि-णियोदाणं एइंदियभंगो। णवरि तसपगदीणं लोग० असंखें० कादव्वो। उज्जो०-बादर०-जसगि० उक्क० सत्तचोंद्दस०। अणु० सव्वलो०। बादरवणप्फदि-णियोदाणं पज्जत्तापज्जत्त० बादरपुढविअपज्जत्तभंगो। बादरवणप्फदिपत्ते० बादरपुढविभंगो।

४९०. पंचिंदिय-तस०२ पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-ओरालि०-तेज०-क०-हुंड०-वण्ण० ४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अट्ठ-तेरहचों०। अणु० अट्ठचोंद्दस० सव्वलो०। सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० अणु० अट्ठचों० सव्वलो०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-ओरालि०-अंगो०-पंचसंठा०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-सुस्सर-आदें० उक्क० अणु० अट्ठ-

---

४८९. सब सूक्ष्म जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वनस्पति कायिक और निगोद जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि त्रस प्रकृतियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहना चाहिए। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

४९०. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, और शुभ प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, पाँच संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारह० । णिरय-देवायु०-तिण्णिजादि०-आहारदुगं उक्क० अणु० खेत्तं । तिरिक्ख-मणुसायु०-तित्थय० उक्क० खेत्तं । अणु० अट्ठचोद्दस० । णिरयगदि-णिरयाणुपु० उ-क्क० अणु० छचोद्दस० । देवगदि-देवाणु० उक्क० अणु० ओघं । मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव०-उच्चा० उक्क० अणु० अट्ठचोद्दस० । एइंदि०-थावर० उक्क० अट्ठ-णवचो० । अणु० अट्ठचो० सव्वलो० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० उक्क० छचोद्दस० । अणु० बारहचो० । उज्जो०-बादर०-जसगि० उक्क० अणु० अट्ठ-तेरह० । सुहुम-अपज्जत्त-साधार० उक्क० अणु० लोग०असंखे० सव्वलो० । एवं पंचमण०-पंचवचि०-चक्खुदंसणि त्ति ।

४९१. कायजोगि० ओघं । ओरालिय० तिरिक्खोघं । णवरि आहारदुग-तित्थय० मणुसभंगो । ओरालियमि० दोआयु०-सुहुमपगदीणं सत्थाणं उक्क० लो० असंखेज्ज० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० । णवरि मणुसायु० अणु० लो० असंखेज्ज०

बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । नरकायु, देवायु, तीन जाति और आहारक द्विक इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । नरक-गति और नरकगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । एकेन्द्रिय और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिकआंगोपांग इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और चक्षुदर्शनी जीवोंके जानना चाहिए ।

४९१. काययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । औदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है । औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो आयु और सूक्ष्म प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुकी अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । अथवा सरीरपज्जत्तीए पज्जत्तो पज्जत्तगदस्स खेत्तभंगो । उज्जो०–बादर०–जसगि० उक्क० सत्तचो० । अणु० सव्वलो० । अण्णत्थ खेत्तं । देवगदि०४ तित्थय० उक्क० अणु० खेत्तं । सेसाणं उभयथा उक्क० लो० असंखेज्ज० । अणु० सव्वलो० ।

४९२. वेउव्वियका० पंचणा०–णवदंसणा०–सादासाद०–मिच्छ०–सोलसक०–सत्तणोक०–तिरिक्खगदि–ओरालि०–तेजा०–क०–हुंड०–वण्ण०४–तिरिक्खाणु०–अगु०४–उज्जो०–बादर–पज्जत्त–पत्तेय–थिराथिर–सुभासुभ–दूभग–अणादें०–जस०–अजस०–णिमि०–णीचा०–पंचंत० उक्क० अणु० अट्ठ०–तेरह० । इत्थि०–पुरिस०–पंचिंदि०–पंचसंठा०–ओरालि०अंगो०–छस्संघ०–दोविहा०–तस–सुभग–दोसर०–आदें० उक्क० अणु० अट्ठ–बारह० । दोआयु०–मणुसगदि–एइंदि०–मणुसाणु०–आदाव–थावर–तित्थय०–उच्चा० देवोघं । वेउव्वियमि०–आहार०–आहारमि० खेत्तभंगो ।

४९३. कम्मइग० पंचणा०–णवदंसणा०–सादासाद०–मिच्छ०–सोलसक०–णवणोक०–तिरिक्खगदि–पंचिंदि०–ओरालि०–तेजा०–कम्म०–छस्संठा०–ओरालि०–

असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है अथवा शरीर पर्याप्तिसे पर्याप्त हुए जीवोंकी अपेक्षा स्पर्शन क्षेत्रके समान है । उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अन्यत्र स्पर्शन क्षेत्रके समान है । देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । शेष प्रकृतियोंकी दोनों प्रकारसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

४९२. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, सात नोकषाय, तिर्यञ्चगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, उद्योत, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो आयु, मनुष्यगति, एकेन्द्रिय जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, स्थावर, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्र इनका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

४९३. कार्मणकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगो०–छस्संघ०–वण्ण०४–तिरिक्खाणु०–अगु०४–उज्जो०–दोविहा०–तस०४–थिरादिछयुग०-णिमि०–णीचा०-पंचंत० उक्क० बारहचो०। अणु० सव्वलो०। मणुसगदि-तिण्णिजादि–मणुसाणु० उक्क० अणु० खेत्तं। सुहुम-अपज्जत्त–साधार० उक्क० लो० असंखे०। अणु० सव्वलो०। देवगदि०४–तित्थय० उक्क० अणु० खेत्तं। एइंदि०–आदाव–थावर० उक्क० दिवड्ढचोद्दस०। अणु० सव्वलो०।

४९४. इत्थिवे० पंचणा०–णवदंसणा०–असादा०–मिच्छ०–सोलसक०-पंचणोक०-तेजा०–क०–हुंडसं०–वण्ण०४–अगुरु०–पज्जत्त-पत्तेग०–अथिरादिपंच-णिमि०–णीचा०-पंचंत० उक्क० अट्ठ-तेरहचो०। अणु० अट्ठचो० सव्वलो०। सादा०–हस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० अणु० अट्ठचोद्दस० सव्वलो०। इत्थिवे०–पुरिस०–मणुसग०–पंचसठा०–ओरालि०अंगो०–छस्संघ०–मणुसाणु०–आदाव–पसत्थवि०–सुभग–सुस्सर–आदें०–उच्चा० उक्क० अणु० अट्ठचोद्दस०। णिरय-देवायु०–तिण्णिजादि-आहार०२–तित्थय० उक्क० अणु० खेत्तभंगो। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्तं। अणु० अट्ठचोद्दस०।

तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, दो विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, तीन जाति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। एकेन्द्रिय जाति, आतप और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

४९४ स्त्रीवेदवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्ड संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता वेदनीय, हास्य, रति, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन ओघके समान है। तिर्यञ्चगति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वियछ० ओघं । तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावर ० उक्क० अट्ठ-णवचों० । अणु० अट्ठचों० सव्वलो० । पंचिंदि०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० उक्क० छच्चोंद्दस० । अणु० अट्ठ-बारह० । उज्जो०-जस० उक्क० अणु० अट्ठ-णवचोंद्दस० । बादर० उक्क० अणु० अट्ठ-तेरहचोंद्दस । सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० उक्क० अणु० लोग० असंखे० सव्वलो० । पुरिसेसु इत्थिभंगो । णवरि पंचिंदि०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० उक्क० अणु० अट्ठ-बारहचोंद्दस० । तित्थय० ओघं ।

४६५. णवुंस० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छत्त-सोलसक०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छसंठा०-ओरालि०अंगो०-छसंघ०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-दोविहा०-उज्जो०-तस०४-अथिर-असुभ-सुभग-दूभग-सुस्सर--दुस्सर--आदें०-अणादे०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० छच्चोंद्दस० । अणु० सव्वलो० । सादावे०-हस्स-रदि-एइंदि०-थावरादि४--थिर-सुभ० उक्क० लो० असंखे० सव्वलो० । अणु० सव्वलो० ।

एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय जाति, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदी जीवोंमें स्त्रीवेदी जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुस्वर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भंग ओघके समान है।

४९५. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व; सोलह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, दो विहायोगति, उद्योत, त्रस चतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुःस्वर, आदेय, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, एकेन्द्रियजाति, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट स्थितिके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोआयु०-आहारदुग-तित्थय०, उक्क० अणु० खेत्तभंगो। तिरिक्खायु-मणुसगदि-तिण्णि-जादि-मणुसाणु०-आदाव-उच्चागो० उक्क० लो० असंखेंज्जदि०। अणु० सव्वलो०। मणुसायु० उक्क० खे०। अणु० लो० असंखें० सव्वलो०। वेउव्वियछ० ओघो। उज्जो०-जस० उक्क० तेरहचोंद्दस०। अणुक्क० सव्वलो०। अवगदवेदे खें०भंगो कोधादि०४ ओघं।

४९६. मदि०-सुद० ओघं। णवरि देवगदि-देवाणु० उक्क० खें०। अणु० पंच-चोंद्द०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० उक्क० छच्चोंद्दस०। अणु० एक्कारसचोंद्दस०। विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-असादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-अगु०४--पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच--णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अट्ठ-तेरह०। अणु० अट्ठ-तेरह० सव्वलो०। सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ० उक्क० अणु० अट्ठचों० सव्वलो०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०-

---

बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्च आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहकी अपेक्षा स्पर्शन ओघके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अपगतवेदी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी अपेक्षा स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तथा क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें ओघके समान है।

४९६. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू, कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर और शुभ इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगो०--छस्संघ०--दोविहा०--तस-सुभग-दोसर-आदें० उक्क० अणु० अट्ठ-बारहचोंद्दस० । णिरय-देवायु०--तिण्णिजादि० उक्क० अणु० खेत्तभंगो । तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्तभंगो । अणु० अट्ठ-चोंद्द० । वेउव्वियछ० मदिभंगो । तिरिक्खग०--ओरालि०--तिरिक्खाणु० उक्क० अट्ठ-तेरहचों० । अणु० अट्ठ-तेरहचों० सव्वलो० । मणुसग०--मणुसाणु०--आदाव०--उच्चा० उक्क० अणु० अट्ठचों० । एइंदि०--थावर० उक्क० अट्ठ-णवचों० अणु० अट्ठ० सव्वलो० । उज्जो०--बादर०--जसगि० उक्क० अणु० अट्ठ-तेरह० । सुहुम-अपज्जत्त-साधार० उक्क० अणु० लो० असंखे० सव्वलो० ।

४६७. आभिणि०--सुद०--ओधिणा० देवायु०--आहारदुगं उक्क० अणु० ओघं । देवगदि०४ उक्क० ओघं० । अणु० छचोंद्दस० । तित्थय० ओघं । सेसाणं उक्क० अणु०

पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और तीन जाति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियक छहकी मुख्यतासे स्पर्शन मत्यज्ञानियोंके समान है। तिर्यञ्चगति औदारिकशरीर और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू, कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्र इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति और स्थावर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

४६७. आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें देवायु और आहारक द्विककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठचोद्दस० । एवं ओधिदंस०--सम्मादिट्ठि-खइग०--वेदग०--उवसमस० । णवरि खइगे देवगदि०४ खेत्तं । तित्थय० उक्क० अणु० अट्ठचो० ।

४९८. मणपज्ज०--संजद-सामाइ०--छेदो०--परिहार०--सुहुमसं० खेत्तं । संजदासंजदे सादावे०--हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० उक्क० अणु० छच्चोद्दस० । देवायु--तित्थय० उक्क० अणु० खेत्तं । सेसाणं उक्क० खेत्तं । अणु० छच्चोद्दस० । असंजद०--अचक्खुदं ओघं ।

४९९. किण्णले० णवुंसगभंगो । णवरि णिरयगदि-वेउव्वि०--वेउव्वि०अंगो०--णिरयाणु० उक्क० अणु० छच्चोद्दस० । देवगदि-देवाणु०--तित्थय० उक्क० अणु० खेत्तभंगो । णील-काऊए पढमदंडओ णवुंसगभंगो । णवरि चत्तारि-बेच्चोद्दस० । सादा-हस्स-रदि-थिर-सुभ-जस० एदाओ पढमदंडओ भाणिदव्वाओ । णिरयग०-वेउव्वि०--वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० उक्क० अणु० चत्तारि-बे चोद्दस० । देवगदि०-देवाणु० किण्णभंगो । सेसाणं णवुंसगभंगो ।

वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगति चतुष्कका भङ्ग क्षेत्रके समान है तथा तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

४९८. मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि संयत और सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। संयतासंयत जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंयत और अचक्षुदर्शनी जीवोंका भंग ओघके समान है।

४९९. कृष्णलेश्यावाले जीवोंका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नरकगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआंगोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें प्रथम दण्डकका भंग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम दो बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनकी मुख्यतासे स्पर्शन प्रथम दण्डकके समान कहना चाहिए। नरकगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वी इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम दो बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी मुख्यतासे स्पर्शन कृष्ण लेश्यावाले जीवोंके समान है तथा शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन नपुंसकवेदी जीवोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५००. तेऊए देवायु-आहारदुगं० खे०। देवगदि०४ उक्क० खेत्तं। अणु० दिवड्ढ-चोंद्द०। इत्थि०-पुरिस०-मणुसग०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-आदाव-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेज्ज०-तित्थय०-उच्चा०-तिरिक्ख०-मणुसायु० उक्क० अणु० अट्ठचों०। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ठ-णव०। पम्माए देवायु-आहारदुगं खेत्तं। देवगदि०४ उक्क० खेत्तं। अणु० पंचचो०। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ठ-णवचो०। सुक्काए देवायु-आहारदुगं ओघं। देवगदि०४ उक्क० खेत्तं। अणु० छच्चोंद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० छच्चोंद्द०।

५०१. भवसिद्धिया० ओघं। अब्भवसि० मदि०भंगो। सासणे देवायु० ओघं। तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० खेत्तं। अणु० अट्ठचों०। मणुसगदि-मणुसाणु-उच्चा० उक्क० अणु० अट्ठचों०। देवगदि०४ उक्क० खेत्तं। अणु० पंचचोंद्दस०। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ठ-बारह०। सम्मामि० देवगदि०४ उक्क० अणु० खेत्तं। सेसाणं उक्क० अणु० अट्ठचों०।

---

५००. पीत लेश्यावाले जीवोंमें देवायु और आहारकद्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायु इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवायु और आहारकद्विकका भंग क्षेत्रके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शुक्ल लेश्यावाले जीवोंमें देवायु और आहारकद्विकका भंग ओघके समान है। देवगति चतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५०१. भव्य जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। अभव्य जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवायुका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगतिचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें देवगतिचतुष्ककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०२. असण्णीसु पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-सत्तणोक०-तिरिक्खायु-मणुसगदि-चदुजादि-[ओरालि०]-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०-४-आदाव-दोविहा०-तस०४-अथिरादिछ०-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-णीचुच्चा०-पंचंत०-उक्क० खेत्तं। अणु०सव्वलो०। सादावे०-हस्स रदि-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४-थिर-सुभ० उक्क० लो०असंखेंज० सव्वलो०। अणु० सव्वलो०। णिरय-देवायु-वेउव्वियछ०-खेत्तभंगो। मणुसायु० एइंदियभंगो। उज्जो०-जसगि० उक्क० सत्तचोंद्दस०। अणु० सव्वलो०। आहार० ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं उक्कस्सफोसणं समत्तं।

५०३. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० खविगाणं मणुसग०-मणुसाणु० जहण्णट्ठिदिबंधगेहिं केवडियं खेत्तं फोसिदं? लोगस्स असंखेंजदिभागो। अज० सव्वलो०। पंचदंस०-असादा०-मिच्छ०-बारसक०-अट्ठणोक०-तिरिक्खगदि-चदुजादि-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णिमि०-णीचा० जहण्ण० अजहण्ण० खेत्तं। णिरय-

५०२. असंज्ञी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, सात नोकषाय, तिर्यञ्चायु, मनुष्यगति, चार जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर कार्मणशरीर, छह संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, दो विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर आदि छह, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। सातावेदनीय, हास्य, रति, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, स्थिर और शुभकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। नरकायु, देवायु और वैक्रियिक छहका भङ्ग क्षेत्रके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम सात बटे चौदह राजू है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। आहारक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है। अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इस प्रकार उत्कृष्ट स्पर्शन समाप्त हुआ।

५०३ जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे क्षपक प्रकृतियाँ, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, आठ नोकषाय, तिर्यञ्चगति, चार जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारण, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नरकायु, देवायु और आहारकद्विकका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवायु०–आहारदुगं उक्कस्सभंगो। एवं सव्वत्थ। तिरिक्खायु-सुहुम० जह० अज० सव्वलो०। मणुसायु० जह० [अज०] लोग० असंखेंज० सव्वलोगो वा। णिरय-देवगदि-णिरय-देवाणु० जह० खेत्तं। अज० छच्चोंद्द०। एइंदि०-थावर० जह० सत्तचोंद्द०। अज० सव्वलो०। वेउव्वि०–वेउव्विअंगो० जह० खेत्तं। अजह० बारहचों०। तित्थय० जह० खेत्तं। अज० अट्ठचों०।

५०४. णिरएसु दोआयु-मणुसग०–मणुसाणु०–तित्थय०–उच्चा० उक्कस्सभंगो। सेसाणं जह० खेत्तभंगो। अज० छच्चोंद्दस०। पढमाए खेत्तं। विदियादि याव छट्ठि त्ति तिरिक्खायु-मणुसगदि०४-तित्थय० खेत्तं। सेसाणं जह० खेत्तं। अज० एक्क-दो-तिण्णि–चत्तारि–पंचचोंद्दस०। णवरि तिरिक्खगदि–तिरिक्खाणु०–उज्जो० जह० अज० एक–बे–तिण्णि–चत्तारि–पंचचोंद्दस०। सत्तमाए इत्थि–णवुंस०–पंचसंठा०–पंचसंघ०–अप्पसत्थ०–दूभग–दुस्सर–अणादें० जह० अज० छच्चोंद्दस०। तिरि-

---

भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार इन चार प्रकृतियोंकी मुख्यतासे स्पर्शन सर्वत्र जानना चाहिए। तिर्यञ्चायु और सूक्ष्म इनके जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, देवगति, नरकगत्यानुपूर्वी, और देवगत्यानुपूर्वी इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५०४ नारकियोंमें दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्रका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहिली पृथ्वीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दूसरीसे लेकर छटवीं तक पाँच पृथिवियोंमें तिर्यञ्चायु, मनुष्यगति चार और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजू, कुछ कम दो बटे चौदह राजू, कुछ कम तीन बटे चौदह राजू, कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवों ने क्रमसे कुछ कम एक बटे चौदह राजू, कुछ कम दो बटे चौदह राजू, कुछ कम तीन बटे चौदह राजू, कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। सातवीं पृथिवीमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनकी जघन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यगति त्रिकका भङ्ग क्षेत्र के समान है। शेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्खायु-मणुसगदितिगं खेत्तं । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० छच्चोद्दस० ।

५०५. तिरिक्खेसु पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेदणीय-मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक०-दोगदि-चदुजादि-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्ते०-साधार०-थिरादिछयुग०-णिमि०-णीचुच्चा०-पंचंत० जह० खेत्तं । अज० सव्वलो० । तिरिक्खायु-सुहुमणा० जह० अज० सव्वलो० । मणुसायु० जह० अज० लोग० असंखेज्ज० सव्वलो० । एइंदि०-थावर-वेउव्वियछ० ओघं । एवं तिरिक्खोघं मदि०-सुद०-असंज०-अब्भवसि०-मिच्छादिट्ठि त्ति । णवरि एदेसिं देवगदि-देवाणु० अज० पंचचोद्दस० । णवरि असंजद० वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० अज० एक्कारहचोद्दस० । असंज० तित्थय० अज० अट्ठचोद्दस० ।

५०६. पंचिंदियतिरिक्ख०३ पंचणा०-णवदंसणा०-सादासाद०-मोहणीय० २४-तिरिक्खगदि-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगुरु०४-थावर-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-अ-

---

प्रकृतियों की जघन्य स्थिति के बन्धक जीवों का स्पर्शन क्षेत्र के समान है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५०५. तिर्यञ्चोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, दो गति, चार जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर, साधारणशरीर, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण, नीचगोत्र, उच्चगोत्र और पांच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यञ्चायु और सूक्ष्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति, स्थावर और वैक्रियिक छहका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इन जीवोंके देवगति और देवगत्यानुपूर्वीकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पांच बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि असंयत जीवोंमें वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा इन्हीं असंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५०६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, मोहनीय चौबीस, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णादें०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंतराइगं० जह० लो० असंखेंज्ज० । अज० लो० असंखेंज्ज० सव्वलो० । णवरि एइंदि०-थावर० जह० सत्तचोद्दस० । उज्जो०-जसगि० जह० खेत्तं । अज० सत्तचोंद्दस० । बादर० जह० खेंत्तं । अज० तेरहचोंद्दस० । सुहुम० दो वि पदा लोग० असंखेंज्ज० सव्वलो० । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० अप्पप्पणो [फोसणं कादव्वं ।]

५०७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ता० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेदणी०-मोह-णीय०२४-तिरिक्खगदि-एइंदिय०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंड०-वण्ण०४-तिरि-क्खाणु०-अगु०४-थावरणा०-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्ते०-साधार०-थिराथिर-सुभा-सुभ-दूभग-अणादें०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० जह० खेत्तं। अज०ट्ठि० लोग० असंखेंज्ज० सव्वलो० । णवरि एइंदि०-थावर० जह० सत्तचोद्द० । उज्जो०-बादर०-जसगि० जह० खेंत्तं । अज्ज० सत्तचोद्दस० । सेसाणं जह० अज० खेंत्तभंगो । णवरि सुहुम० जह० अज० लोग० असंखेंज्ज० सव्वलो० । एवं पंचिंदिय-तस-अपज्ज-त्ताणं सव्वविगलिंदिय-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्ज-त्ताणं च ।

क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत और यशःकीर्तिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । बादरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सूक्ष्मके दोनों ही पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अपना अपना स्पर्शन करना चाहिए ।

५०७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, चौवीस मोहनीय, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पांच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इतनी विशेषता है कि सूक्ष्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके तथा सब विकलेन्द्रिय, बादर पृथ्वी-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०८. मणुसगदीएसु३ सव्वपगदीणं जह० खेत्तं। अज० अप्पप्पणो फोसणं कादव्वं। एवं मणुसअपज्जत्त०।

५०९. देवेसु थावरपगदीणं जह० खेत्तं। अज्ज० अट्ठ-णवचो०। तसपगदीणं जह० खेत्तभंगो। अज० अट्ठचो०। णवरि दोआयु०-तित्थय० जह० अज० अट्ठ-चोद्द०। एवं सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णादूण णेदव्वं।

५१०. एइंदिए तिरिक्खोघं। बादरएइंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्त० सव्वपगदीणं जह० लोग० संखेज्ज०। अज० सव्वलो०। णवरि मणुसायु०-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चा० जह० अज० लोग० असंखेज्ज०। एइंदि०-थावर० जह० सत्तचो०। अज० सव्वलो०। उज्जो०-बादर०-जसगि० जह० खेत्तं। अज० सत्तचोद्द०। तिरिक्खायु०-आदाव०-सुहुम०-तसपगदीणं च खेत्तं।

५११. पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तिरिक्खायु०-सुहुम० जह० अज० सव्वलो०। सेसाणं जह० लोग० असंखेज्ज०। अज० सव्वलो०। णवरि एइंदिय-थावर०

कायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५०८. मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५०९. देवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। त्रस प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि दो आयु और तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन जानकर ले आना चाहिए।

५१०. एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। तिर्यञ्चायु, आतप, सूक्ष्म और त्रस प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है।

५११. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायु और सूक्ष्म इनकी जघन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्र का स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र का स्पर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह सत्तचो० । अज० सव्वलो० । उज्जो०–बादर–जसगि० जह० अज० खेत्तं । बादर-पुढवि०–आउ०–तेउ०–वाउ० थावरपगदीणं जह० लोग० असंखेंज्ज० । अज० सव्व-लो० । एइंदिय०–थावर० पुढविभंगो । उज्जो०–बादर–जसगि० तिरिक्ख०अप-ज्जत्तभंगो । सेसाणं जह० अज० खेत्तभंगो । बादरपुढवि०-आउ०–तेउ०–वाउ०अपज्जत्त० थावरपगदीणं जह० अज० खेत्तं । एइंदि०–उज्जो०–थावर०–बादर०–जसगि० बादर-पुढविभंगो । सुहुम० जह० अज० खेत्तं । सेसाणं पि खेत्तभंगो ।

५१२. वणप्फदि-णियोदेसु तिरिक्खायु-सुहुम० जह० अज० सव्वलो० । एइंदि०-उज्जो०–थावर-बादर-जसगि० पुढविभंगो । सेसाणं खेत्तभंगो । णवरि मणुसायु० तिरि-क्खोघं । बादरवणप्फदि–णियोद–पज्जत्त–अपज्जत्ता० बादरपुढविअपज्जतभंगो । बादरवणप्फदिपत्ते० बादरपुढविभंगो । सव्वसुहुमाणं खेत्तं । णवरि मणुसायु० एइंदिय–भंगो । णवरि वाऊणं जम्हि लोग० असंखें० तम्हि लोगस्स संखेंज्जदिभागं कादव्वं ।

५१३. पंचिंदिय–तस०२ एइंदिय–थावर ० जह० सत्तचो० । अज० अट्ठचोद्द०

किया है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों ने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनकी जघन्य और अज-घन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक जीवोंमें स्थावर प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्र का स्पर्शन किया है । एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनका भङ्ग पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है । उद्योत, बादर और यशःकीर्ति इनका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकों के समान है । शेष प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें स्थावर प्रकृतियों की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । एकेन्द्रिय जाति, उद्योत, स्थावर, बादर, और यशःकीर्ति इनका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है । सूक्ष्म प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्र के समान है । शेष प्रकृतियोंका भी स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

५१२. वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायु और सूक्ष्म इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । एकेन्द्रियजाति, उद्योत, स्थावर, बादर और यशःकीर्तिका भङ्ग पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्र के समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुका भङ्ग समान्य तिर्यञ्चों के समान है । बादर वनस्पतिकायिक और निगोद तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक अप-र्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है । बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंमें बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान भङ्ग है । सब सूक्ष्मोंका भङ्ग क्षेत्र के समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यायु का भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंका जहाँपर लोकका असंख्या-तवाँ भाग प्रमाण स्पर्शन कहा है, वहाँ पर लोकका संख्यातवाँ भाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए ।

५१३. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें एकेन्द्रिय और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० अणुकस्सभंगो ।

५१४. पंचमण०-तिण्णिवचि० इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्प-सत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० जह० अट्ठ-बारह० । अज० अणुकस्सभंगो । एइंदि०-थावर० जह० अट्ठ-णवचो० । अज० अणुकस्सभंगो । मणुसगदि०४ जह० अज० अट्ठचोंद्दस० । एवं आदावं पि । सेसाणं पि जह० खेत्तं । अज० अणुकस्सफोसण-भंगो । णवरि सुहुम० जह० लो० असंखेंज्ज० सव्वलो० । वचिजोगि०-असच्चमोस० तसपज्जत्तभंगो ।

५१५. कायजोगि०-ओरालिय० ओघं । णवरि ओरालियका० मणुसायु-तित्थयराणं चरजु णत्थि । ओरालियमि० देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्सभंगो । सेसाणं तिरिक्खोघं । णवरि एइंदि०-थावर०-सुहुम० जह० अज० खेत्तं । वेउव्वियका० थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ जह० अट्ठचों० । अज० अणुकस्सभंगो । तिरिक्खगदि०४ जह० खेत्तं । अज० अणुकस्सभंगो । इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्प-

के बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है ।

५१४. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है । एकेन्द्रिय जाति और स्थावरकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । मनुष्यगति चार की जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार आतपकी अपेक्षा भी स्पर्शन जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । इतनी विशेषता है कि सूक्ष्मकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है ।

५१५. काययोगी और औदारिककाययोगी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यायु और तीर्थंकर प्रकृतियोंका राजुप्रमाण स्पर्शन नहीं है । औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति, स्थावर और सूक्ष्म इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । वैक्रियककाययोगी जीवोंमें स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानु-बन्धी चारकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है । तिर्यञ्चगति चारकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० जह० अट्ठ-बारह० । अज० अणुक्कस्सभंगो । दोआयु-मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव-तित्थय०-उच्चागो० जह० अज० अट्ठचों० । एइंदि०-थावर० जह० अज० अट्ठ-णवचोॅद्द० । सेसाणं जह० अट्ठचों० । अज० अणुक्कस्स-भंगो । वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि० खेॅत्तभंगो । कम्मइग० खेॅत्तभंगो । एवं अणाहार० ।

५१६. इत्थि-पुरिसेसु एइंदिय-थावर० जह० सत्तचों० । अज० अणुक्कस्सभंगो । सुहुम० जह० अज० लोग० असंखेॅज० सव्वलो० । इत्थीए तित्थय० जह० अज० खेॅत्तं । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० अणुक्कस्सभंगो । णवुंसगे कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारग त्ति ओघं । णवुंस०-मणुसायु०-तित्थय० ओरालियकायजोगिभंगो । णवरि णवुंसगे तित्थय० खेॅत्तं । अवगदवेदे खेॅत्तं ।

५१७. विभंगे असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० अट्ठ-बारहचोद्दस० । अज० अणुक्कस्सभंगो । इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्प-

स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । स्त्रीवेद, नपुसंकवेद, पांच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग दुःस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है । दोआयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, तीर्थङ्कर और उच्च गोत्र इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है । एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों ने कुछ कम आठ बटे चौदहराजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है । कार्मणकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

५१६. स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है । सूक्ष्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवों का स्पर्शन अनुत्कृष्ट के समान है । नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षु दर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । किन्तु नपुंसकवेद, मनुष्यायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग औदारिक काययोगी जीवों के समान है । इतनी विशेषता है कि नपुंसक-वेदमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है । अपगतवेदमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है ।

५१७. विभङ्ग ज्ञानी जीवोंमें असाता वेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशः कीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० जह० अट्ठ-बारहचों० । अज० अणुकस्सभंगो । मणुसगदिपंचग० जह० अज० अट्ठचोंद्द० । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० अणुकस्सभंगो। णवरि एइंदि०-थावर०जह० अट्ठ-णवचोंद्द० । अज० अणुकस्सभंगो । सुहुम० जह० अज० लो० असंखें० सव्वलो० ।

५१८. आभिणि०-सुद०-ओधि० मणुसायु०-मणुसगदिपंचग० जह० अज० अट्ठचोंद्दस० । देवायु०-आहारदुगं खेत्तं । देवगदि०४ उकस्सभंगो । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० अणुकस्सभंगो । मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसं० खेत्तं ।

५१९. संजदासंजद० असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० अज० छचोंद्द० । देवायु०-तित्थय० जह० अज० खेत्तं । सेसाणं जह० खेत्तं । अज० छचोंद्द० । ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-आभिणि०भंगो । णवरि

कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। अजघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। मनुष्यगतिपञ्चककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियों की जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्ट के समान है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय जाति और स्थावर इनकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंने कुछकम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। सूक्ष्मकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

५१८. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायु और मनुष्यगति पञ्चककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकद्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। देवगतिचतुष्कका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है। मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत और सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है।

५१९. संयतासंयत जीवोंमें असाता, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और तीर्थंकर इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थिति के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खइगे देवगदि०४ खेँत्तं । उवसमे तित्थय० खेँत्तं । चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो ।

५२०. किण्ण०–णील०–काउ० असंजदभंगो । णवरि देवगदि०३-तित्थय० खेत्तं । मणुसाधु० तिरिक्खभंगो । तेऊए० पंचणा०–णवदंसणा०–सादासाद०–मोह०२४-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४–अगु०४–पसत्थवि०–तस०४–थिराथिर-सुभासुभ-जस०–अजस०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० जह० खेँत्तं । अज० अणुकस्सभंगो । देवगदि०४ जह० खेँत्तं । अज० दिवड्ढचो० । सेसाणं सोधम्मभंगो । एवं पम्माए सहस्सारभंगो कादव्वो । देवगदि०४ जह० खेँत्तं । अज० पंचचो० । सुक्काए मणुसगदिपंचग० जह० अज० छच्चोद्द० । सेसाणं जह० खेँत्तं । अज० छचो० । णवरि इत्थि०–णवुंस०–पंचसंठा०–पंचसंघ०–अप्पसत्थ०–दूभग–दुस्सर–अणादेँ० जह० अज० छच्चोँद्द० ।

५२१. सासणे इत्थि०–पंचसंठा०–पंचसंघ०–अप्पसत्थ०–तस०४ जह० अज० अट्ठ–एक्कारस० । मणुसगदिपंचग० जह० अज० अट्ठचोँ० । देवगदि०४ जह० अज०

जीवों का भङ्ग आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगतिचतुष्कका भङ्ग क्षेत्रके समान है । तथा उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है । चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है ।

५२०. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंका भङ्ग असंयत जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगति त्रिक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है । तथा मनुष्यायुका भङ्ग तिर्यञ्चों के समान है । पीतलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, साता वेदनीय, असाता वेदनीय, चौबीस मोहनीय, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है तथा अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सहस्रार कल्पके समान भङ्ग करना चाहिए । तथा देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शुक्ल लेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगतिपञ्चककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

५२१. सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंमें स्त्रीवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति और त्रस चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यगतिपञ्चककी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचचो० । सेसाणं जह० अट्ठचो० । अज० अणुक्कस्सभंगो । सम्मामिच्छे सव्वपगदीणं जह अज० अट्ठचो० । णवरि देवगदि०४ जह० खेत्तं । सण्णि० पंचिंदियभंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं । णवरि आयु०-वेउव्वियछ० जह० अज० खेत्तभंगो । एवं जहण्णयं समत्तं । एवं फोसणं समत्तं ।

कालपरूवणा

५२२. कालो दुवि०-जह० उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० णिरयायु० उक्क०ट्ठिदिबंधया केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमयं, उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो । अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमस्स असंखेज्जदि० । तिरिक्खायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसमया । अणु० सव्वद्धा । मणुस-देवायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम० । अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभा० । आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० उक्क० जहण्णु० अंतो०, अणु० सव्वद्धा । सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे० ।

जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । देवगतिचतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । संज्ञी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। असंज्ञी जीवोंमें समान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि आयु और वैक्रियिक छह इनकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इस प्रकार जघन्य स्पर्शन समाप्त हुआ । इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ ।

कालप्ररूपणा

५२०. काल दो प्रकारका है-जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-ओघ और आदेश । ओघसे नरकायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । मनुष्यायु और देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्यकाल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणु० सव्वद्धा । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि–ओरालि०–णवुंस०-कोधादि०-४-मदि-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसिद्धि-अब्भवसिद्धि०-मिच्छादि०-असण्णि–आहारग त्ति ।

५२३. णिरयेसु तिरिक्खायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे० । अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । मणुसायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम० । अणु० जहण्णु० अंतो० । सेसाणं उक्क० जह० एग,० उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । अणु० सव्वद्धा । एवं सव्वणिरयाणं सव्वदेवाणं च । णवरि सत्तमाए मणुसग०–मणुसाणु०–उच्चा० उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे० । अणु० सव्वद्धा ।

५२४. पंचिंदियतिरिक्खतिण्णि तिरिक्खायु० उक्क० ओघं । अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । सेसाणं ओघं । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु तिरिक्खायु० णिरयभंगो । सेसं ओघं । एवं सव्वअपज्जत्ताणं तसाणं सव्वविगलिंदियाणं बादरपुढवि०-आउ०–तेउ०–वाउ०–बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं च । णवरि मणुसअपज्जत्तगे आयुगवज्जाणं सव्वपगदीणं उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० ।

कोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

५२३. नारकी जीवोंमें तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार सब नारकी और सब देवों के जानना चाहिए । इतनी विशेषता है की सातवीं पृथ्वीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है ।

५२४. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें तिर्यञ्चायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल ओघके समान है । अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग नारकियोंके समान है । तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार सब अपर्याप्त, त्रस, सब विकलेन्द्रिय, बादर पृथ्वीकायिक, पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरोर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकों में आयुओंको छोड़कर सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२५. मणुसेसु णिरय-देवायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम० । अणु० जह० उक्क० अंतो० । तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० ओघं । अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । सेसाणं उक्क० जह० एग०, [उक्क०] अंतो० । अणु० सव्वद्धा । आहारदुगं तित्थय० ओघं । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु चदुआयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेज्जसम० । अणु० जहण्णु० अंतो० । सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अणु० सव्वद्धा । आहारदुगं तित्थय० ओघं ।

५२६. सव्वट्ठे सव्वपगदीणं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अणु० सव्वद्धा । आयु० णिरयभंगो ।

५२७. सव्वएइंदिएसु तिरिक्ख--मणुसायु० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि तिरिक्खायु० अणु० सव्वद्धा । सेसाणं उक्क० अणु० सव्वद्धा । एस भंगो सव्वसुहुमाणं बादरपुढवि०--आउ०--तेउ०--वाउ०अपज्जत्त०---वणप्फदि--णियोद० बादरपज्जत्त-अपज्जत्ता० बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्जत्तगाणं च ।

५२८. पुढवि०--आउ०-तेउ०--वाउ०-बादरपुढवि०-आउ०--तेउ०--वाउ०-बादर-

---

५२५. मनुष्योंमें नरकायु और देवायुका उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनी जीवोंमें चार आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। आहारकद्विक और तीर्थङ्करका भङ्ग ओघके समान है।

५२६. सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका सब काल है। आयुका भङ्ग नारकियोंके समान है।

५२७. सब एकेन्द्रियोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुकी अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है। यह भङ्ग सब सूक्ष्म, बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद और इन दोनोंके बादर और पर्याप्त अपर्याप्त तथा बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५२८. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वणप्फदिपत्तेय० दोआयु० एइंदियभंगो। पज्जत्तगे दोआयु० पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। सेसाणं पगदीणं उक्क० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। अणु० सव्वद्धा।

५२९. पंचिंदिय--तस०२ तिण्णिआयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेंज्ज-सम०। अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखें०। सेसाणं ओघं। एवं पंच-मण०-पंचवचि०-वेउव्वियका०-इत्थि०--पुरिस०--विभंग०-चक्खुदं०--तेउले०-पम्मले०-सुक्कले०--सण्णि त्ति। णवरि पंचमण०--पंचवचि०--वेउव्वि० आयु० अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। तेउ-पम्माए तिरिक्ख-मणुसायु० देवोघं। सुक्काए दो वि आयु० मणुसि०भंगो।

५३०. ओरालियमिस्से दोआयु० एइंदियभंगो। देवगदि०४-तित्थय० सत्थाणे उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अथवा सरीर-पज्जत्तीए दिज्जदि त्ति तदो उक्क० जहण्णु० अंतो०। अणु० जह० उक्क० अंतो०। सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। अणु० सव्वद्धा अधा-

---

बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर वायुकयिक और बादर वनस्पतिकायिक, प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। इनके पर्याप्तकोंमें दो आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थिति का बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्या-तवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल सर्वदा है।

५२९. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें तीन आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, वैक्रियिक काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, विभङ्गज्ञानी, चक्षुदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, शुक्ललेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और वैक्रियिककाय-योगी जीवोंमें आयुकी अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें दोनों ही आयुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

५३०. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर इनकी स्वस्थानमें उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है अथवा शरीर पर्याप्तिमें अगर यह काल प्राप्त किया जाता है तो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पवत्तस्स। अथवा सरीरपज्जत्तीए दिज्जदि त्ति तदो धुविगाणं उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। एवं वेउव्वियमि०-आहारमि०। णवरि वेउव्वियमि० अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। आहारमिस्से चत्तारि अंतो०।

५३१. आहारकायजोगि० सव्वपगदीणं उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो०। णवरि देवायु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेंज्जसम०। अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं आहारमिस्से देवायु०।

५३२. कम्मइगे देवगदि०४-तित्थय० उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० संखेंज्जसम०। सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० आवलियाए असंखेंज्ज०। अणु० सव्वद्धा।

५३३. अवगदवेदे सव्वाणं उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं सुहुमसंप०।

५३४. आभि०-सुद०-ओधि० सादावे०-हस्स-रदि-आहारदुग-थिर-सुभ-जसगि०-तित्थय० ओघं। मणुसायु० देवोघं। देवायु० ओघं। सेसाणं सव्वाणं उक्क० जह०

स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका काल अधःप्रवृत्तके सर्वदा है। अथवा शरीरपर्याप्तिमें यह काल दिया जाता है तो ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें चारों ही काल अन्तर्मुहूर्त हैं।

५३१. आहारककाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इनकी विशेषता है कि देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुकी मुख्यतासे काल जानना चाहिए।

५३२. कार्मणकाययोगी जीवोंमें देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

५३३. अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सूक्ष्मसांपरायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

५३४. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें साता वेदनीय, हास्य, रति, आहारकद्विक, स्थिर, शुभ, यशःकीर्ति और तीर्थङ्कर इनका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। देवायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे० । अणु० सव्वद्धा । एवं संजदासंजदे ओधिदं०-सम्मादि०-वेदग० ।

५३५. मणपज्जव० सादावे०--हस्स-रदि--आहारदुग--थिर-सुभ-जसगि० उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अणु० सव्वद्धा । सेसाणं उक्क० जह० उक्क० अंतो० । अणु० सव्वद्धा । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०- परिहार० ।

५३६. उवसम० पंचणा०-छदंसणा०--बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं-मणुसगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०--ओरालि०अंगो०--वज्जरि०--वण्ण०४-मणुसाणु०-अगु०४-पसत्थवि०--तस०४--सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०--णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० अणु० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । सादावे०--हस्स-रदि-थिर-सुभ--जसगि० उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्जदिभा० । असादा०-अरदि-सोग-अथिर--असुभ-अजस०-देवगदि०४ उक्क० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे० । अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे० । आहारदुगं उक्क० अणु० जह० एग०, उक्क अंतो० । तित्थय० उक्क० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।

प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका सब काल है । इसी प्रकार संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए ।

५३५. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सातावेदनीय, हास्य, रति, आहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत छेदोपस्थापनासंयत और परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिए ।

५३६. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सातावेदनीय, हास्य,रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यतवें भाग प्रमाण है । असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति और देवगतिचार, इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवेंभाग प्रमाण है । आहारकद्विककी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्त-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणु० जह० उक्क० अंतो० । एवं सम्मामि० । णवरि देवगदि०४ धुविगाणं भंगो । सासणे दोण्णि आयु० उक्क० जह० एग०, उक्क० संखेंज्ज० । अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं उक्कस्सकालं समत्तं

५३७. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं आहारदुगं तित्थय० जह० ट्ठिदिबंध० केवचिरं० ? जह० उक्क० अंतो० । अज० सव्वद्धा । तिरिक्खग०--तिरिक्खाणु०--उज्जो०--णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । अज० सव्वद्धा । तिण्णिआयु० जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखेंज्ज० । अज० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । वेउव्वियछ० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा । एवं ओघभंगो कायजोगि--ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारगे त्ति । णवरि खवगपगदीणं कायजोगि--ओरालियका० जह० जह० एग० । णवरि जोग-कसाएसु आयुगस्स अज० जह० एगस० ।

मुहूर्त है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्कका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट काल समाप्त हुआ ।

५३७. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे क्षपक प्रकृतियाँ, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका सब काल है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । तीन आयुओंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । वैक्रियिक छहका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि क्षपक प्रकृतियोंके काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंमें जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है । इतनी विशेषता है कि योग और कषायवाले जीवोंमें आयुकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३८. णिरएसु दोआयु० उक्कस्सभंगो। सेसाणं जह० [जह०] एग, उक्क० आवलि० असंखेंज्ज०। अज० सव्वद्धा। तित्थय० उक्कस्सभंगो। एवं पढमपुढवीए। विदियादि याव सत्तमा त्ति उक्कस्सभंगो। णवरि थीणगिद्धि३-मिच्छत्त--अणंताणुबंधि०४ जह० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखें०। सत्तमाए तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धि०भंगो।

५३९. तिरिक्खेसु णिरय--मणुस--देवायु०-वेउव्विछ०--तिरिक्खगदि०४ ओघं। सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा। एवं तिरिक्खोघं मदि०-सुद०--असंज०--तिण्णिले०-अब्भवसि०--मिच्छादि०--असण्णि त्ति। सव्वपंचिंदियतिरिक्खाणं उक्कस्सभंगो। णवरि चदुआयु० णिरयायुभंगो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० दोआयु० तिरिक्खायुभंगो। एवं सव्वअपज्जत्ताणं तसाणं सव्वविगलिंदियाणं बादरपुढविकाइय-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं च।

५४०. मणुसेसु खवगपगदीणं देवगदि०४ जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० ओघं। दोआयु० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। दोआयु० जह० जह० एग०, उक्क० संखेंज्जसम०। अज० जहण्णु० अंतो०। णिरयगदि-णिरयाणु० जह० जह० एग०,

५३८. नारकियोंमें दो आयुओंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार पहली पृथ्वीमें जानना चाहिए। दूसरी पृथ्वीसे लेकर सातवीं तक भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चार इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातवीं पृथ्वीमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धि तीनके समान है।

५३९. तिर्यञ्चोंमें नरकायु, मनुष्यायु, देवायु, वैक्रियिक छह और तिर्यञ्चगति चतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। इतनी विशेषता है कि चार आयुओंका भङ्ग नरकायुके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें दो आयुओंका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्त त्रस, सब विकलेन्द्रिय, बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर-वनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५४०. मनुष्योंमें क्षपक प्रकृतियाँ और देवगतिचतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल ओघके समान है। दो आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। दो आयुओंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वीकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० अंतो० । अज० सव्वद्धा । सेसाणं जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे० । अज० सव्वद्धा ।

५४१. मणुसपज्जत्त--मणुसिणीसु सो चेव भंगो । णवरि यम्हि आवलिया० असंखे० तम्हि संखेज्जसम० । मणुसअपज्जत्त० सव्वपगदीणं जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे० । अज० जह० खुद्दाभव० विसमयूणं, उक्क० पलिदो० असंखे० । णवरि सव्वट्ठ परियत्तीणं आयुगाणं च अज० पगदिकालो कादव्वो । देवाणं णिरयभंगो । णवरि एइंदि०-आदाव-थावर० सत्थाणभंगो ।

५४२. एइंदिएसु मणुसायु०--तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०--उज्जो०--णीचा० ओघं । सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा । पुढवि०--आउ०--तेउ०-वाउ०-बादरपुढवि०--आउ०-तेउ०-वाउ०-बादर-वणप्फदिपत्तेय० दोआयु० ओघं । सेसाणं जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज० । अज० सव्वद्धा । बादरपुढवि०-वाउ०-तेउ०-वाउ०-अपज्जत्ता० मणुसायु० ओघं । सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा । एवं वणप्फदि-णियोद-बादरवणप्फदि-णियोद-पज्जत्त-अपज्जत्त० बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्जत्ताणं

समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

५४१. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल कहा है, वहाँ पर संख्यात समय काल कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल दो समय कम क्षुल्लक भव ग्रहण प्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र परिवर्तमान प्रकृतियोंकी और आयुओंकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल प्रकृतिबन्धके कालके समान कहना चाहिए। देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर इनका भङ्ग स्वस्थानके समान है।

५४२. एकेन्द्रियोंमें मनुष्यायु, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक,बादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वसुहुमाणं च।

५४३. पंचिंदिय-तस०२ खवगपगदीणं ओघं। सेसाणं पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। एवं इत्थि०-पुरिस०। णवरि इत्थिवे० तित्थय० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०।

५४४. पंचमण०-तिण्णिवचि० पंचणा०-णवदंसणा--सादासाद०--मोह०२४--देवगदि०४-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-थिराथिर--सुभासुभ--सुभग--सुस्सर--आदें०--जस०--अजस०--णिमि०--तित्थय०--उच्चागो० पंचंत० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। इत्थिवे०--णवुंस०-तिण्णिगदि-चदुजादि-ओरालि०पंचसंठा०--ओरालि०अंगो०-छस्संघ०--तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४--दूभग--दुस्सर--अणादें०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। अज० सव्वद्धा। चदुआयु० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि अज० जह० एग०। दोवचि० खवगपगदीणं जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। चदुआयु० मणजोगिभंगो। सेसाणं तसभंगो।

काल सर्वदा है। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक, निगोद, बादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त और सब सूक्ष्म जीवोंके जानना चाहिए।

५४३. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। इसी प्रकार स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

५४४. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, असातावेदनीय, चौबीस मोहनीय, देवगतिचार, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तीन गति, चारजाति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। दो वचनयोगवाले जीवोंमें क्षपकप्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार आयुओंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४५. ओरालियमि० तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा०-देवगदि०४-तित्थयरं० उक्कस्सभंगो। मणुसायु० ओघं। सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा। वेउव्वि०-वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि० उक्कस्सभंगो। कम्मइगे तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे०,। अज० सव्वद्धा। देवगदि०४-तित्थय० उक्कस्सभंगो। सेसाणं जह० अज० सव्वद्धा।

५४६. अवगदे सव्वाणं जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० जह० एग०, उक्क० अंतो०। एवं सुहुमसंप०।

५४७. विभंगे पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-मिच्छ०-सोलसक०-पंचणोक०-देवगदि--पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४--देवाणु०-अगु०४--पसत्थ०-तस०४--थिरादिछ०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। असादा०-इत्थि०-णवुंस०-अरदि-सोग--णिरयगदि-चदुजादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ०--आदाव-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-अणादे० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। अज० सव्वद्धा। चदुआयु०

---

५४५. औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्च गत्यानुपूर्वी, उद्योत, नीचगोत्र, देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर इनका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीच-गोत्रकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है।

५४६. अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए।

५४७. विभंगज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पाँच नोकषाय, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जन्घय स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। असाता वेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, आतप, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। चार आयुका भङ्ग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचिंदियभंगो। तिरिक्ख-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-दोआणु०-उज्जो०-णीचा० जह० जह० अंतो०। अज० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज०। अज० सव्वद्धा।

५४८. आभि०-सुद०-ओधि० असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। सेसाणं जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। णवरि मणुसगदिपंचग० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज०। एवं ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०। णवरि दोआयु देवभंगो। खइगे दोआयु० मणुसि०भंगो।

५४९. मणपज्ज०-संजद-सामाइय-छेदो० खवगपदीणं ओघं। असादावे०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। सेसाणं जह० जहण्णु० अंतो०। सव्वपगदीणं अज० सव्वद्धा। आयु० मणुसि०भंगो। एवं परिहार०।

५५०. संजदासंजदे असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। अज० सव्वद्धा। सेसाणं जह० जह० उक्क०

पञ्चेन्द्रियोंके समान है। तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

५४८. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें असाता वेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति पञ्चकको जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग देवोंके समान है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

५४९. मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सब प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। आयुका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

५५०. संयतासंयत जीवोंमें असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतो०। अज० सव्वद्धा। देवायु० ओघं। चक्खुदं० तसभंगो।

५५१. तेऊए इत्थि०-णवुंस०-दोगदि-एइंदि०-ओरालि०-पंचसंठा०-छस्संघ०-दोआणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचा० जह० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। अज० सव्वद्धा। असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० जह० जह० एगसमयं, उक्क० अंतो०। सेसाणं जह० जह० उक्क० अंतो०। अज० सव्वद्धा। एवं पम्माए। तेऊए एसिं अप्पमत्तो करेंति तेसिं दुविधो कालो। यदि अधापवत्तसंजदो जहण्णट्ठिदिबंधकालो जह० जह० एग०, उक्क अंतो०। अथवा दंसणमोहखवगस्स कीरदि तदो जहण्णु० अंतो०। एवं परिहारे। पम्माए देवगदिआदि अधापवत्तस्स दिज्जदि। एवं सुक्काए वि।

५५२. उवसम० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अज० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज०। सादासाद०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस०-देवगदि०४ जह० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अज० जह० एग०, उक्क० पलिदो०

काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। देवायुका भङ्ग ओघके समान है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है।

५५१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, एकेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। असाता वेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। पीतलेश्यामें जिनको अप्रमत्त करते हैं उनका दो प्रकारका काल है। यदि अधःप्रवृत्तसंयत करता है तो उसके जघन्य स्थितिके बन्धकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है अथवा दर्शनमोहनीयका क्षपक करता है तो जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवगति आदि अधःप्रवृत्तके देनी चाहिए। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए।

५५२. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तराय इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सातावेदनीय, असाता-वेदनीय, हास्य, रति, अरति, शोक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और देवगति चतुष्ककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेंज्ज० । अट्ठक० जह० जह० उक्क० अंतो० । अज० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । मणुसगदिपंचग० जह० अज० जह० एग० अंतो० । उक्क० पलिदो० असंखेंज्ज० । आहारदुगं जह० अज० जह० एग०, उक्क० अंतो० । तित्थय० जह० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अज० जह० एगसमयं, उक्क० अंतो० ।

५५३. सासणे सम्मामि० उक्कस्सभंगो । णवरि सासणे तिरिक्ख-देवायु० जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखेंज्ज० । अज० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे० । मणुसायु० देवभंगो ।

५५४. सण्णीसु खवगपगदीणं देवगदि०४--आहारदुग-तित्थय० मणुसभंगो । चदुआयु० पंचिंदियभंगो । सेसाणं जह० जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखेंज्ज० । अज० सव्वद्धा । एवं जहण्णयं समत्तं ।

एवं कालं समत्तं

अंतरपरूवणा

५५५. अंतरं दुविधं । जहण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०-ओघे०

काल अन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और और उत्कृष्ट काल पल्यके संख्यातवें भाग प्रमाण है । आठ कषायोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । मनुष्यगति पञ्चककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल क्रमसे एक समय और अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । आहारक द्विककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

५५३. सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि सासादनमें तिर्यञ्चायु और देवायुकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । मनुष्यायुका भङ्ग देवोंके समान है ।

५५४. संज्ञी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियाँ, देवगति चतुष्क, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है । चार आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । इस प्रकार जघन्य काल समाप्त हुआ ।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ ।

अन्तरप्ररूपणा

५५५. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदे० । ओघेण णिरय-मणुस-देवायूणं उक्कस्सट्ठिदिबंधगंतरं केवचिरं० ? जह० एग०, उक्क० अंगुलस्स असंखे० असं० ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ । अणु० जह० एग०, उक्क० चदुवीसं मुहुत्तं । सेसाणं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुलस्स असं० असंखे० ओसप्पिणि० । अणु० णत्थि अंतरं । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-[चक्खुदं] अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि०-आहार०-अणाहारग त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगे देवगदि०४-तित्थय० उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० मासपुधत्तं । तित्थय० वासपुधत्तं० ।

५५६. सव्वएइंदियाणं दोआयु० ओघं । सेसाणं उक्क० अणु० णत्थि अंतरं । एवं वणप्फदि-णियोदाणं ।

५५७. पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं चेव पज्जत्ता० ओघं । णवरि पज्जत्तेसु तिरिक्खायु० अणु० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।

निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे, नरकायु, मनुष्यायु और देवायु इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है . जो कि असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालके बराबर है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल चौबीस मुहूर्त है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल अङ्गुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है जो कि असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालके बराबर है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल ओघके समान है । अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मासपृथक्त्व है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ।

५५६. सब एकेन्द्रिय जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके जानना चाहिए ।

५५७. पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक तथा इन्हींके पर्याप्त जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि पर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायुकी अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा तैजस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेजा०-क० चदुवीसं मुहुत्तं० । बादर [पुढवि०-] आउ०-तेउ०-वाउ०अपज्जत्ता० एइंदियभंगो । सव्वसुहुमाणं एइंदियभंगो । बादरवणप्फदिपत्तेय० बादरपुढविभंगो ।

५५८. अवगदवेदे सव्वपगदीणं उक्क० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं । अणु० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । एवं सुहुमसं० । वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि० तित्थय० उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं० । सेसाणं उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० अप्पप्पणो पगदिअंतरं ।

५५९. मणुसअपज्ज०-सासण०-सम्मामि० उक्क० ओघं । अणु० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे० । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुल० असंखे० । अणु० पगदिअंतरं । आयुगाणि एसिं अत्थि तेसिं उक्क० जह० एग०, उक्क० अंगुल० असंखे० । अणु० अप्पप्पणो पगदिअंतरं कादव्वं ।

एवं उक्कस्संतरं समत्तं

शरीर और कार्मणशरीरका चौबीस मुहूर्त है। बादर पृथ्वीकायिकअपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। सब सूक्ष्मोंका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंका भङ्ग बादर पृथ्वीकायिक जीवोंके समान है।

५५८. अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीवोंके जानना चाहिए। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल ओघके समान है। अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अपने-अपने प्रकृति बन्धके समान है।

५५९. मनुष्यअपर्याप्त, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल ओघके समान है तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक शेष सब मार्गणाओंमें अपनी-अपनी प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अङ्गुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है जो असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी और उत्सर्पिणियोंके बराबर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल प्रकृतिबन्धके अन्तर कालके समान है। आयु जिनके हैं उनके उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है जो कि असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी और उत्सर्पिणियोंके बराबर है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल अपने-अपने प्रकृतिबन्धके अन्तर कालके समान करना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर काल समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६०. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं जह० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । अज० णत्थि अंतरं । तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-तिरिक्खग०-आहारदुग-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-तित्थय०-णीचा० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं । एवं ओघभंगो कायजोगि-ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारगे त्ति ।

५६१. तिरिक्खेसु तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-तिरिक्खगदि०४ जह० अज० उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं । एवं तिरिक्खोघं ओरालियमि० [कम्मइ०-] मदि०-सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि-अणाहारे त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगेसु देवगदि०४-तित्थय० जह० अज० उक्कस्सभंगो ।

५६२. मणुस०३ खवगपगदीणं ओघो । सेसाणं उक्कस्सभंगो । णवरि मणुसि० खवगपगदीणं वासपुधत्तं० ।

५६३. एइंदिय-बादरेइंदिय-पज्जत्ता अपज्जत्ता मणुसायु० तिरिक्खगदि०४ उक्कस्सभंगो । सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं । सव्वसुहुमाणं मणुसायु० ओघं ।

---

५६०. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगति, आहारकद्विक, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, तीर्थङ्कर और नीचगोत्र इनका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी,नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

५६१. तिर्यञ्चोंमें तीन आयु, वैक्रियिक छह और तिर्यञ्चगति चतुष्ककी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल उत्कृष्टके समान है ।

५६२. मनुष्यत्रिकमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर काल वर्षपृथक्त्व है ।

५६३. एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायु और तिर्यञ्चगतिचतुष्कका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । सब सूक्ष्म जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं । पुढवि०--आउ०-तेउ०-वाउ० तिरिक्खायु० जह० अज० णत्थि अंतरं । सेसाणं जह० जह० एग०, उक्क० अंगुलस्स असंखे० । अज० णत्थि अंतरं । मणुसायु० ओघं । बादरपुढवि०अपज्जत्ता मणुसायु० ओघं । सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं । एवं बादरआउ०–तेउ०--वाउ०अपज्जत्ता । वणप्फदि-णियोद---सव्वबादरवणप्फदि--णियोद–बादरवणप्फदिपत्तेय० तस्सेव अपज्जत्ता० मणुसायु० ओघं । सेसाणं जह० अज० णत्थि अंतरं ।

५६४. पंचिंदि०-तस०--पंचमण०--पंचवचि०--इत्थि०--पुरिस०--आभि०-सुद०-ओधि०--मणपज्जव०—संजद–सामाइ०—छेदो०--परिहार०--संजदासजद---चक्खुदं०--ओधिदं०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइग०-सण्णि त्ति एदेसिं मणुसभंगो । णवरि खवग-पगदीणं सेढिविसेसो णादव्वो । अवगदवे० सव्वपगदीणं जह० अज० जह० एग०, उक्क० छम्मासं० । एवं सुहुमसंप० । सेसाणं णिरयादि याव सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति सव्वपगदीणं अप्पप्पणो उक्कस्सभंगो ।

एवं अंतरं समत्तं

समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है जो असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणियों और उत्सर्पिणियोंके बराबर है । अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है । बादर पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है । इसी प्रकार बादर जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त और बादर वायु-कायिक अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । वनस्पतिकायिक, निगोद जीव, सब बादर वन-स्पतिकायिक, सब बादर निगोद जीव, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और उनके अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका अन्तर काल नहीं है ।

५६४. पञ्चेन्द्रिय, त्रसकायिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, चक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी, शुक्ल लेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और संज्ञी इनका भङ्ग मनुष्योंके समान है । इतनी विशेषता है कि क्षपक प्रकृतियोंकी श्रेणीविशेष जाननी चाहिए । अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिए । शेष नरकगतिसे लेकर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों तक शेष सब मार्गणाओंमें सब प्रकृ-तियोंका भङ्ग अपने-अपने उत्कृष्टके समान जानना चाहिए ।

इस प्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ ।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

भावपरूवणा

५६५. भावं दुविधं–जहण्णयं उक्कस्सयं च। उक्कस्सए पगदं। दुवि०–ओघे० आदे०। ओघे० सव्वपगदीणं उक्क० अणु० बंधगा त्ति को भावो? ओदइगो भावो। एवं अणाहारग त्ति णेदव्वं।

५६६. जहण्णए पगदं। दुवि०–ओघे० आदे०। [ओघे०] सव्वपगदीणं जह० अज० को भावो? ओदइगो भावो। एवं याव अणाहारग त्ति णेदव्वं।

एवं भावं समत्तं

अप्पाबहुगपरूवणा

५६७. अप्पाबहुगं दुविधं–जीवअप्पाबहुगं चेव ट्ठिदिअप्पाबहुगं चेव। जीवअप्पाबहुगं तिविधं–जहण्णयं उक्कस्सयं अजहण्णअणुक्कस्सयं चेव। उक्कस्सए पगदं। दुवि०–ओघे० आदे०। ओघे० तिण्णिआयुगाणं वेउव्वियछ०-तित्थय० सव्वत्थोवा उक्कस्सट्ठिदिबंधगा जीवा। अणुक्कस्सट्ठिदिबंधगा जीवा असंखेंज्जगुणा। आहारदुगं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा। अणु० जीवा संखेंज्जगुणा। सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा। अणु० जीवा अणंतगु०। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०–कम्मइ०–णवुंस०–कोधादि०४–मदि०–सुद०–असंज०–अचक्खुदं०-

---

भावप्ररूपणा

५६५. भाव दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है? औदयिक भाव है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

५६६. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिके बन्धक जीवोंका कौन भाव है? औदयिक भाव है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

इस प्रकार भाव समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्वप्ररूपणा

५६७. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जीव अल्पबहुत्व और स्थिति अल्पबहुत्व। जीव अल्पबहुत्व तीन प्रकारका है—जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्य उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन आयु, वैक्रियिक छह और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे अल्प हैं। इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे अल्प हैं। इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे अल्प हैं। इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०--मिच्छादि०--असण्णि०--आहार०-अणाहारगे त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० सव्व० उक्क० जीवा । अणु० जीवा संखेँज्जगु० । णवरि ओरालियका० तित्थय० अणु० द्विदि० संखेँज्जगु० । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति एसु असंखेँज्जाणंतरासीणं तेसिं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा । अणु० जीवा असंखेँज्ज० । एसु संखेँज्जरासि तेसिं सव्वत्थोवा उक्क० जीवा । अणु० जीवा संखेँज्जगु० । णवरि एइंदि०-वणप्फदि-णियोदेसु तिरिक्खायु० ओघं ।

एवं उक्कस्सं समत्तं

५६८. जहण्णए पगदं । दुवि०---ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०--उज्जो०-णीचा० सव्वत्थोवा जह० । अज० अणंतगु० । सेसाणं जह० सव्वत्थोवा जीवा । अज० असंखेँज्ज० । णवरि आहारदुगं तित्थयरं च उक्कस्सभंगो । एवं ओघभंगो कायजोगि--ओरालियका०--णवुंस०--कोधादि०४--अचक्खु०-भवसि०-आहारगे त्ति ।

५६९. तिरिक्खेसु तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०--उज्जो०--णीचा० सव्वत्थोवा जह० । अज० अणंतगु० । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० जीवा । अज०

असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिकी अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक शेष सब मार्गणाओंमें जो असंख्यात और अनन्त राशिवाली मार्गणायें हैं, उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । तथा इनमें जो संख्यात राशिवाली मार्गणायें हैं, उनमें उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पति और निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग ओघके समान है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

५६८. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे क्षपक प्रकृतियाँ, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग उत्कृष्टके समान है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

५६९. तिर्यञ्चोंमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवा असंखें० । [एवं] ओरालियमि०-कम्मइ०-मदि०-सुद०--असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादि०--असण्णि-अणाहारगे त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४--तित्थयरं उक्कस्सभंगो । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति असंखेंज्ज--संखेंज्ज--अणंतरासीणं उक्कस्सभंगो । णवरि एइंदिय--वणप्फदि--णियोदेसु तिरिक्खायु० ओघं ।

५७०. अजहण्णमणुक्कस्सए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं सव्वत्थोवा जह० जीवा । उक्क० असंखेंज्ज० । अजहण्णमणुक्क० अणंतगु० । आहार-दुगं सव्वत्थोवा जह० हिदि० । उक्क० हिदि० संखेंज्जगु० । अज०अणु० संखेंज्ज० । तिण्णिआयु०--वेउव्वियछ० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखेंज्ज० । अज०अणु० असंखेंज्ज० । तिरिक्खगदि--तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखें० । अज०अणु० अणंतगु० । तित्थय० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० संखेंज्ज० । अज०अणु० असंखेंज्ज० । सेसाणं पंचदंसणावरणादीणं सव्वत्थोवा उक्क० । जह० अणंतगु० । अज०अणु० असंखेंज्जगु० ।

अजघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्र-काययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थङ्करका भङ्ग उत्कृष्टके समान है। नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक शेष जितनी मार्गणायें हैं, उनमें असंख्यात, संख्यात और अनन्त राशिवाली मार्गणाओंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पति और निगोद जीवोंमें तिर्यञ्चायुका भङ्ग ओघके समान है।

५७०. जघन्य उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्यअनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। आहारकद्विककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। तीन आयु और वैक्रियिक छहकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष पाँच दर्शनावरण आदि प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७१. आदेसेण णेरइएसु दोण्णं आयु०सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखेँज्ज० । अज०मणुक्क० असंखेँज्जगु० । णवरि मणुसायु० संखेँज्जगुणं कादव्वं । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेँ० । अज०मणुक्कस्स० असंखेँज्ज० । एवं सव्वणिरयाणं । णवरि विदियादि याव छट्ठि त्ति इत्थि०-णवुंस०--तिरिक्खगदि-तिग-पंचसंठा०--पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग--दुस्सर--अणादें०--णीचागो० सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेँज्जगु० । अज०अणु० ट्ठिदि० असंखेँज्ज० । णवरि सत्तमाए तिरिक्खगदि०४ णिरयोघं । मणुसग०--मणुसाणु०--उच्चा० तिरिक्खायुभंगो । एवं सव्वदेवाणं । णवरि आणद-पाणद० इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें०--णीचा० सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेँज्जगु० । अज०अणु० असंखेँज्ज० । सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क० । जह० संखेँज्ज० । अज०अणु० असंखेँज्ज० । एवं उवरिमगेवज्जा त्ति । अणुदिस-अणुत्तर-सव्वट्ठे मणुसायु० देवोघं । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेँज्ज० । अज०अणु० असंखेँज्ज० । णवरि सव्वट्ठे संखेँज्जगु० ।

---

५७१. आदेशसे नारकियोंमें दो आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि मनुष्यायुको संख्यातगुणा करना चाहिए। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि दूसरी पृथ्वीसे लेकर छठी पृथ्वी तकके नारकियोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगतित्रिक, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथ्वीमें तिर्यञ्चगतिचतुष्कका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि आनत और प्राणत कल्पवासी देवोंमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं इसी प्रकार उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। अनुदिश, अनुत्तर और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातगुणे करने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७२. तिरिक्खेसु चदुआयु-वेउव्वियछ०-तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० ओघं। सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० अणंतगु०। अज०अणु० असंखेँज्ज०। पंचिंदियतिरिक्ख०३ सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० असंखेँज्ज०। अज०अणु० असंखेँज्ज०। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० असंखेँज्ज०। अज०अणु० असंखेँज्ज०।

५७३. मणुसेसु खवगपगदीणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँज्ज०। अज० अणु० असंखेँज्ज०। णिरय-देवायु०-तित्थय० थोवा उक्क०। जह० संखेँज्ज०। अज० अणु० संखेँज्ज०। वेउव्वियछ० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेँज्ज०। अज०अणु० संखेँज्ज०। आहारदुगं ओघं। सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० असंखेँज्ज०। अज० अणु० असंखेँज्ज०। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु असण्णिपगदीणं खवगपगदीणं च ओघं। णवरि संखेज्जगुणं कादव्वं। मणुसअपज्जत्तेसु णिरयोघं।

५७४. एइंदिएसु दोआयु० ओघं। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा०

---

५७२. तिर्यञ्चोंमें चार आयु, वैक्रियिक छह, तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

५७३. मनुष्योंमें क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। नरकायु, देवायु और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। वैक्रियिक छहकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनके अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें असंज्ञी सम्बन्धी प्रकृतियों और क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है।

५७४. एकेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी उद्योत और नीचगोत्र इनकी जघन्य स्थितिके *बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वत्थोवा जह० । उक्क० अणंतगु० । अजह० असंखेँज्जगु० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेँज्जगु० । अज०अणु० असंखेँज्ज० । एवं सव्वविगलिंदिय--सव्व-पंचकायाणं । पंचिंदिय-तसअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

५७५. पंचिंदिय--तस०२ खवगपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखें० । अज०अणु० असंखें० । पंचदंस०-असादा०-मिच्छ०-बारसक०--अट्ठणोक०-तिरिक्ख-गदि-मणुसगदि--एइंदि०-पंचिंदि०-ओरालि०--तेजा०-क०-छस्संठा०--ओरालि०अंगो०-छस्संघ०--वण्ण०४--दोआणु०--अगु०४--आदाउज्जो०---दोविहा०--तस०४--थावरादि-पंचयुगल-अजस०-णिमि०-णीचा० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखेँज्ज० । अज०-अणु० असंखेँज्ज० । णवरि सेसो णादव्वो । चदुआयु०-वेउव्वियछ० थोवा उक्क० । जह० असंखेँज्ज० । अज०अणु० असंखेँज्ज० । तिण्णिजादि-सुहुमणामाणं अपज्ज०-साधार० देवगदिभंगो । आहारदुगं तित्थय० ओघं ।

५७६. पंचमण०-तिण्णिवचि० चदुआयु० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० असंखें० ।

उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय और सब पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंके समान है ।

५७५. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । पाँच दर्शनावरण, असाता-वेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, आठ नोकषाय, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, एकेन्द्रिय जाति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थावर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति, निर्माण और नीचगोत्र इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इतनी विशेषता है कि शेष अल्पबहुत्व जानना चाहिए । चार आयु और वैक्रियिक छहकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । तीन जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इनका भङ्ग देवगतिके समान है । आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनका भङ्ग ओघके समान है ।

५७६. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें चार आयुओंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज०अणु० असंखेज्ज० । आहारदुगं तित्थय० ओघं । इत्थि०-णवुंस०-णिरयगदि-चदुजादि-पंचसंठा०-पंचसंघ०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर० सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेज्ज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखे० । अज०अणु० असंखे० । दोवचि० तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि-ओरालियका० ओघं ।

५७७. ओरालियमि० देवगदि०४-तित्थय० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० संखेज्ज० । अज०अणु० संखेज्ज० । सेसाणं ओघं । एवं कम्मइग०-अणाहार० । वेउव्वियका० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेज्ज० । अज०अणु० असंखेज्ज० । णवरि इत्थिवेदादीणं विसेसाण । दोआयु० देवोघं । एवं वेउव्वियमि० । णवरि आयु० णत्थि । आहार० आहारमिस्से सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेज्ज० । अज०अणु० संखेज्ज० । देवायु० मणुसिभंगो ।

५७८. इत्थि०-पुरिस० खवगपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेज्ज० ।

अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, नरकगति, चार जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार, दुर्भग और दुःस्वर इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो वचनयोगी जीवोंका भङ्ग त्रस पर्याप्त जीवोंके समान है। काययोगी और औदारिक काययोगी जीवोंका भङ्ग ओघके समान है।

५७७. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद आदि प्रकृतियोंकी विशेषता जाननी चाहिए। दो आयुओंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके आयुका बन्ध नहीं होता। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। देवायुका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

५७८. स्त्रीवेदवाले और पुरुषवेदवाले जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज०अणु० असंखेंज्ज०। णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खुदं०-भवसि०-आहार० मूलोघं। अवगदवे० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा उक्क०। जह० संखेंज्ज०। अज०अणु० संखेंज्ज०। एवं सुहुमसंप०।

५७९. मदि०-सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि त्ति तिरिक्खोघं। विभंगे चदुआयु० मणजोगिभंगो। सेसाणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेंज्ज०। अज०अणु० असंखेंज्ज०। णवरि सत्थाणपगदिविसेसो णादव्वो। आभि०-सुद०-ओधि० देवायु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं। असादा०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखें०। अज०अणु० असंखेंज्ज०। मणुसायु० देवोघं। सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह०। उक्क० असंखेंज्ज०। अज०अणु० असंखेंज्ज०। मणपज्ज० असादावे०-अरदि-सोग-अथिर-असुभ-अजस० सव्वत्थोवा जह०। उक्क० संखेंज्ज०। अज०अणु० संखेंज्ज०। सेसाणं [सव्वत्थोवा] जह०। उक्क० संखेंज्ज०। अजह०अणु० संखेंज्ज०। णवरि आयु० मणुसि०भंगो। एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०।

इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य, और आहारक जीवोंका भङ्ग मूलोघके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य-स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए।

५७९. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंमें अपनी-अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। विभङ्गज्ञानी जीवोंमें चार आयुओंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि स्वस्थान प्रकृतिगत विशेषता जाननी चाहिए। आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें देवायु, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि आयुका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। इसी प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत और परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८०. संजदासंजदे असादावे०-अरदि-सोग-अथिर--असुभ-अजस० सव्वत्थोवा उक्क० । जह० संखेंज्ज० । अज०अणु० असंखेंज्ज० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखें० । अज०अणु० असंखेंज्ज० । णवरि तित्थय० संखेंज्ज० । आयु० णारगभंगो । ओधिदंस०--सम्मादि०--वेदगस०--उवसमसम्मा० ओधिणाणिभंगो । चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो ।

५८१. तेऊए मणुसगदिपंचगं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेंज्ज० । अज० अणु० असंखेंज्ज० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेंज्ज० । अज०अणु० असंखेंज्ज० । णवरि इत्थिवेदादिसत्थाणपगदिविसेसो णादव्वो । एवं पम्माए । [सुक्काए वि एवं चेव ।] णवरि सुक्काए मणुसगदिपंचगं सव्वत्थोवा उक्क० ट्ठिदिबं० । जह० ट्ठिदि० संखेंज्ज० । अज० अणु० असंखेंज्ज० ।

५८२. खइगसं० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० असंखेंज्ज० । अज० अणु० असंखेंज्ज० । णवरि दोआयु० सव्वट्ठ०भंगो । णवरि मणुसगदिपंचगं सव्वत्थोवा जह० । उक्क० संखेंज्ज० । अज० अणु० असंखेंज्ज० । सासणे सव्वपगदीणं सव्व-

---

५८०. संयतासंयत जीवोंमें असातावेदनीय, अरति, शोक, अस्थिर, अशुभ और अयशःकीर्ति इनकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिकी अपेक्षा संख्यातगुणे कहने चाहिए। आयु कर्मका भङ्ग नारकियोंके समान है। अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। चक्षुदर्शनी जीवोंका भङ्ग त्रसपर्याप्त जीवोंके समान है।

५८१. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद आदि स्वस्थान प्रकृतिगत विशेषताको जानना चाहिए। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति पञ्चककी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं।

५८२. क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग सर्वार्थसिद्धिके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति पञ्चककी जघन्य स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्थोवा उक्क० । जह० असंखे० । अज०अणु० असंखे० । सम्मामि० ओधिभंगो । सण्णीसु चदुआयु० पंचिंदियभंगो । सेसाणं मणुसोघं । एवं जीवअप्पाबहुगं समत्तं

ट्ठिदिअप्पाबहुगपरूवणा

५८३. ट्ठिदिअप्पाबहुगं तिविधं--जहण्णयं उक्कस्सयं जहण्णुक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघेण सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो । यट्ठिदिबंधो विसेसाधिओ । एवं याव अणाहारग त्ति णेदव्वं ।

५८४. जहण्णए पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसेसा० । एवं याव अणाहारग त्ति णेदव्वं ।

५८५. जहण्णुक्कस्सए पगदं । दुविधं--ओघे० आदे० । ओघे० खवगपगदीणं चदुआयुगाणं सव्वत्थोवा जहण्णयो ट्ठिदिबंधो । यट्ठिदिबंधो विसेसा० । उक्कसट्ठिदिबंधो असंखेज्जगुणो । यट्ठिदि० विसेसा० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह० । यट्ठिदि० विसेसा० । उक्क०ट्ठिदि० संखेज्ज० । यट्ठिदि० विसेसा० । एवं ओघभंगो मणुस०३-पंचिंदि०--तस०२--पंचमण०--पंचवचि०--कायजोगि--ओरालियका०--इत्थि०-णवुंस०-कोधादि०४-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-सण्णि-अणाहारए त्ति ।

अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे जघन्य स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान हैं । संज्ञी जीवोंमें चार आयुओंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है । इस प्रकार जीव अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

स्थिति अल्पबहुत्वप्ररूपणा

५८३. स्थिति अल्पबहुत्व तीन प्रकारका है—जघन्य, उत्कृष्ट और जघन्योत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है–ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थिति बन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिए ।

५८४. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है--ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिए ।

५८५. जघन्योत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है--ओघ और आदेश । ओघसे क्षपक प्रकृतियों और चार आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थिति बन्ध विशेष अधिक है । इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार ओघके समान मनुष्यत्रिक पञ्चेन्द्रिय-द्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिक काययोगी, स्त्रीवेदी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८६. णेरइएसु सव्वपगदीणं सव्वत्थोवा जह० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क० असंखेंज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । एस भंगो सव्वणिरय–सव्वदेवाणं ओरालियमि०-वेउव्विय०–वेउव्वियमि०–आहार०–आहारमि०–कम्मइ०–परिहार०–संजदासंजद–वेदगसं०-सम्मामि० ।

५८७. तिरिक्खेसु चदुआयु० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क० असंखेंज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । सेसाणं सव्वकम्माणं सव्वत्थोवा जह०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क०ट्ठिदि० संखेंज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । एवं तिरिक्खोघं पंचिंदियतिरिक्ख०३-मदि०-सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादिट्ठि त्ति । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० णिरयभंगो । एवं मणुसअपज्जत्त-पंचिंदि०-तसअपज्ज० ।

५८८. एइंदिएसु दोआयु० णिरयोघं । सेसाणं सव्वत्थोवा जह०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । एस भंगो सव्वएइंदियाणं सव्वविगलिंदियाणं पंचकायाणं च ।

५८९. अवगदवे० सादा०-जस०-उच्चा० सव्वत्थोवा जह०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क०ट्ठिदि० असंखेंज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । सेसाणं सव्वत्थोवा जह०

---

५८६. नारकियोंमें सब प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। यह भङ्ग सब नारकी, सब देव, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, वेदकसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

५८७. तिर्यञ्चोंमें चार आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष सब कर्मोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिविशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंके समान पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिक, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

५८८. एकेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग नारकियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। यह भङ्ग सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए।

५८९. अपगतवेदी जीवोंमें सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क० संखेॅज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । एवं सुहुमसंप० । णवरि सव्वाणं संखेॅज्जगुणं कादव्वं ।

५९०. आभि०-सुद०-ओधि० खवगपगदीणं ओघं । सेसाणं देवोघं । एस भंगो मणपज्जव-संजद-सामाइय-छेदो०-ओधिदं०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइग०-उवसम० ।

५९१. तेउ-पम्माए देवगदिभंगो । सासणे तिरिक्खोघं । असण्णि० णिरय-देवायूणं सव्वत्थोवा जह०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क०ट्ठिदि० असंखेॅज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । सेसाणं तिरिक्खोघं । णवरि तिरिक्ख-मणुसायु० मणुसअपज्जत्त-भंगो । वेउव्वियछक्कं सव्वत्थोवा जह०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । एवं ट्ठिदिअप्पाबहुगं समत्तं ।

भूयो ट्ठिदिअप्पाबहुगपरूवणा

५९२. भूयो ट्ठिदिअप्पाबहुगं दुविधं--सत्थाणट्ठिदिअप्पाबहुगं चेव परत्थाणट्ठिदि-अप्पाबहुगं चेव । सत्थाणट्ठिदिअप्पाबहुगं दुविधं--जहण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-वण्ण४-अगु० ४-तस-थावर-आदाउज्जो०-णिमि०-तित्थय०--पंचंत० सव्वत्थोवा उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि०

जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सब प्रकृतियोंका संख्यातगुणा करना चाहिए।

५९०. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। यह भङ्ग मनः-पर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

५९१. पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवगतिके समान भङ्ग है। सासादन सम्यग्दृष्टि जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। असंज्ञी जीवोंमें नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है। वैक्रियिक छहका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इस प्रकार स्थितिअल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

भूयः स्थितिअल्पबहुत्वप्ररूपणा

५९२. भूयः स्थितिअल्पबहुत्व दो प्रकारका है—स्वस्थान स्थितिअल्पबहुत्व और परस्थान स्थितिअल्पबहुत्व। स्वस्थान स्थितिअल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रस, स्थावर, आतप, उद्योत, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। सातावेदनीयका उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । सादावे० सव्वत्थोवा उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । असादावे० उक्क० ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा पुरिस०--हस्स-रदीणं उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । इत्थि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सोलसक० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । मिच्छ० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । [यट्ठिदि० विसे० ।]

५९३. सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । णिरय-देवायु० उक्क०ट्ठिदि० संखेंज्जगु० । यट्ठिदि० विसे० ।

५९४. सव्वत्थोवा देवगदि० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । मणुसग० उक्क० ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । णिरय--तिरिक्खगदि० उक्क०ट्ठिदि० [विसे०] यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा तिण्णिजादीणं उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । एइंदि०-पंचिंदि० उक्क० ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा आहार०-उक्क० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । चदुण्णं सरीराणं उक्क०ट्ठिदि० संखेंज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा समचदुर० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । णग्गोद० उक्क०

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाता-वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। पुरुषवेद, हास्य और रति इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५९३. तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायु और देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५९४. देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगति और तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। तीन जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय जाति और पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। आहारक शरीरका स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थिवन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। समचतुरस्र संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे न्यग्रोधपरिमण्डल संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। सादि० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। खुज्ज० उ०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। वामण० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। हुंड० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। सव्वत्थोवा आहार०अंगो० उक्क०ट्ठिदि०। यट्ठिदि० विसे०। दोण्णं अंगो० उक्क०ट्ठिदि० संखेंज्ज०। यट्ठिदि० विसे०।

५९५. जहा संठाणाणं तहा संघडणाणं। जहा गदीणं तहा आणुपुव्वीणं। सव्वत्थोवा पसत्थ० उक्क०ट्ठिदि०। यट्ठिदि० विसे०। अप्पसत्थ० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। सव्वत्थोवा सुहुम-अपज्जत्त-साधारणाणं उक्क०ट्ठिदि०। यट्ठिदि० विसे०। बादर-पज्जत्त-पत्तेय० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। सव्वत्थोवा थिरादिछ०-उच्चा० उक्क०ट्ठिदि०। यट्ठिदि० विसे०। अथिरादिछ०-णीचा० उक्क०ट्ठिदि० विसे०। यट्ठिदि० विसे०। एवं ओघभंगो पंचिंदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-पुरिसवे०-कोधादि०४-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-सण्णि-आहारए त्ति।

५९६. आदेसेण णेरइएसु पंचणा०-णवदंसणा०-दोआयु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-उज्जो०-तस०४-णिमि०-तित्थय०-

---

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्वातिसंस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे कुब्जक संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वामन संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हुण्ड संस्थानका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। आहारक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आङ्गोपाङ्गोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५९५. पहले जिस प्रकार संस्थानोंका अल्पबहुत्व कह आए हैं, उसी प्रकार संहननोंका कहना चाहिए। तथा जिस प्रकार गतियोंका कह आये हैं, उसी प्रकार आनुपूर्वियोंका कहना चाहिए। प्रशस्त विहायोगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रशस्त विहायोगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बादर, पर्याप्त और प्रत्येकका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। स्थिरादि छह और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अस्थिरादि छह और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार ओघके समान पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

५९६. आदेशसे नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो आयु, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचंत० सव्वत्थोवा उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । सेसाणं ओघं । एवं सव्व-णिरयाणं । णवरि सत्तमाए सव्वत्थोवा मणुसग०-मणुसाणु०-उज्जो० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० उक्क० संखेज्ज० । यट्ठिदि० विसे० ।

५६७. तिरिक्खेसु ओघं । णवरि सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उक्क० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । देवायु० उक्क०ट्ठिदि० संखेज्ज० । यट्ठिदि० विसे० । णिरयायु० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा देवगदि० उक्क० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । मणुसगदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । तिरिक्खगदि० उक्क० ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । णिरयगदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० ।

५६८. सव्वत्थोवा चदुण्णं जादीणं उक्क० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । पंचिंदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा ओरालिय० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । तिण्णि सरीराणं उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० ।

५६९. संठाणं ओघं । सव्वत्थोवा ओरालि०अंगो० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि०

अगुरुलघु चतुष्क, उद्योत, त्रस चतुष्क, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथ्वीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उद्योतका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५६७. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५६८. चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। औदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तीन शरीरोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

५६९. संस्थानोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । वेउव्विय०अंगो० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा वज्जरिस० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । वज्जणा० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । णारायण० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । अद्धणा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । खीलिय०-असंपत्त० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । यथा गदि० तथा आणुपुव्वि० ।

६००. सव्वत्थोवा थावरादि०४ उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । एवं पंचिंदिय–तिरिक्ख०३ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु पंचणा०-णवदंसणा०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि० अंगो०--वण्ण०४-अगु०४--आदाउज्जो०--णिमि०--पंचंत० सव्वत्थोवा उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । सव्वत्थोवा पुरिस० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । इत्थि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । हस्स-रदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । णवुंस०-अरदि-सोग--भय-दु० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । सोलसक० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि विसे० । मिच्छ० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । दोआयु० णिरयभंगो ।

उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। वज्रर्षभ नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वज्रनाराच संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नाराचसंहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अर्द्धनाराच संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे कीलकसंहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहननका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। गतियोंका पहले जिस प्रकार अल्पबहुत्व कह आये हैं उसी प्रकार आनुपूर्वियोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिए।

६००. स्थावर आदि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च त्रिकके जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पांच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, आतप, उद्योत, निर्माण और पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। पुरुषवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। दो आयुओंका भङ्ग नारकियोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०१. सव्वत्थोवा मणुसग० उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । तिरिक्खग० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । एवं आणुपु० । सव्वत्थोवा पंचिंदि० उक्क० ट्ठिदि० । यट्ठिदि० विसे० । चदुरिं० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । तीइंदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । बीइंदि० उक्क०ट्ठिदि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । एइंदि० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६०२. सव्वत्थोवा तस०४ उक्क०ट्ठिदि० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सेसाणं णिरयभंगो ।

६०३. मणुसेसु णिरयभंगो । णवरि आयु० ओघं । सव्वत्थोवा आहार० उ० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । ओरालि० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि०-तेजा०-क० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा आहार०अंगो० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । ओरालि०अंगो० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि० अंगो० उ० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मणुसअपज्जत्त० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त-भंगो ।

---

६०१. मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे त्रीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे द्वीन्द्रियजातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६०२. त्रसचतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है।

६०३. मनुष्योंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। आहारकद्विकका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यतागुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर और कार्मण शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। आहारक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। मनुष्य अपर्याप्तकोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०४. देवाणं णिरयभंगो। णवरि भवण०-वाणवेंत०-जोदिसिय०-सोधम्मी-साणं सव्वत्थोवा पंचिंदि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। एइंदि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। एवं तस-थावर०। संघडणाणं तिरिक्खोघं। आणद याव णवगेवज्जा त्ति सव्वत्थोवा पुरिस०-हस्स-रदि० उ० ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। इत्थि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सोलसक० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। मिच्छ० उ०ट्ठि० विसे०। [यट्ठि० वि०]। अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा हस्स-रदि० उक०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। बारसक० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०।

६०५. एइंदि०-विगलिंदि०-पंचिदिय-तसअपज्ज०-पंचकायाणं च पंचिंदिय-तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। ओरालियका० मणुसभंगो। ओरालियमि० सव्वत्थोवा देवगदि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। मणुसग० उक०ट्ठि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०।

---

६०४. देवोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्म ऐशान कल्पवासी देवोंमें पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थिति विशेष अधिक है। इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंका जानना चाहिए। संहननोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। आनत कल्पसे लेकर नवग्रैवेयक तकके देवोंमें पुरुषवेद, हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद, अरति-शोक, भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६०५. एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रसअपर्याप्त और पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। औदारिककाययोगी जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिक्खग० उक्क०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सेसाणं अपज्जत्तभंगो। वेउव्वियका० देवोघं। एवं वेउव्वियमि०।

६०६. आहार०-आहारमि० सव्वत्थोवा पंचणोक० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। चदुसंज० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा थिर-सुभ-जसगि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। तप्पडिपक्खाणं उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०।

६०७. कम्मइग० पंचणा०--णवदंसणा०--वण्ण०४-अगु०४-आदाउज्जो०--तस-थावरादि४युगल-णिमि०--तित्थय०--पंचंत० सव्वत्थोवा उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा चदुरिं० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। तीइंदि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। बेइंदि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। एइंदि०--पंचिंदि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सेसाणं ओघं। णवरि गदी ओरालियमिस्सभंगो।

६०८. इत्थिवेदे देवोघं। णवरि आहार० उ०ट्ठि० थोवा। यट्ठि० विसे०। चदुण्णं सरीराणं उ०ट्ठि० संखेंज्जगु०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा आहार० अंगो० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। ओरालि०अंगो० उ०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०।

है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। वैक्रियिककाययोगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए।

६०६. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार सञ्ज्वलनोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६०७. कार्मणकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, त्रस और स्थावर आदि चार युगल, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे त्रीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे द्वीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि गतियोंका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है।

६०८. स्त्रीवेदी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार शरीरोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। आहारक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वि०अंगो० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। संघडणं देवोघं। णवरि खीलिय०-असंपत्त० दोण्णं उ०ट्ठि० विसे०।

६०६. णवुंसगे ओघं। णवरि सव्वत्थोवा चदुआयु-जादी उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। पंचिंदि० उक्क०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा थावरादि०४-उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। तस०४ उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। अवगदवेदे सव्वाणं सव्वत्थोवा उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०।

६१०. मदि०-सुद०-विभंग० ओघं। आभि०-सुद०-ओधि० सव्वत्थोवा सादा० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। असादा० उ०ट्ठि० संखेज्जगु०। यट्ठि० विसे०। एवं परियत्तमाणीणं। सेसाणं सव्वत्थोवा उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। णवरि मोह० सव्वत्थोवा हस्स-रदि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। पंचणोक० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि विसे०। बारसक० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। देवायु० उ०ट्ठि० असंखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। मणपज्जव०--संजद--सामाइ०---छेदो०--परिहार०---संजदासंजद---ओधिदं०--सुक्कले०-

---

यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। संहननोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कीलक संहनन और असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन इन दोनोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६०९. नपुंसकवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि चार आयुओं और चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। स्थावर आदि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे त्रस चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६१०. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और अवधिज्ञानी जीवोंमें साता प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असाता वेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इतनी विशेषता है कि मोहनीय कर्ममें हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्धविशेष अधिक है। इससे बारह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० आभिणिबोधि०भंगो। णवरि एदेसिं मग्गणाणं अप्पप्पणो पगदीओ णादूण अप्पाबहुगं साधेदव्वाओ।

६११. सासणे सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। देवायु० उ०ट्ठि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। असंज०--अब्भवसि०--मिच्छादि० मदि०भंगो।

६१२. किण्णले० णवुंसगभंगो०। णील-काऊणं सव्वत्थोवा देवगदि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। णिरयग० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। मणुसग० उ०ट्ठि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। तिरिक्खग० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा चदुजादि० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। पंचिंदि० उ०ट्ठि० संखेज्जगु०। [यट्ठि० विसे०।] सेसाणं ओघं।

६१३. तेउ० सोधम्मभंगो। णवरि सव्वत्थोवा आहार० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। वेउव्वि० उ०ट्ठि० संखेज्जगु०। यट्ठि० विसे०। ओरालि०-तेजा०-क० उक०ट्ठि० संखेज्जगु०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा देवगदि० उ०ट्ठि०। यट्ठि०

अधिक है। मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार विशुद्धि संयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाओंमें अपनी अपनी प्रकृतियोंको जानकर अल्पबहुत्व साध लेना चाहिए।

६११. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। असंयतसम्यग्दृष्टि, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है।

६१२. कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें नपुंसकवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। चार जातियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६१३. पीतलेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म कल्पके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है। कि आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे वैक्रियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिक शरीर, तैजस शरीर और कार्मण शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । मणुसगदि० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं तिण्णिआणु० । एवं पम्माए वि । णवरि सहस्सारभंगो ।

६१४. असण्णीसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० असंखे० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० उ०ट्ठि० असंखे० । [यट्ठि० विसे० ।] सव्वत्थोवा देवगदि० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० उ० ट्ठि० विसे० । यट्ठिदि० विसे० । तिरिक्खग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा चदुरिंदि० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तीइंदि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बीइंदि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एइंदि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचिंदि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । गदिभंगो आणुपुव्वि० । थावरादि०४ उ०ट्ठि० थोवा । यट्ठि० विसे० । तस०४ उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सेसा० अपज्जत्तभंगो । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं उक्कस्सं समत्तं

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार तीन आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना चाहिए । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनके सहस्रार कल्पके समान भङ्ग जानना चाहिए ।

६१४. असंज्ञी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । चतुरिन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे त्रीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे द्वीन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे एकेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पञ्चेन्द्रिय जातिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । चार आनुपूर्वियोंका भङ्ग चार गतियोंके समान है । स्थावर आदि चारका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे त्रस चतुष्कका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। तथा अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाय- योगी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१५. जहण्णए पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०--वण्ण०४-अगु०४--आदाउज्जो०--णिमि०--तित्थय०--पंचंत० सव्वत्थोवा जह० ट्ठिदि० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा चदुदंस० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचदंस० ज०ट्ठि० असंखे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा सादावे० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । असादावे० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा लोभसंज० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६१६. सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । णिरय-देवायु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । [सव्वत्थोवा] तिरिक्ख-मणुसग०

---

६१५. जघन्यका प्रकरण है उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है--ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, आतप, उद्योत, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। चार दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। साता वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मान-संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६१६. तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। तिर्यञ्चगति और मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगतिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवग० ज० ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा पंचिंदि० ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । चदुरिं० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तीइंदि० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बीइंदि० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एइंदि० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६१७. सव्वत्थोवा ओरालि०-तेजा०-क० ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि० ज० ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । आहार ज० ट्ठि० संखेँज्जगु० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा ओरालि०अंगो० ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि०अंगो० ज० ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । आहार०अंगो० ज० ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । संठाण-संघडणं उक्कस्सभंगो ।

६१८. सव्वत्थोवा पसत्थ०---तस०४--थिरादिपंच ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा जस०--उच्चा० ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । अजस०-णीचा० ज० ट्ठि० असंखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । एवं ओघभंगो कायजोगि-ओरालि०-णवुंस०-कोधादि०४-अचक्खु०-भवसि०-आहारए त्ति ।

जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । पञ्चेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चतुरिन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे त्रीन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे द्वीन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे एकेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६१७. औदारिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे वैक्रियिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारकशरीरको जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । औदारिक आङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक आङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । संस्थान और संहननोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है ।

६१८. प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क और स्थिर आदि पाँचका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१९. णिरएसु उक्कस्सभंगो। णवरि पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० थोवा। यट्ठि० विसे०। अरदि-सोग० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। इत्थि० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। णवुंस० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सोलसक० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। एवं पढमाए।

६२०. विदियादि याव छट्ठि त्ति सव्वत्थोवा छदंस० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। अरदि-सोग० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। बारसक० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। इत्थि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। णवुंस० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०।

६२१. सव्वत्थोवा मणुसग० ज०ट्ठि०बं०। यट्ठि विसे०। तिरिक्खग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। एवं आणुपु०। सव्वत्थोवा समचदु० ज०ट्ठि०।

६१९. नारकियोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए।

६२०. दूसरीसे लेकर छठी तक पृथिवीमें छह दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६२१. मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार आनुपूर्वियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि विसे० । णग्गोद० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसाणं उक्कस्सभंगो। एवं संघड० ।

६२२. सव्वत्थोवा पसत्थ०--सुभग--सुस्सर--आदें०--उच्चा० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । थिर--सुभ--जसगि० ज०ट्ठि० थोवा० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं सत्तमाए ।

६२३. तिरिक्खेसु छण्णं कम्माणं णिरयोघं । आयु०४ मूलोघं । णामा० ओघं । णवरि सव्वत्थोवा जस० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु णिरयोघं ।

६२४. मणुसेसु मूलोघं । णवरि सव्वत्थोवा मणुसग० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जादी ओघं । सव्वत्थोवा तिण्णिसरीराणं ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि०-आहार० ज०ट्ठि०

चाहिए । समचतुरस्रसंस्थानका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे न्यग्रोध परिमंडल संस्थानका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष संस्थानोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व उत्कृष्टके समान है । तथा इसी प्रकार संहननोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व जानना चाहिए ।

६२२. प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे इनकी प्रतिपक्षभूत प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए ।

६२३. तिर्यञ्चोंमें छह कर्मोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व सामान्य नारकियोंके समान है । चार आयुओंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व मूलोघके समान है । तथा नामकर्मकी प्रकृतियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि यशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारकियोंके समान जानना चाहिए ।

६२४. मनुष्योंमें मूलोघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । पाँच जातियोंकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व ओघके समान है । तीन शरीरोंका जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । ओरालि०अंगो० ज०ट्ठि० थोवा । यट्ठि० विसे० । वेउव्वि०-आहार०अंगो० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसाणं ओघं । सव्वअपज्जत्त-सव्वविगलिंदिय-पंचकायाणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

६२५. देवाणं णिरयभंगो । णवरि थोवा पंचिंदि०-तस० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । एइंदि०-थावर० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६२६. एइंदिएसु तिरिक्खोघं । णवरि गदीणं णत्थि अप्पाबहुगं । पंचिंदय--पंचिंदियपज्जत्ता० सत्तण्णं कम्माणं ओघं । सव्वत्थोवा देवगदि० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं आणुपु० । सेसं ओघं । एवं तस--तसपज्जत्ता । णवरि विसेसो । सव्वत्थोवा मणुसग० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि०विसे० ।

स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे वैक्रियिक और आहारक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । औदारिक आङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे वैक्रियिक और आहारक आङ्गोपाङ्गका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है तथा शेष प्रकृतियोंकी मुख्यतासे अल्प-बहुत्व ओघके समान है । सब अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावर कायिक जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है ।

६२५. देवोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय जाति और त्रसका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे एकेन्द्रिय जाति और स्थावरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६२६. एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान अल्पबहुत्व है । इतनी विशेषता है कि इनमें गतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है । पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें सात कर्मोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है । देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार चार आनुपूर्वियोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंके जघन्य स्थितिबन्धका अल्पबहुत्व ओघके समान है । इसी प्रकार त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६२७. पंचमण०-तिण्णिवचि० सव्वत्थोवा चदुदंस० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । णिद्दा-पचला० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा लोभसंज० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स--रदि--भय--दुगुं० ज०ट्ठि० असंखें० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पच्चक्खाणावर०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अपच्चक्खाण०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि०-पुरिस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा देवगदि० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा पंचिंदि० ज०ट्ठि० । यट्ठि०

---

६२७. पाँचों मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें चार दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे क्रोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेद और पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरक-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । चदुरिंदि० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । उवरिं ओघं । सव्वत्थोवा चदुण्णं सरीराणं ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । ओरालिय० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । संठाणं संघडणं दोविहा० विदियपुढविभंगो । अंगोवंग० सरीरभंगो । सव्वत्थोवा तस०४ जट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा थिरादिपंच० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तप्पडिपक्खाणं ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा जसगि०--उच्चा० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । अजस०-णीचा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसं पंचिंदियभंगो ।

६२८. वचिजोगि०-असच्चमोस० तसपज्जत्तभंगो । ओरालियका० खवगपगदीणं ओघं । सेसं तिरिक्खोघं । ओरालिमि० तिरिक्खोघं । वेउव्वियका० सोधम्मभंगो । एवं वेउव्वियमि० । आहार०--आहारमि० उक्कस्सभंगो । कम्मइ०-अणाहार० ओरालियमिस्सभंगो । इत्थिवेदेसु ओघं । सेसाणं पंचिंदियभंगो । एवं पुरिसवे० । अवगदवेदे ओघं । कोधादि०४ ओघं । णवरि मोह० विसेसो णादव्वो । संजलणा०४

गतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । पञ्चेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चतुरिन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है । इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है । चार शरीरोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । संस्थान, संहनन और दो विहायोगति इनका भङ्ग दूसरी पृथिवीके समान है । आङ्गोपाङ्गोंका भङ्ग शरीरोंके समान है । त्रसचतुष्कका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे उनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । स्थिर आदि पाँच प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है ।

६२८. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है । औदारिककाययोगी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सौधर्मकल्पके समान भङ्ग है । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए । आहारककाययोगी और आहारक-मिश्रकाययोगी जीवोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है । कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । स्त्रीवेदी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है । इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिए । अपगतवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । क्रोधादि चार कषाय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोधे माणे०३ मायाए दोण्णि लोभे एक०।

६२९. मदि०-सुद०-असंज०-अब्भव०-मिच्छादि० तिरिक्खोघं। विभंगे सव्वत्थोवा देवग० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। तिरिक्ख-मणुसग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। णिरयग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा पंचिंदि० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। चदुरिंदि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। तीइंदि० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। बीइंदि० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। एइंदि० ज०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा वेउव्वि०-तेजा०-क० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। ओरालि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। सेसं मणजोगिभंगो।

६३०. आभि०-सुद०-ओधि० सव्वत्थोवा मणुसायु० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। देवायु० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज०। यट्ठि० विसे०। सव्वत्थोवा देवग० ज०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। मणुसग० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु०। यट्ठि० विसे०। सेसाणं मणजोगिभंगो। एवं ओधिदंसणी-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०। णवरि वेदगे खवगपगदिभंगो णत्थि।

वाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मोहनीयकर्ममें विशेषता जाननी चाहिए। क्रोधमें चार संज्वलन, मानमें तीन, मायामें दो और लोभमें एक कहना चाहिए।

६२९. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। विभङ्गज्ञानमें देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति और मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। पञ्चेन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चतुरिन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे त्रीन्द्रिय जातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे द्वीन्द्रियजातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे एकेन्द्रियजातिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे औदारिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है।

६३०. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपसमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंका भङ्ग नहीं है।

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

६३१. मणपज्जव० सव्वत्थोवा सादा०-जसगि० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । असादा०-अजस० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मोहणीयं मणजोगिभंगो । एवं दंसणावरणीयं । सेसाणं सव्वत्थोवा ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०--संजदासंजदा त्ति । णवरि विसेसो णादव्वो । चक्खुदं०-तसपज्जत्तभंगो ।

६३२. किण्णु-णील-काऊणं सव्वत्थोवा दोआयु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसं अपज्जत्तभंगो । णवरि काऊए णिरय-देवायूणं सह भाणिदव्वं ।

६३३. तेऊए मोहणीय--णामं मणजोगिभंगो । णवरि सव्वत्थोवा पुरिस०--हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसं सोधम्मभंगो । णवरि साद०-जस०-उच्चा० सव्वत्थोवा ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । असाद०-अजस०-णीचा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि विसे० । एवं पम्माए ।

६३१. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सातावेदनीय और यशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीय और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। मोहनीयका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार दर्शनावरणीयका अल्पबहुत्व जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि-संयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु जहाँ जो विशेषता हो उसे जान लेना चाहिए। चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है।

६३२. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि कापोत लेश्यावाले जीवोंमें नरकायु और देवायुको एक साथ कहना चाहिए।

६३३. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीय और नामकर्मका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्म कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३४. सुक्काए सव्वत्थोवा मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा देवग० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । सेसं ओघं ।

६३५. सासणे सव्वत्थोवा सादावे० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सव्वत्थोवा तिण्णिगदि० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । एवं धुविगाणं । सेसाणं सादा०भंगो ।

६३६. सम्मामि० सव्वत्थोवा सादा० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । एवं परियत्तमाणियाणं । सव्वत्थोवा पुरिस०-हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसाणं सव्वत्थोवा ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० ।

६३७. सण्णि मणुसभंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं ।

एवं जहण्णयं समत्तं

एवं सत्थाणट्ठिदिअप्पाबहुगं समत्तं

६३४. शुक्कलेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। देवगतिका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६३५. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। तीन गतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका जानना चाहिए। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीय के समान है।

६३६. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार परावर्तमान प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिए। पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति और शोकका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६३७. संज्ञियोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है। तथा असंज्ञियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

इस प्रकार स्वस्थान स्थिति अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३८. परत्थाणट्ठिदिअप्पाबहुगं दुविधं---जहण्णयं उक्कस्सयं च। उक्कस्सए पगदं। दुवि०--ओघे० आदे०। ओघे० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायूणं उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो। यट्ठिदिबंधो विसेसाधियो। णिरय-देवायूणं उक्कस्सट्ठि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। आहार० उक्क०ट्ठि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। पुरिस०-हस्स-रदि-देवगदि०-जस०-उच्चा० उक्क०ट्ठिदि० संखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। सादा०-इत्थि०-मणुसग० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। णवुंस० अरदि०-सोग-भय-दुगु०-णिरयगदि-तिरिक्खगदि-चदुसरीर-अजस०---णीचा० उक्क०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-पंचंत० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। सोलसक० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। मिच्छ० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०।

६३९. णेरइएसु सव्वत्थोवा दोआयु० उ०ट्ठि०। यट्ठि० विसे०। पुरिस०-हस्स--रदि--जस०--उच्चा० उ०ट्ठि० असंखेज्ज०। यट्ठि० विसे०। सादावे०--इत्थि०-मणुसगदि० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। णवुंस०--अरदि--सोग--भय--दुगु०--तिरिक्खगदि-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे०। यट्ठि० विसे०। उवरि ओघं। एवं याव छट्ठि त्ति।

६३८. परस्थान स्थिति अल्पबहुत्व दो प्रकार का है---जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है---ओघ और आदेश। ओघसे तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायु और देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आहारकद्विकका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, नरकगति, तिर्यञ्चगति, चार शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६३९. नारकियोंमें दो आयुओंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है। इसी प्रकार छठवीं पृथिवी तक जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४०. सत्तमीए सव्वत्थोवा तिरिक्खायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । मणुसग०-उच्चा० उक्क०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०--हस्स--रदि--जस०--उच्चा० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा०-इत्थि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंसगदिपंच-तिरिक्खगदि-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि ओघं ।

६४१. तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उक्क०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रदि-देवगदि-जस०-उच्चा० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा०-इत्थि०-मणुसग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग०-ओरालि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंसगादिपंच--णिरयगदि--वेउव्वि०-तेजा०-क०-अजस०--णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि ओघं । एवं पंचिंदिय-तिरिक्ख०३ ।

६४२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०--उच्चा० उ०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । इत्थि०

६४०. सातवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय और स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद आदि पाँच, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है।

६४१. तिर्यञ्चोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति और औदारिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेद आदि पाँच, नरकगति, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए।

६४२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थिति बन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद और उच्च-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । जसगि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सादा०--हस्स--रदि० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--तिरिक्खगदि--तिण्णिसरीर--अजस०--णीचा० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०--असादा०-पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं सव्वअपज्जत्तगाणं सव्वएइंदिय--सव्वविगलिंदिय--पंचकायाणं च । णवरि सव्वएइंदिय--विगलिंदिय० णीचागोदादो सादावे० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पच्छा णाणावरणीयं भाणिदव्वं ।

६४३. मणुसेसु०३ ओघं । णवरि तिरिक्खगदि--ओरालि० तिरिक्खभंगो । देवेसु याव सहस्सार त्ति णेरइगभंगो । आणद याव णवगेवज्जा त्ति सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०--हस्स--रदि--जसगि०--उच्चा० उ०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे०--इत्थि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि णेरइगभंगो ।

गोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार सब अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सब एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंमें नीचगोत्रसे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । तथा इसके बाद ज्ञानावरणादिक कहने चाहिए ।

६४३. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति और औदारिक शरीरका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है । देवोंमें सहस्रार कल्पतक नारकियोंके समान भङ्ग है । आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय और स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगेका भङ्ग नारकियोंके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४४. अणुदिस याव सव्वट्ट त्ति सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । हस्स--रदि--जसगि० उ०ट्ठि० [अ-] संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०-तिण्णिसरीर--अजस०-उच्चा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--छदंसणा०--असादा०--पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि विसे० ।

६४५. पंचिंदिय-तसपज्जत्त०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-इत्थिवे०-पुरिस०-णवुंस०-कोधादि०४-चक्खुदं०--अचक्खुदं०-भवसि०--सण्णि--आहारए त्ति मूलोघं । ओरालियकायजोगि० मणुसिणिभंगो ।

६४६. ओरालियमि० सव्वत्थोवा दोआयु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-वेउव्विय० उ०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-उच्चा० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० उट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । [सेसा०] अपज्जत्तभंगो । वेउव्वियका०-वेउव्वियमि० देवोघं ।

६४७. आहार०--आहारमि० सव्वत्थोवा देवायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । हस्स--रदि--जसगि० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० उ०ट्ठि० विसे० ।

---

६४४. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे बारह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६४५. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों, मनोयोगी पाँचों, वचनयोगी, काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंमें मूलोघके समान भङ्ग है । औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यिनियोंके समान भङ्ग है ।

६४६. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें दो आयुओंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है । वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है ।

६४७. आहारक काययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति और यशस्कीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--देवगदि--तिण्णिसरीर-अजस०-उच्चा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०--असादा०--पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६४८. कम्मइ० सव्वत्थोवा देवगदि-वेउव्वि० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स--रदि--जसगि०--उच्चा० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा०--इत्थिवे०-मणुसग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--तिरिक्खग०--तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६४९. अवगदवेदे सव्वत्थोवा चदुसंज० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंस०--पंचंत० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । जसगि०--उच्चा० उ०ट्ठि० [1]संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

है । इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, देवगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६४८. कार्मणकाययोगी जीवोंमें देवगति और वैक्रियिकशरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६४९. अपगतवेदी जीवोंमें चार संज्वलनोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

1 मूलप्रतौ उ०ट्ठि० असंखेज्ज० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५०. मदि०-सुद० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रदि-देवगदि-जसगि०-उच्चा० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा०-इत्थि०-मणुस० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि ओघं । एस भंगो विभंगे असंज०-किण्णले०-अब्भवसि०-मिच्छा० । णवरि किण्णे णिरयायु० संखेज्जगु० ।

६५१. आभि०-सुद०-ओधिणा० सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० [अ-] संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । आहार० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-जसगि० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-दोगदि-चदुसरीर-अजस०-उच्चा० उ०ट्ठि० संखेज्जगु० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं एस भंगो ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति ।

६५०. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है। यही अल्पबहुत्व विभङ्गज्ञानी, असंयत, कृष्णलेश्यावाले, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है।

६५१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, दो गति, चार शरीर, अयशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार यह अल्पबहुत्व अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशे-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवरि खइगे पंचणोक०--दोगदि--चदुसरीर--अजसगित्ति--उच्चा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६५२. मणपज्जव० सव्वत्थोवा देवायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । आहार० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-जसगि० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर-अजस०-उच्चा० उक्क०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अथवा एदाओ संखेंज्जगुणाओ । उवरिं ओधिभंगो । एवं संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजदा० ।

६५३. णील-काऊए सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग०-वेउव्वि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रदि--जसगि०--उच्चा० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे०--इत्थि०--मणुसग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-तिरिक्खग०-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरिं ओघं ।

पता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच नोकषाय, दो गति, चार शरीर, अयशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६५२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति और यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, देवगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है अथवा इनका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे आगेका अल्पबहुत्व अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इसी प्रकार संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए ।

६५३. नीललेश्या और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगति और वैक्रियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५४. तेऊए सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । आहार० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि०-वेउव्वि० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रदि-जस०-उच्चा० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे०-इत्थि०-मणुस० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-तिरिक्खग०-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरिं ओघं । एवं पम्माए त्ति ।

६५५. सुक्काए सव्वत्थोवा मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । आहार० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-वेउव्वि० उ०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०-हस्स-रदि-जस०-उच्चा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सादावे०-इत्थि उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसगदि-तिण्णिसरीर-अजस०-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि णवगेवज्जभंगो ।

६५६. सासणे सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० ।

---

६५४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारकशरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय, स्त्रीवेद और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगेका अल्पबहुत्व ओघके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए ।

६५५. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक-शरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय और स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगेका अल्पबहुत्व नौग्रैवेयकके समान है ।

६५६. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थिति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवायु० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० [-हस्स-रदि-] देवगदि०-वेउव्वि०-जसगि०-उच्चागो० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे०-मणुसग०-उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--तिरिक्खग०--तिण्णिसरीर--अजस०-णीचा० उट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--णवदंसणा०--असादा०--पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६५७. असण्णीसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० उ०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० उ०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयायु० उ०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस०--देवगदि--उच्चागो० उ०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । जसगि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । हस्स--रदि उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि-ओरालि० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-णिरय-गदि-तिण्णिसरीर-अजस-णीचा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सादा० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--णवदंसणा०--असादा०-पंचंत० उ०ट्ठि० विसे० ।

बन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, हास्य, रति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय और मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६५७. असंज्ञी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायुका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेद, देवगति और उच्चगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्तिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य और रतिका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगति और औदारिकशरीरका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, नरकगति, तीन शरीर, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सतावेदनीयका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय और पाँच अन्तरायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । सोलसक० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० उ०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं उक्कस्सपरत्थाणट्ठिदिअप्पाबहुगं समत्तं

६५८. जहण्णए पगदं । दुवि०--ओघे० आदे० । ओघे० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायूणं जहण्णओ ट्ठिदिबंधो । यट्ठि० विसे० । लोभसंज० ज०ट्ठि०बं० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरय-देवायु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं०--तिरिक्ख--मणुसगदि--ओरालि०-तेजा०-क०--णीचागो० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग--अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचदंस०

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाय-योगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान स्थितिअल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

६५८. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोधसंज्व-लनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदा-रिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-वेउव्वि० ज० ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । आहार० ज० ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० ।

६५९. णिरएसु सव्वत्थोवा दोएणं आयु० ज० ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०--तिण्णिसरीर--जसगि०--उच्चा० ज० ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादावे०-पंचंत० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं पढमाए ।

है । इससे पाँच दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६५९. नारकियोंमें दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार पहिली पृथिवीमें जानना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६०. बिदियादि याव छट्ठि त्ति सव्वत्थोवा दोआयु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--मणुसग०--तिण्णिसरीर--जसगि०--उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा० -पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सत्तमाए पुढवीए एसेव भंगो । णवरि सव्वत्थोवा तिरिक्खायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । एवं याव बारसकसा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि-णीचा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० विसे० ।

६६०. दूसरीसे लेकर छटवीं तक दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। सातवीं पृथिवीमें यही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार बारह कषाय तक जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६६१. तिरिक्खेसु सव्वत्थोवा दोआयु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । णिरय-देवायु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--दोगदि--तिण्णिसरीर-जसगि०-णीचागो०-उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि--वेउव्वि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६६२. पंचिंदिय--तिरिक्ख०३ सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर--जस०--उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग-

---

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६६१. तिर्यञ्चोंमें दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, दो गति, तीन शरीर, यशःकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६६२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तीनमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, देवगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मणुसग०-ओरालिय० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६६३. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु पढमपुढविभंगो । एवं सव्वअपज्जत्तगाणं सव्वविगलिंदिय--पुढवि०--आउ०--वणप्फदि०--बादरवणप्फदिपत्तेय०-सव्वणियोदाणं पंचिंदिय-तसअपज्जत्ताणं च । एइंदिएसु तिरिक्खोघं ।

६६४. तेउ०--वाउ० सव्वत्थोवा तिरिक्खायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०--तिरिक्खग०--तिण्णिसरीर--जस०-णीचा० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि अपज्जत्तभंगो ।

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६६३. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पहली पृथ्वीके समान भङ्ग है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, सब विकलेन्द्रिय, पृथ्वीकायिक, जलकायिक, वनस्पतिकायिक, बादरवनस्पतिकायिक, सब निगोद, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। एकेन्द्रियोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है।

६६४. अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे ऊपर अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६५. मणुस०३ सव्वत्थोवा तिरिक्ख[1]-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । लोभसंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादावे० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स--रदि-भय-दुगुं०-मणुसगदि--तिण्णिसरीरं ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचदंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि०

६६५. मनुष्यत्रिकमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मान संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे कोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति और तीन शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नीच गोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच-दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

१ मूलप्रतौ तिरिक्खेसु मणुसायु० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि--वेउव्वि०--आहार० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० ।

६६६. देवा भवण०--वाणवेंत० णिरयोघं । जोदिसिय याव सहस्सार त्ति विदियपुढविभंगो । आणद याव णवगेवज्जा त्ति सो चेव भंगो । णवरि तिरिक्खायु०-तिरिक्खगदी णत्थि । अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति सव्वत्थोवा मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०-तिण्णिसरीर-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि--सोग--अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०--सादा०--पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६६७. पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्ता० सव्वत्थोवा तिरिक्ख०-मणुसायुग० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । लोभसंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि०

इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर और आहारक शरीर-का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६६६. सामान्य देव, भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । ज्योतिषियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है । आनतसे लेकर नौ ग्रैवेयक तक वही भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि यहाँ तिर्यञ्चायु और तिर्यञ्चगति नहीं है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थिति-बन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६६७. पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे लोभ संज्व-लनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थिति-बन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे माया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । दो आयु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । चदुणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । उवरिं पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

६६८. तस-तसपज्जत्तगेसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि०[1] । यट्ठि०विसे० । लोभसंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि०विसे० । उवरिं ओघं याव णिरय-देवायु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । चदुणोक०-मणुसग०-तिण्णिसरीर० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचदंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०ट्ठि० विसे० ।

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार नोकषाय, देवगति और तीन शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है ।

६६८. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इसके प्राप्त होने तक ओघके समान भङ्ग है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार नोकषाय, मनुष्यगति और तीन शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच दर्शनावरणका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थिति-

[1] मूलप्रतौ ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-वेउव्वि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । आहार०-ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० ।

६६६. पंचमण०-तिण्णिवचि० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । लोभसंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायासंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । दो आयु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगु० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-वेउव्वि०-आहार०-तेजा०-क० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिद्दा-पचला० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० ।

बन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और वैक्रियिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आहारक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६६९. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति, वैक्रियिक शरीर, आहारकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थिति-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । पच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अपच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसगदि-ओरालि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अणंताणु०४ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि-णीचा० ज० ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६७०. वचिजो०-असच्चमोस० तसपज्जत्तभंगो । कायजोगि०-ओरालियका०-अचक्खुदं०-भवसि०-आहारग त्ति ओघं । ओरालियमि० तिरिक्खोघं । देवगदि-वेउव्वि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० सव्वुवरिं । एवं कम्मइ०-अणाहारग त्ति ।

६७१. वेउव्वियका० सव्वत्थोवा दो आयु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-मणुसग०-तिण्णिसरीर-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सेसं सत्तमाए पुढविभंगो । एवं वेउव्वियमि० आयु वज्ज० । णवरि तिरि-

बन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६७०. वचनयोगी और असत्यमृषावचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । काययोगी, औदारिककाययोगी, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है । औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । देवगति और वैक्रियिकशरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । ऐसा सबके अन्तमें कहना चाहिए । इसी प्रकार कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

६७१. वैक्रियिक काययोगी जीवोंमें दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, मनुष्यगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । शेष अल्पबहुत्व सातवीं पृथिवीके समान है । इसी प्रकार आयुकर्मको

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्खग०-णीचा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धि०३ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६७२. आहार०--आहारमिस्सका० सव्वत्थोवा देवायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर०--जस०--उच्चा० ज०ट्ठि संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असाद० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६७३. इत्थिवे० सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेंज्जगु० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंस०--पंचंत०

छोड़कर वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६७२. आहारक काययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय देवगति, तीनशरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६७३. स्त्रीवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०--उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । उवरिं पंचिंदियभंगो ।

६७४. पुरिसेसु सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०-पंचंत० ज०ट्ठि संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०--उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरिं इत्थिभंगो ।

६७५. णवुंस० सव्वत्थोवा तिरिक्ख--मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । णिरय--देवायु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जसगि०--उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरिं ओघभंगो ।

और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे पञ्चेन्द्रियोंके समान भङ्ग है ।

६७४. पुरुषवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओं-का जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीय-का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे स्त्रीवेदी जीवोंके समान भङ्ग है ।

६७५. नपुंसकवेदी जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नरकायु और देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यात-गुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे ओघके समान भङ्ग है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७६. अवगदवे० सव्वत्थोवा लोभसंज० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंस०--पंचंत० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०--उच्चा० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० जट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायसंज० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६७७. कोधकसा० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । [यट्ठि० विसे० ।] पुरिस० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । उच्चा० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । एवं जसगित्ति० । सादावे० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि ओघभंगो ।

६७८. माणकसाइ० सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । तिण्णिसंज० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेँज्ज० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि०

६७६. अपगतवेदी जीवोंमें लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे माया संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मान संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे क्रोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६७७. क्रोधकषायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसी प्रकार यशःकीर्तिका अल्पबहुत्व है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगे ओघके समान भङ्ग है।

६७८. मानकषायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तीन संज्वलनोंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । उवरि ओघभंगो ।

६७९. मायाए सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । दोसंज० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । दोआयु० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । जसगि०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं०-तिरिक्ख-मणुसगदि-ओरालिय०-तेजा०-क०-णीचा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । उवरिं ओघभंगो । लोभे मूलोघं ।

६८०. मदि०-सुद०-असंज०-तिण्णिले०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि त्ति तिरिक्खोघं । विभंगे सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० ।

दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे ओघके समान भङ्ग है ।

६७९. माया कषायवाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे आगे ओघके समान भङ्ग है । लोभकषायवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है ।

६८०. मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, तीन लेश्यावाले, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । विभङ्गज्ञानी जीवोंमें तिर्यंचायु और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोआयु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । सोलसक० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि-मणुसगदि-ओरालि०-णीचा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णिरयग० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६८१. आभि०-सुद०-ओधि० सव्वत्थोवा लोभसंज० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०--चदुदंसणा०--पंचंत० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायसंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि०

मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे दो आयुओंका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सोलह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, औदारिक शरीर और नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे नरकगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६८१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । कोधसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसायु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवायु० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि--चदुसरीर० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिद्दा--पचलाणं ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अपच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसग०-ओरालि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । एस भंगो ओधिदंस०--सम्मादि० खइग०-उवसम० ।

६८२. मणपज्जव० सव्वत्थोवा लोभसंज ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मायसंज० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । माणसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । कोधसंज०

अधिक है । इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और चार शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । यही भङ्ग अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए ।

६८२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे क्रोध-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पुरिस० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । देवायु० ज० द्वि० असंखेज्ज० । यद्वि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । देवगदि--चदुसरीर० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । णिद्दा--पचलाणं ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । असादा० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । एवं संजदा० ।

६८३. सामाइ०--छेदोव० सव्वत्थो० लोभसंज० ज० द्वि० । यद्वि० विसे० । पंचणा०--चदुदंस०-पंचंत० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । मायसंज० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । माणसंज० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । कोधसंज० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । जस०--उच्चा० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । सादा० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पुरिस० ज० द्वि० संखेज्ज० । यद्वि० विसे० । देवायु० ज० द्वि० असंखेज्ज० । यद्वि० विसे० । उवरिं मणपज्जवभंगो ।

६८४. परिहार० सव्वत्थोवा देवायु० ज० द्वि० विसे० । यद्वि० विसे० । पंच-

---

संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवगति और चार शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इसीप्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिए।

६८३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें लोभसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तराय कर्मका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मायासंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मानसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्च गोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आगे मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान अल्पबहुत्व है।

६८४. परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति, चार शरीर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णोक०-देवगदि-चत्तारिसरीर०-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६८५. सुहुमसंपरा० सव्वत्थोवा पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । सादा० ज०ट्ठि० [विसे०] । यट्ठि० विसे० ।

६८६. संजदासंज० सव्वत्थो० देवायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-तिण्णिसरीर०-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंस०-सादावे०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अट्ठकसा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० ।

६८७. तेउले० सव्वत्थो० तिरिक्ख-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० ।

यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६८५. सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे सातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६८६. संयतासंयत जीवोंमें देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, देवगति, तीन शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे आठ कषायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६८७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवायु० ज०ट्ठि० असंखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-चदुसरीर०-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंतरा० ज०ट्ठि० [विसे० ।] यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अप्पच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसगदि-ओरालि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धितियस्स ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । तिरिक्खगदि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । एवं पम्माए ।

६८८. सुक्काए सव्वत्थो० लोभसंज० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । सेसं ओघं याव कोधसंज० ज०ट्ठि० [विसे० ।] यट्ठि० विसे० । मणुसायु० ज०ट्ठि० संखेंज्ज० ।

असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, देवगति, चार शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे तिर्यञ्चगतिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए ।

६८८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें लोभ संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इसी प्रकार क्रोध संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है यहाँ तक शेष अल्पबहुत्व ओघके समान है । इससे मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध

Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । पुरिस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवायु० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । हस्स-रदि-भय-दुगुं० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । देवगदि-चदुसरी० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णिद्दा-पचला० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पचक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अपचक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसग० ओरालि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । थीणगिद्धितिग० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । मिच्छ० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । णवुंस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । णीचा० ज० ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६८९. वेदगसम्मा० सव्वत्थो० मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायु० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-देवगदि-चदुसरीर-जस०-उच्चा० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-छदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० [विसे०]

विशेष अधिक है । इससे पुरुषवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे हास्य, रति, भय और जुगुप्साका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवगति और चार शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे निद्रा और प्रचलाका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असाता वेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्यानगृद्धि तीनका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अनन्तानुबन्धी चारका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नपुंसकवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे नीचगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

६८९. वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच नोकषाय, देवगति, चार शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, साता वेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यट्ठि० विसे० । चदुसंज० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अपच्चक्खाणा०४ ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । मणुसग०-ओरालि० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० ।

६९०. सासणे सव्वत्थो० तिरिक्ख०-मणुसायु० ज०ट्ठि० । यट्ठि० विसे० । देवायुग० ज०ट्ठि० संखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । पंचणोक०-तिण्णिगदि-चदुसरीर-जस०-णीचा०-उच्चा० ज०ट्ठि० असंखेज्ज० । यट्ठि० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । इत्थि० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । पंचणा०-णवदंसणा०-सादा०-पंचंत० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० ।

६९१. सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति सव्वत्थोवा पंचणोक०-दोगदि-चदुसरीर-जसगित्ति-उच्चागो० जहण्णट्ठिदिबंधो । यट्ठिदिबंधो विसेसाधियो । पंचणाणावरणीयाणं छदंसणावरणीयाणं सादावेदणीयं पंचंतराइगं० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसे० । बारसक० ज०-

अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे चार संज्वलनका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे प्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अप्रत्याख्यानावरण चारका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे मनुष्यगति और औदारिक शरीरका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६९०. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे देवायुका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच नोकषाय, तीन गति, चार शरीर, यशःकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध असंख्यातगुणा है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे स्त्रीवेदका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सातावेदनीय और पाँच अन्तरायका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे असातावेदनीयका जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है।

६९१. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें पाँच नोकषाय, दो गति, चार शरीर, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका जघन्य स्थितिबन्ध सबसे स्तोक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे पाँच ज्ञानावरणीय, छह दर्शनावरणीय, सातावेदनीय और पाँच अन्तराय का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है। इससे बारह कषायका जघन्य स्थितिबन्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसेसाधियो । *अरदि-सोग-अजसगित्ति० ज०ट्ठि० संखेज्ज०* । यट्ठि० विसे० । असादा० ज०ट्ठि० विसे० । यट्ठि० विसेसाधियो । एवं जहण्णयं परत्थाण-अप्पाबहुगं समत्तं ।

एवं अप्पाबहुगं समत्तं

एवं चदुवीसमणियोगद्दाराणि समत्ताणि

विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे अरति, शोक और अयशःकीर्तिका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे असातावेदनीय का जघन्य स्थितिबन्ध विशेष अधिक है । इससे यत्स्थितिबन्ध विशेष अधिक है ।

इस प्रकार जघन्य परस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

इस प्रकार चौबीस अनुयोगद्वार समाप्त हुए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भुजगारबंधो

६६२. एत्तो भुजगारबंधो त्ति। तत्थ इमं अट्ठपदं मूलपगदिट्ठिदिभंगो कादव्वो। एदेण अट्ठपदेण तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति। तं जहा—समुक्कित्तणा याव अप्पाबहुगे त्ति [१३]।

समुक्कित्तणाणुगमो

६६३. समुक्कित्तणाए दुवि०–ओघे० आदे०। ओघेण पंचणाणावरणीयाणं अत्थि भुजगारबंधगा अप्पदरबंधगा अवट्ठिदबंधगा अवत्तव्वबंधगा य। चदुण्णं आयुगाणं अत्थि अवत्तव्व० अप्पदर०। सेसाणं मदियावरणभंगो। एवं ओघभंगो मणुसा०३–पंचिंदिय-तस०२–पंचमण०–पंचवचि०-कायजोगि-ओरालिय०–चक्खुदं०–अचक्खुदं०-भवसिद्धि० सण्णि-आहारग त्ति।

६६४. णिरएसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दु०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४–अगु०४–तस०४-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। एवं सत्तसु पुढवीसु।

६६५. तिरिक्खेसु पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठकसा०–भय-दुगुं०-तेजा०-कम्म०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसाणं ओघं। एवं

भुजगारबन्धप्ररूपणा

६६२. इससे आगे भुजगारबन्धका प्रकरण है। उसके विषयमें यह अर्थपद मूलप्रकृति स्थितिबन्धके समान करना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार यहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं यथा—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक १३।

समुत्कीर्तनानुगम

६६३. समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण प्रकृतियोंके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं, अवस्थित बन्धक जीव हैं और अवक्तव्य बन्धक जीव हैं। चार आयुओंके अवक्तव्य बन्धक जीव हैं और अल्पतर बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मतिज्ञानावरणके समान है। इसी प्रकार ओघके समान मनुष्यत्रिक, पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

६६४. नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, त्रसचतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए।

६६५. तिर्यञ्चोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचिंदिय-तिरिक्ख०३ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ता० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेस ओघं । एस भंगो सव्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च । णवरि तेउ०-वाउ० तिरिक्खगदितियस्स अवत्तव्वं णत्थि ।

६६६. देवेसु पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेग०-णिमि०-तित्थय०-पंचंतरा० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसं ओघं । एवं भवणादि याव सोधम्मीसाण त्ति । सणक्कुमार याव सहस्सार त्ति णिरयोघो । आणद याव णवगेवज्जा त्ति पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो-वण्ण०४-मणुसाणुपु०-अगु०४-तस०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसाणं ओघो । अणुदिस याव सव्वट्ठा त्ति पंचणा०-छदंस०-बारसक०-पुरिसवे०-भय-दु०-मणुसग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरि०-मणुसाणु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसं ओघं ।

है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । यही भङ्ग सब अपर्याप्त, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अग्निकायिक और वायुकायिक जीवोंमें तिर्यञ्चगतित्रिकका अवक्तव्य भङ्ग नहीं है ।

६६६. देवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर सौधर्म और ऐशान कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । सनत्कुमार कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । आनत कल्पसे लेकर नौग्रैवेयक तकके देवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसरीर, कार्मणशरीर, औदारिक अङ्गोपाङ्ग, चार वर्ण, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चार, त्रस चार, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६९७. ओरालियमिस्से पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०-तेजा०-क० वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणुपु०-अगु०-उप०-णिमि०-तित्थय० पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसाणं ओघं। वेउव्विय० देवोघं। णवरि तित्थयरस्स अवत्तव्वं अत्थि। वेउव्वियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० - णिमि० - तित्थय०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसाणं ओघं। आहार०-आहारमिस्से धुविगाणं अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। कम्मइगे० अणाहारगे० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४ देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-तित्थय०पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं।

६९८. इत्थि-पुरिस० णवुंस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। अवगद० सव्वाणं अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०-अव्वत्तव्वं०। एवं सुहुमसंप०। णवरि अवत्तव्वं णत्थि।

६९९. कोधे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०।

६९७. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। वैक्रियिककाययोगी जीवोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलहकषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, चारवर्ण, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६९८. स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान है। अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं, अवस्थितबन्धक जीव हैं और अवक्तव्यबन्धक जीव हैं। इसी प्रकार सूक्ष्मसांपरायसंयत जीवोंमें जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पद नहीं है।

६९९. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेसं ओघं। माणे तं चेव। णवरि तिण्णि संज०। मायाए दोण्णि संज०। सेसं तं चेव। लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं।

७००. मदि०-सुद० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक० भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण० ४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। एस भंगो विभंगे। एवं चेव अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि त्ति। णवरि मिच्छत्त० अवत्तव्वं णत्थि।

७०१. आभि०-सुद०-ओधि०-मणपज्जव०-संजद-ओधिदं०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइग०-उवसम० ओघं। सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। परिहार० आहारकायजोगिभंगो। संजदासंजद० पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठकसा०-पुरिसवे०-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०-वेउव्वियअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेंज०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं।

७०२. असंजदे० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०। सेसं ओघं। तिण्णि लेस्साणं

पाँच अन्तरायके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं। मानकषायवाले जीवोंमें वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ तीन संज्वलन कहना चाहिये। मायामें दो संज्वलन कहने चाहिये। शेष भङ्ग उसी प्रकार हैं। लोभकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं।

७००. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार बन्धक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं। यही भङ्ग विभङ्गज्ञानी जीवोंमें जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं है।

७०१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी मनःपर्ययज्ञानी, संयत, अवधिदर्शनी, शुक्लेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि और उपशम सम्यग्दृष्टिजीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्च गोत्र और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं। परिहारविशुद्धि संयत जीवोंमें आहारक काययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। संयतासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनवरण, आठ कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तीनशरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं।

७०२. असंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं और अवस्थित बन्धक जीव हैं। शेष भङ्ग ओघके समान हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं चेव । णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थय० अवत्तव्वं णत्थि ।

७०३. तेऊए पंचणा०-छदंस०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु० ४-बादर पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसं ओघं । एवं पम्माए वि । णवरि पंचिंदिय०-तस० धुवं कादव्वं ।

७०४. वेदगसम्मा० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-पंचिंदि०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसं ओघं ।

७०५. सासणे पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० । सेसं ओघं ।

७०६. सम्मामि० दोवेदणीय-चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०-अवत्तव्वं० । सेसाणं अत्थि भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० ।

एवं समुक्कित्तणा समत्ता

सामित्ताणुगमो

७०७. सामित्ताणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघेण पंचणा०-छदंसणा०-चदु-

---

नीललेश्यावाले जीवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीललेश्या वाले जीवों में तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद नहीं है ।

७०३. पतिलेश्यावाले जीवों में पांच ज्ञानावरण, छह दर्शनावण, चार संज्वलच, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रयेक, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतर बन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष भङ्ग ओघके समान है । इस प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनमें पञ्चेन्द्रिय जाति और त्रस प्रकृतिको ध्रुव कहना चाहिये ।

७०४. वेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुष वेद, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, पञ्चेन्द्रिय जाति, समचतुरस्र संस्थान, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

७०५. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं । शेष भङ्ग ओघके समान है ।

७०६. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें दो वेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं, अवस्थितबन्धक जीव हैं और अवक्तव्यबन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंके भुजगारबन्धक जीव हैं, अल्पतरबन्धक जीव हैं और अवस्थितबन्धक जीव हैं ।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

स्वामित्वानुगम

७०७. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संज०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुजगा०-अप्पद०-अवट्ठिदबंधो कस्स ? अण्णदरस्स। अवत्तव्वबंधो कस्स ? अण्णदरस्स उवसमगस्स परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमए देवस्स वा। थीणगिद्धि० ३-अणंताणुबंधि०४ भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० कस्स ? अण्णद०। अवत्त० कस्स ? संजमादो संजमासंजमादो सम्मत्तादो सम्मामिच्छत्तादो वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स वा सासणसम्मादिट्ठिस्स वा। मिच्छत्त० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० कस्स ? अण्णदरस्स। अवत्तव्व० कस्स ? अण्णद० संजमादो वा संजमासंज० समत्त० सम्मामि० सासण० वा परिवदमाणस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स। अप्पचक्खाणा०४ तिण्णि पद० कस्स ? अण्णद०। अवत्त० कस्स० ? संजमादो वा संजमासंज० परिवदमाणस्स पढमसमय-मिच्छादिट्ठि० सासण० सम्मामि० असंजदसं०। पच्चक्खाणा०४ भुज० अप्पद०-अवट्ठि०कस्स० ? अण्ण०। अवत्त०कस्स० ? अण्णद० संजमादो परिवदमाण० पढमसमय-मिच्छादि० सासण० सम्मामि० असंजदसं० संजदासंजद०। चदुण्णं आयुगाणं अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पढमसमय-आयुगबंध०। तेण परं अप्पदरबं०। आहार०-आहार०अंगो०-पर०-उस्सास०-आदाउज्जो०-तित्थय० तिण्णिपद० कस्स० ? अण्ण०। अवत्तव्व० कस्स० ? अण्ण० पढम-

पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तराय इनके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित बन्धकका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उनका स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक मनुष्य और मनुष्यनी या प्रथम समयवर्ती देव अवक्तव्यबन्धका स्वामी है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चारके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उनका स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे, संयमासंयमसे, सम्यक्त्वसे और सम्यग्मिथ्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि या सासादन सम्यग्दृष्टि जीव अवक्तव्यबन्धका स्वामी है। मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त बन्धका स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे संयमासंयमसे, सम्यक्त्वसे, सम्यग्मिथ्यात्वसे या सासादनसम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवाला मिथ्यादृष्टि जीव अवक्तव्यबन्धका स्वामी है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे या संयमासंयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और असंयतसम्यग्दृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है। प्रत्याख्यानावरण चारके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त बन्धका स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि और संयतासंयत अन्यतर जीव अवक्तव्यबन्धका स्वामी है। चार आयुओंके अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है ? प्रथम समयवर्ती आयुकर्मका बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यबन्धका स्वामी है। इससे आगे वह अल्पतर बन्धका स्वामी है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है ? प्रथम समयमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समयबं० । सेसाणं तिण्णिपद० कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स० ? अण्ण० परियत्त-माणपढमसमयबंध० ।

७०८. णिरएसु धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधेदव्वं । णवरि सत्तमाए तिरिक्खग-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धि०भंगो । मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० मिच्छत्तादो परिवद० पढमसमय सम्मामि० सम्मादिट्ठि० ।

७०९. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधेदव्वं । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं सव्वअपज्जत्तगाणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च ।

७१०. मणुसा०३ ओघं । णवरि अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वं ।

७११. देवाणं णिरयोघो याव उवरिमगेवज्जा त्ति । णवरि विसेसो णादव्वो । उवरि पज्जत्तभंगो ।

७१२. पंचिंदि०-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-आभि०-सुद०-

बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है। शेष कर्मोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है। परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला अन्यतर जीव अवक्तव्यपदका स्वामी है।

७०८. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके यथासम्भव पदोंका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धित्रिकके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्यपदका स्वामी कौन है ? मिथ्यात्वसे ऊपर चढ़नेवाला प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि अन्यतर जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है।

७०९. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघके अनुसार साध लेना चाहिये। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकके जानना चाहिये। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों के तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, एकेन्द्रिय, विकलत्रय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये।

७१०. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य पदका स्वामी देव है यह नहीं कहना चाहिये।

७११. देवोंमें उपरिम ग्रैवेयक तक नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ जो विशेष हो उसे जानकर कहना चाहिये। इससे आगे पर्याप्तके समान भङ्ग है।

७१२. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओधि०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-ओधिदं०-सुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-खइगस०-उवसम०-सण्णि-आहारग त्ति ओघो। णवरि पंचमण०-पंचवचि०-ओरालिय० मणुसभंगो।

७१३. ओरालियमि० धुविगाणं भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० कस्स०? अण्ण०। सेसाणं ओघं। देवगदि०४–तित्थय० तिण्णिपदा० कस्स०? अण्ण०। मिच्छ० तिण्णिपदा कस्स? अण्ण०। अवत्त० कस्स०? सासण० परिवदमाण० पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स।

७१४. वेउव्वियका० देव–णेरइगभंगो। वेउव्वियमि० धुविगाणं तिण्णिपदा० कस्स०? अण्ण० देवस्स वा णेरइय०। मिच्छत्तस्स ओरालियमिस्सभंगो। सेसाणं ओघो। आहार०-आहारमि० धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स०? अण्ण०। सेसं ओघं। कम्मइय० धुविगाणं तिण्णि पदा० कस्स०? अण्ण०। सेसाणं तिण्णि पदा० कस्स०? अण्ण०। अवत्त० कस्स०? अण्ण० परियत्तमा० पढमसमयबं०। मिच्छ०–देवगदि०४–तित्थय० ओरालियमिस्सभंगो। एवं अणाहार०।

७१५. इत्थि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत तिण्णिपदा कस्स०? अण्ण०। णिद्दा–पचला–भय–दुगुं०–तेजा०–क० याव णिमिण त्ति तिण्णि पदा कस्स०?

काययोगी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, चक्षुःदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है।

७१३. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामी ओघके समान है। देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। मिथ्यात्वके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है? सासादन सम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है।

७१४. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें देवों और नारकियोंके समान भङ्ग है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर देव और नारकी जीव उक्त पदोंका स्वामी है। मिथ्यात्वका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव अवक्तव्य पदका स्वामी है। मिथ्यात्व, देवगति चार और तीर्थङ्करका भङ्ग औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

७१५. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी है। निद्रा, प्रचला, भय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अण्ण० तिगदियस्स। अवत्त० कस्स०? अण्ण० उवसम० परिवदमा० मणुस० मणुसिणीए वा। सेसाणं ओघादो साधेदव्वं। णवरि तिगदियस्स। एवं पुरिस०। णवरि णिद्दा-पचलादंडयस्स ओघो। सेसाणं पि ओघो। णवुंसगे इत्थिभंगो। अवगदवे० भुज० अवत्त० कस्स०? अण्ण० उवसम० परिवदमा० पढमसमय०। अप्पद०-अवट्ठि कस्स०? अण्ण० उवसम० खवग०। एवं सव्वाणं।

७१६. कोधे३ पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० तिण्णिपदा कस्स०? अण्ण०। कोधे चदुसंज० माणे तिण्णि संज० मायाए दो संज० णिद्दा-पचला-भय-दुगु० तेजइगादिणव० ओघो। सेसाणं ओघं। लोभे [१४] कोधभंगो। सेसं ओघं।

७१७. मदि०-सुद० धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स०? अण्ण०। मिच्छ० अवत्त० ओरालियमिस्सभंगो। सेसाणं ओघेण साधेदव्वं। एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि०। णवरि दोसु मिच्छत्तस्स अवत्त० णत्थि।

७१८. मणपज्जव०-संजदे धुविगाणं मणुसभंगो। एवं सेसाणं पि। सामाइ०-

---

जुगुप्सा, तैजसशरीर और कार्मणशरीरसे लेकर निर्माण तक प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर तीन गतिका जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला अन्यतर मनुष्य या मनुष्यनी अवक्तव्य पदका स्वामी है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि तीन गतिके जीवके स्वामित्व कहना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके निद्रा और प्रचला दण्डकका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व भी ओघके समान हैं। नपुंसकवेदी जीवोंमें स्त्रीवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। अपगतवेदी जीवोंमें भुजगार और अवक्तव्य पदका स्वामी कौन है? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। अल्पतर और अवस्थितपदका स्वामी कौन है? अन्यतर उपशामक या क्षपक अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका स्वामित्व जानना चाहिए।

७१६. क्रोध, मान और माया कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी है। क्रोधकषायवाले जीवोंमें चार संज्वलन, मान कषायवाले जीवोंमें तीन संज्वलन और मायाकषायवाले जीवोंमें दो संज्वलन तथा निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघके समान है। लोभ कषायवाले जीवोंमें चौदह प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोध कषायवाले जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघके समान है।

७१७. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव तीन पदोंका स्वामी है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदका स्वामित्व औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिए। इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अभव्य और मिथ्यादृष्टि इन दो मार्गणाओंमें मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं है।

७१८. मनःपर्ययज्ञानी और संयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छेदो० धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । णिद्दा-पचला-तिण्णिसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं० देवगदि-पंचिंदि०-तिण्णिसरीर-समचदु०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु० ४-पसत्थ०-तस० ४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिपदा कस्स ? अण्ण० । अवत्तव्व० कस्स ? अण्ण० उवसम० परिवद० पढमसमय मणुस० मणुसिणीए वा । सेसाणं ओघो । परि-हार० आहारकायजोगिभंगो । [सुहुमे भुज० कस्स० ? अण्ण० उवसम परिवद० । वेपदा कस्स० ? अण्ण० उवस० खवग० ।]

७१६. संजदासंज०-सम्मामि०-[सासाद०] अणुदिसभंगो । णवरि संजदासंजदस्स तित्थयरस्स अवत्तव्वं ओघेण साधेदव्वो । असंजदा० तिरिक्खोघं । एवं तिण्णिलेस्साणं । णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थयरस्स अवत्तव्वं णत्थि । तेउए धुविगाणं तिण्णिपदा कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघादो साधेदव्वं । एवं पम्माए । वेदगे धुविगाणं तिण्णि पदा कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघं । असण्णीसु धुविगाणं तिण्णि पदा कस्स० ? अण्णदरस्स । सेसाणं ओघादो साधेदव्वं । एवं सामित्तं समत्तं ।

कालाणुगमो

७२०. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेद-

है । इसी प्रकार शेष प्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिए । सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । निद्रा, प्रचला, तीन संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, तीन शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्कर इनके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । अवक्तव्यपदका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला प्रथम समय-वर्ती अन्यतर मनुष्य या मनुष्यिनी अवक्तव्यपदका स्वामी है । शेष प्रकृतियोंके पदोंका भङ्ग ओघके समान है । परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें भुजगारपदका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला अन्यतर जीव भुजगार-पदका स्वामी है । अल्पतर और अवस्थितपदका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और क्षपक उक्त दो पदोंका स्वामी है ।

७१६. संयतासंयत, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका भङ्ग अनुदिशके समान है । इतनी विशेषता है कि संयतासंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्यपद ओघसे साध लेना चाहिए । असंयतोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इसीप्रकार तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थङ्करका अवक्तव्य पद नहीं है । पीत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिए । इसीप्रकार पद्म-लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए । वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । शेषके प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघके समान है । असंज्ञी जीवोंमें ध्रुव प्रकृतियोंके तीन पदोंका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव उक्त पदोंका स्वामी है । शेष प्रकृतियोंके पदोंका स्वामित्व ओघसे साध लेना चाहिए । इसप्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ?

कालानुगम

७२०. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णो०-मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो० छस्संघ०-वण्ण०४–अगु०४–तिरिक्खाणु०-उज्जो०–दोविहा०–तस-बादर-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-थिरादिछयुगल णिमि०-णीचा०-पंचंत० भुज० केवचिरं कालादो होदि? जह० एग०, उक्क० चत्तारि समया। अप्पद०केव०? जह० एग०,उक्क० तिण्णि सम०। अवट्ठि० जह० एग, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० एग०। चदुण्णं आयुगाणं अवत्तव्व० जह० उक्क० एग०। अप्पद० जह० उक्क० अंतो०। वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जहण्णु० एगस०। मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० एग०। एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधार० भुज० जह० एग०, उक्क० वेसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अवत्त०-अवट्ठि० देवगदिभंगो। बीइंदि०-तीइंदि०-चदुरिं० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम०। अवट्ठि०-अवत्त० देवगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अवट्ठि जह० एग०, उक्क०

ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तराय इनके भुजगारबन्धका कितना काल है? जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतरबन्धका कितना काल है? जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल एक समय है। चार आयुओंके अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। अल्पतरपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्करके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। एकेन्द्रियजाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवक्तव्य और अवस्थित पदका भङ्ग देवगतिके समान है। द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति और चतुरिन्द्रियजातिके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग देवगतिके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यपदका जघन्य और उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतो० । अवत्त० जहण्णु० एगस० । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४–मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि० ।

७२१. णिरएसु धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । एवं सेसाणं पि । णवरि अवत्तव्वगो यस्स अत्थि तस्स एय-समयं । एवं सव्वणिरयाणं ।

७२२. तिरिक्खेसु ओघो । णवरि धुविगाणं अवत्तव्वं णत्थि । मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० देवगदिभंगो । पंचिंदियतिरिक्खेसु मणुसग०-चदुजादि-मणुसाणु०-थावर-आदाव-सुहुम-साधार०-उच्चा० देवगदिभंगो । सेसाणं भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । सेसं ओघं । पंचिंदियपज्जत्त-जोणिणीसु एवं चेव । णवरि अपज्जत्तणाम देवग-दिभंगो । पंचिंदिय०अपज्ज० धुविगाणं भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । सादासाद०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंप०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-अपज्ज०-पत्ते०-अथि-रादिपंच-णीचा० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । अवट्ठि० ओघं । सेसं णिरयभंगो ।

काल एक समय है । इसीप्रकार ओघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये ।

७२१. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है । अवस्थितपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार शेष प्रकृतियोंके पदोंका काल जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि जिस प्रकृतिका अवक्तव्यपद है उसका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । इसीप्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिये ।

७२२. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान काल है । इतनी विशेषता है कि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका अवक्तव्यपद नहीं हैं । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग देवगतिके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें मनुष्यगति, चार जाति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, साधारण और उच्चगोत्रका भङ्ग देवगतिके समान है । शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । शेष भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यञ्च और योनिनी जीवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनमें अपर्याप्त नामका भङ्ग देवगतिके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है । सातावेदनीय, असातावेदनीय पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, अपर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और नीचगोत्रके भुजागार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अवस्थितपदका काल ओघके समान है । शेष भङ्ग नरकियोंके समान हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२३. मणुसा०३ सव्वाणं भुज०-अप्प० जह० एग०,उक्क०बेसम०। अवट्ठि०-अवत्तव्वं ओघं। एवं मणुसभंगो पंचमण०-पंचवचि०-ओरालि०-वेउव्वि०-वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि०-विभंग०-आभि०-सुद०-ओधि०-मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद-ओधिदं०-तेउ०-पम्म०-सुक्कले०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०-सण्णि त्ति। मणुसअपज्ज० णेरइगभंगो। एवं देवाणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च।

७२४. पंचिंदिय०२ चदुआयु० ओघं। वेउव्वियछक्क-आहारदुग-तित्थय०-चदुजादि-आदाव-थावर सुहुम-साधार० भुज० अप्पद० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवट्ठि०-अवत्तव्वं ओघं। सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। मणुसग०-मणुसाणु० उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। पज्जत्त०-अपज्जत्तणामाणं देवगदिभंगो। पंचिंदियअपज्ज० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णवरि मणुसग०-मणुसाणु० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। अप्पद० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवट्ठि०-अवत्त० ओघं।

७२३. मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग ओघके समान है। इसीप्रकार मनुष्योंके समान पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, औदारिक काययोगी, वैक्रियिककायोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, विभङ्गज्ञानी आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशम सम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार देव, एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये।

७२४. पञ्चेन्द्रियद्विकमें चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। वैक्रियिक छह, आहारकद्विक, तीर्थङ्कर, चार जाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगारपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। पर्याप्त और अपर्याप्त नामका भङ्ग देवगतिके समान है। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तकोंमें तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अल्पतरपदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२५. तस–तसपज्जत्त० वेउव्वियछक्क–एइंदि०–आहारदुग–आदाव–थावर–सुहुम-साधार·तित्थय० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवट्ठि०–अवत्त० ओघं । बेइंदि० भुज० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । अवट्ठि० अवत्त० सेसाणं ओघं । पज्जत्ताणं अपज्जत्तणामाणं च देवगदिभंगो ।

७२६. तसअपज्ज० धुविगाणं भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम० । अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । अवट्ठि० ओघं । दोवेदणीय०-पंचणोक०–तिरिक्खग०-पंचिंदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-अथिरादिपंच-णीचा० भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम० । अप्पद० जह० एग, उक्क० तिण्णिसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । मणुसग०-मणुसाणु० भुज० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम० । अप्पद० जह० एग०, उक्क० बेसम० । [अवट्ठि०-अवत्त०] तिण्णिविगलिंदि०-तसणामाणं च ओघं । णवरि बेइंदि० भुज० बेसम० । सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क०-बेसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं ।

७२७. ओरालियमि० मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०·बेसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । देवगदि०४–तित्थय० भुज०–अप्पद०

७२५. त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें वैक्रियिक छह, एकेन्द्रियजाति, आहारकद्विक, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण और तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। द्वीन्द्रिय जातिके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। पर्याप्त और अपर्याप्तका भङ्ग देवगतिके समान है।

७२६. त्रस अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित पदका भङ्ग ओघके समान है। दो वेदनीय, पांच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिकासंहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पांच और नीचगोत्रके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अवस्थित और अवक्तव्यपदका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल चार समय है। अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य-पदका तथा तीन विकलेन्द्रिय और त्रस नामकर्मका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि द्वीन्द्रियजातिके भुजगार पदका उत्कृष्टकाल दो समय है। शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है।

७२७. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगार और अल्पतरपद का जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल क्रमसे तीन समय और दो समय है। अवस्थित और अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। देवगति चार और तीर्थ-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह० एग०, उक्क०, बेसम० । सेसाणं ओघं । णवरि जेसिं चत्तारि समयं तेसिं तिण्णि समयं ।

७२८. कम्मइ० धुविगाणं थावरपगदीणं च अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । अवत्त० [जहण्णु०] एगस० । सेसाणं अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० जहण्णु० एग० । देवगदिपंचग० अवट्ठि० जह० एग०. उक्क० बेसम० ।

७२९. इत्थिवेदे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंतरा० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । पंच-दंस०-दोवेदणी०-मिच्छ०-बारसक०-इत्थिवे०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्ख-ग०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-छस्संठाणं-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-वण्ण०४-तिरि-क्खाणु०-अगु०४-उज्जो०दोविहा०-तस०४-थिरादिछयुगल-णिमि०-णीचा० भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । पुरिसवेदे सो चेव भंगो । णवरि पुरिस०दोपदा जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । णवुंसगे ओघं । णवरि इत्थि०-पुरिस० देवगदिभंगो । अवगदवे० सव्वपगदीणं भुज०-अप्प०-

ङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है । शेष प्रकृतियोंके पदोंका काल ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि जिनका ओघसे चार समय काल है उनका काल यहाँ तीन समय है ।

७२८. कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुव और स्थावर प्रकृतियोंके अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । शेष प्रकृतियोंके अवस्थित पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । देवगतिपञ्चकके अवस्थित पदका जघन्य-काल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है ।

७२९. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्त-रायका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । पाँच दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारि आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्च-गत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, उद्योत, दो विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह युगल, निर्माण और नीचगोत्रके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । मनुष्यगति, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगार पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल दो समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । पुरुषवेदी जीवोंमें वही भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके दो पदोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल तीन समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । नपुंसकवेदी जीवोंमें ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भङ्ग देवगतिके समान है । अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियों-के भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्त० एग० । अवट्ठि० ओघं ।

७३०. सुहुमसंप० सव्वाणं भुज०-अप्प० एग० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । [चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो । णवरि तेइंदि०-चदुरिं० भुज० जह० एग० उक्क० बे० ।]

७३१. असण्णीसु वेउव्वियछ०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । णवरि इत्थिवेदादिपंचिंदियसंजुत्ताणं पगदीणं उक्कस्सं अप्पदरं बेसमयं । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधारणाणं ओघं ।

७३२. आहारगेसु चदुआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० ओघो । मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० भुज० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । अप्प० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । एइंदिय-आदाव-थावर-सुहुम-साधारणं च ओघं । सेसाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० तिण्णिस० । अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं कालं समत्तं ।

अंतराणुगमो

७३३. अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-

पदका काल ओघके समान है ।

७३०. सूक्ष्मसाम्परायिक जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जातिके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है ।

७३१. असंज्ञी जीवोंमें वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद आदि पञ्चेन्द्रियसंयुक्त प्रकृतियोंके अल्पतर पदका उत्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । एकेन्द्रियजाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणका भङ्ग ओघके समान है ।

७३२. आहारक जीवोंमें चार आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके भुजगार पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थित और अवक्तव्य पदका काल ओघके समान है । एकेन्द्रियजाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है । अवस्थित और अवक्तव्यपदका काल ओघके समान है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । इस प्रकार काल समाप्त हुआ ।

अन्तरानुगम

७३३. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० बंधंतरं केव० ? जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्धपोग्गल० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्धपोग्गल० । सादासाद०-चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ-जस०-अजस० तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । एवमेदाणं याव अणाहारग त्ति एस भंगो । अट्ठक० तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी दे० । अवत्त० णाणावरणभंगो । इत्थि० तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू० । पुरिस० तिण्णिपदा० णाणा०भंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादिरे० । णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें०तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णि पलिदो० देसू० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णिपलिदो० देसू० । तिण्णिआयु० अवत्त०-अप्पद० जह० अंतो, उक्क० अणंतका० । तिरिक्खायु० अवत्त०-अप्पद० जह० अंतो०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं० । वेउव्वियछ० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अणंतका० ।

ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितबन्धका अन्तर कितना है ? जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, यशःकीर्ति और अयशःकीर्तिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार इन प्रकृतियोंका अनाहारक मार्गणातक यही भङ्ग है । आठ कषायोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । अवक्तव्यपदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । स्त्रीवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । पुरुषवेदके तीन पदोंका अन्तर ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर है । नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासागर और कुछ कम तीन पल्य है । तीन आयुओंके अवक्तव्य और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है । तिर्यञ्चायुके अवक्तव्य और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त्व है । वैक्रियिक छहके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका

Jain Education International　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसद०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। मणुसगदितिगं तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं। पंचिंदि०-पर०-उ०-तस०४ तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सदं। ओरालि० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अणंतका०। आहारदुगं० तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्धपोग्गल०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णि पलिदो० देसू०। ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादि०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादिरे०। उज्जो० तिण्णिपदा० तिरिक्खगदिभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं। णीचागो० तिण्णिपद० णवुंसगभंगो। अवत्त० जह० उक्क० तिरिक्खगदिभंगो। तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०।

जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका अनन्त काल है। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक है। मनुष्यगतित्रिकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रसचतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। औदारिक शरीरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। आहारक द्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतके तीन पदोंका अन्तर तिर्यञ्चगतिके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर तिर्यञ्चगतिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३४. णिरएसु धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक० वेसम० । पुरिस०-समचदु०-वज्जरिस० पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक० तेंत्तीसं साग० देसू० । धुवभंगो तित्थयरं । णवरि अवत्तव्वं णत्थि अंतरं । सेसाणं पि पगदीणं तिण्णि पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक० तेंत्तीसं साग० देसू० । दोआयु० दो पदा० जह० अंतो०, उक० छम्मासं देसूणं । एवं सत्तमाए । सेसाणं पि तं चेव पुढवि० । णवरि मणुसग०–मणुसाणु०–उच्चा० पुरिसवेदेण समं कादव्वं ।

७३५. तिरिक्खेसु धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक० चत्तारिसम० । थीणगिद्धि०३–मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णि-पदा० जह० एग०, उक० तिण्णिपलिदो० देसू० । अवत्तव्वं ओघं । अपच्चक्खाणा०४-तिण्णिपदा० जह० एग०, उक० पुव्वकोडी० देसू० । अवत्त० ओघं । इत्थिवे० तिण्णि-पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक० तिण्णिपलिदो० देसू० । णवुंस०-तिरिक्खग०-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिरिक्खाणु०-आदा-उज्जो०-अप्पसत्थ०-थावरादि०४–दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०,

७३४. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायो-गति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर नहीं है । शेष प्रकृतियोंके भी तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । शेष पृथिवियोंमें भी यही भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि इनमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके पदोंका अन्तर पुरुषवेदके साथ कहना चाहिए ।

७३५. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है । अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है । स्त्रीवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम तीन पल्य है । नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, चार जाति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीच गोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी० देसू०। णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-ओरालि०-णीचा० अवत्त० ओघं। पुरिस०-समचदु०-पंचिंदि०-परघा०-उस्सा०-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी० देसू०। णवरि पुरिसवे० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। तिण्णिआयुगाणं दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसूणं०। तिरिक्खायु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी सादिरे०। वेउव्वियछक्कं-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं।

७३६. पंचिंदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुध०। अपच्चक्खाणा०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडिपुध०। इत्थि० तिण्णिपदा० मिच्छत्तभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। णवुंस०-तिण्णिगदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो० अप्प-

---

है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। तीन आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है।

७३६. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। स्त्रीवेदके तीन पदोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नपुंसकवेद, तीन गति, चार जाति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्थ०-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० । पुरिस० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । चदुआयु० तिरिक्खोघं । देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-देवाणुपु०-परघा०-उस्सा० पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-उच्चा० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० ।

७३७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगे धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० अंतो०, अवत्त० जह० उक्क० अंतो । दोआयु० दोपदा० जह० उक्क० अंतो० । एवं सव्वअपज्जत्ताणं एइंदिय-विगलिंदिय-पंचकायाणं च । णवरि यो जस्स भुजगारकालो सो अवट्ठिदस्स अंतरं होदि । यो अवट्ठिदकालो सो भुज०-अप्पद० अंतरं होदि । आयुगाणं दोण्णं पदाणं पगदिअंतरं कादव्वं । किंचि विसेसो ।

७३८. मणुसेसु पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-णामणव-पंचंत० तिण्णिपदा० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्विकोडिपुध० । आहारदुगं तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्विकोडिपुधत्तं । तित्थय० तिण्णिपदा

अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। पुरुषवेदके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। चार आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिक शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है।

७३७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, एकेन्द्रिय, विकलत्रय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जो जिसका भुजगारबन्धका काल है वह उसके अवस्थितबन्धका अन्तरकाल होता है तथा जो अवस्थितबन्धका काल है वह भुजगार और अल्पतरबन्धका अन्तर काल होता है। तथा आयुओंके दोनों पदोंका प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान अन्तर करना चाहिए। कुछ विशेषता है।

७३८. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, नामकी नौ प्रकृतियाँ और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। आहारकद्विकके तीन पदोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू०। सेसाणं पंचिंदिय-तिरिक्खभंगो। मणुसायु० तिरिक्खायुभंगो।

७३९. देवेसु धुविगाणं णिरयभंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ० दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचा० चदुण्णं पदाणं जह० एग०, उक्क० एक्कत्तीसं० देसू०। णवरि अवत्त० जह० अंतो०। पुरिस०-समचदु०-वज्जरिस० पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्तव्वं इत्थिवेदभंगो। दोआयु० णिरयभंगो। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, चदुण्णं पि अट्ठारस साग० सादि०। मणुसग०-मणुसाणु०-तिण्णिपदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठारस सा० सादि०। एइंदिय-आदाव-थावर० तिण्णिपदा० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेसागरोव० सादि०। पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस० तिण्णिपदा० सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० वेसाग० सादि०। तित्थय० णाणावरणभंगो। एदेण कमेण सव्वदेवाणं अंतरं कादव्वं।

७४०. पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्ता० तस०-तसपज्जत्ता० पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणवणाम०-पंचंतराइ० तिण्णिप० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०,

---

जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग तिर्यञ्चायुके समान है।

७३९. देवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार; स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके चार पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। दो आयुओंका भङ्ग नारकियोंके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और चारों पदोंका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। एकेन्द्रियजाति, आतप और स्थावरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इसी क्रमसे सब देवोंमें अन्तर प्राप्त करना चाहिए।

७४०. पञ्चेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रस पर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजस आदि नौ नामकर्म और पाँच अन्तरायके तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० सगट्ठिदी० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा० ओघं । अवत्त० णाणावरणभंगो । एवं इत्थि० । णवरि अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० देसू० । अट्ठक० तिण्णिपदा० ओघं । अवत्त० णाणावरणभंगो । णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचा० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णि पलिदो० देसू० । अवत्तव्वं तं चेव । णवरि जह० अंतो० । पुरिस० तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो । अवत्त० ओघं । तिण्णिआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं० । मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सगट्ठिदी० । पज्जत्तगेसु चदुण्णं आयुगाणं दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं । णवरि तसपज्जत्ते मणुसायु० जह० अंतो०, उक्क० बेसागरोवमसहस्सा० देसू० । णिरयगदि-णिरयाणु०-चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० पंचासीदि-सागरोवमसदं । अवत्त० तं चेव । णवरि जह० अंतो० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं । अवत्तव्वं तं चेव । णवरि जह० अंतो० । मणुस०-देवगदि-वेउव्विय०-वेउव्वि०अंगो०-दोआणु० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । अवत्तव्वं तं चेव । णवरि जह० अंतो० । पंचिंदि०-

---

पदोंका भङ्ग ओघके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । इसी प्रकार स्त्रीवेदके पदोंका अन्तरकाल जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । आठ कषायोंके तीन पदोंका अन्तर ओघके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । अवक्तव्य पदका वही अन्तर है । इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । पुरुषवेदके तीन पदोंका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है । तीन आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त्व है । मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है । पर्याप्तकोंमें चार आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागरपृथक्त्वप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि त्रसपर्याप्तकोंमें मनुष्यायुका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागर है । नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है । अवक्तव्य पदका वही अन्तर है । इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है । अवक्तव्य पदका वही अन्तर है । इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और दो आनुपूर्वीके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तैंतीस सागर है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर० उस्सा०-तस०४ तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो। अवत्तव्वं ओघं। ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णिपदा० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। आहारदुगं तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायट्ठिदी०। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिपदा० णाणावरणभंगो। अवत्त० ओघं। तित्थय० ओघं। उच्चा० तिण्णिपदा देवगदिभंगो। अवत्त० समचदु०भंगो।

७४१. पंचमण०-पंचवचि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव-आहारदुग-तित्थय०-पंचंत० भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० णत्थि अंतरं। चदुआयु० दोपदा० णत्थि अंतरं। सेसाणं पगदीणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। एस भंगो ओरालि०-वेउव्वि०-आहार०। णवरि ओरालिए ओरालि०-वेउव्विय-छक्कं वज्ज परियत्तीणं अवत्त० जहण्णु० अंतो०। दोआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पगदिअंतरं०।

७४२. कायजोगीसु पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव-वेउव्विय-

अवक्तव्य पदका वही अन्तर है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रसचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभ नाराच संहननके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। आहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। उच्चगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग देवगतिके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग समचतुरस्र संस्थानके समान है।

७४१. पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नौ, आहारकद्विक, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। यही भङ्ग औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी और आहारककाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवोंमें औदारिक शरीर और वैक्रियिक छहको छोड़कर परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है।

७४२. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छक्क-ओरालि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-आहारदुगं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिस० । णवरि आहारदुग० अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्तव्व० णत्थि अंतरं । दोआयु० दोपदा० णत्थि अंतरं । तिरिक्खायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० बावीसं वाससहस्साणि सादि० । मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिपदा साद-भंगो । अवत्तव्वं ओघं । दोवेदणी०-सत्तणोक०-पंचजादि-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिदसयुगलं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० ।

७४३. ओरालियमि० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम० । दोआयु० अपज्जत्तभंगो । देवगदि०४-तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । णवरि मिच्छत्तस्स अवत्त० णत्थि अंतरं ।

७४४. वेउव्वियमिस्सका० धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि०

तैजसशरीर आदि नौ, वैक्रियिकषट्क, औदारिकशरीर, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायके तीन पदों-का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय और आहारद्विकके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकके अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। दो आयुओंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्या-नुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। दो वेदनीय, सात नोकषाय, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगति और त्रस-स्थावर दस युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

७४३. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। दो आयुओंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। देवगतिचतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४४. वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह० एग०, उक्क० बेसम० । एवं तित्थय० । सेसाणं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । एवं आहारमि० । कम्मइग० सव्वाणं अवट्ठि०-अवत्त० णत्थि अंतरं ।

७४५. इत्थिवे० पंचणा० चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । थीणगिद्धि०-मिच्छ०-अणंताणुबंधि४ तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० सदपुधत्तं० । णिद्दा-पयला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव तिण्णि पदा णाणावरण-भंगो । अवत्त० णत्थि अंतरं । सादादिबारसण्णं ओघं । अट्ठक० तिण्णि पदा ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं० । इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खगदि-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचा० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू० । एवं अवत्त० । णवरि जह० अंतो० । पुरिस०-पंचिंदि०-समचदु०-पसत्थ०-तस-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू० । णिरयायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं

एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । इसी प्रकार तीर्थङ्कर प्रकृतिके पदोंका अन्तरकाल जानना चाहिए । शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें जानना चाहिये । कार्मणकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है ।

७४५. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपृथक्त्व है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । साता वेदनीय आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । आठ कषायोंके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपृथक्त्व है । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है । इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है । इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है । नरकायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देसू०। तिरिक्खायु-मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं०। देवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठावण्णं पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। वेउव्वियछ०–तिण्णिजादि-सुहुम-अपज्जत्त–साधार० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० सादिरे०। एवं अवत्त०। णवरि जह० अंतो०। मणुसगदिपंचग० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू०। णवरि ओरालि० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० सादि०। आहारदुग० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० सगट्ठिदी०। एवं अवत्त०। णवरि जह० अंतो०। पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० तिण्णि पदा० जह० उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० सादि०। तित्थय० भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० णत्थि अंतरं।

७४६. पुरिसवे० अट्ठारसण्णं इत्थिभंगो। थीणगिद्धि०३–मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० सगट्ठिदी०। णिद्दा-पचला-भय-दुगुंछ-तेजइगादिणव तिण्णि पदा ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायट्ठिदी०। अट्ठक० ओघं। णवरि अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० काय-

---

एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपृथक्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक अट्ठावन पल्य है। वैक्रियिक छह, तीन जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पल्य है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि उसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यगतिपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पल्य है। आहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके तीन पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचवन पल्य है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४६. पुरुषवेदी जीवोंमें अठारह प्रकृतियोंका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थितिप्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजस शरीर आदि नौ प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदी० । इत्थि०-णवुंस० पंचसंठा० पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे०-णीचा० पंचिंदियपज्जत्तभंगो । पुरिस० तिण्णि पदा णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० । समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चा० पुरिस०भंगो । णिरय-तिरिक्ख-मणुसायूणं इत्थिभंगो । णवरि सागारोव०सदपुधत्तं० । देवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । णिरय-तिरिक्खग०-चदुजादि-दोआणु०-आदा०-उज्जो०-थावरादि०४ तिण्णि पदा० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेवट्ठिसागरो०सदं । देवगदि०४-आहारदुगं पंचिंदियपज्जत्तभंगो । मणुस०दुग०-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णि पदा० तेजइगभंगो । अवत्त० णिरयगदिभंगो । तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० ।

७४७. णवुंसगे धुविगाणं अट्ठारसण्णं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णिवुंस-पंचसंठा०-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० तिण्णिपदा०

अन्तर कायस्थितिप्रमाण है। आठ कषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीच गोत्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है। पुरुषवेदके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागर है। समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। नरकायु, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। नरकगति, तिर्यञ्चगति, चार जाति, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एकसौ त्रेसठ सागर है। देवगतिचतुष्क और आहारकद्विकका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है। मनुष्यगतिद्विक, औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभ नाराचसंहननके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रसचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग तैजस शरीरके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग नरकगतिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है।

७४७. नपुंसकवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली अठारह प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और अनादेयके तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं० देसू० । एवं अवत्त० । णवरि जह० अंतो० । णवरि थीणगिद्धि०३–मिच्छ०–अणंताणुबंधि०४ ओघं । पुरिस०–समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर आदे० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं देसू० । णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव तिण्णिप० णाणावरणभंगो । अवत्तव्व० णत्थि अंतरं । तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-मणुस०३–आहारदुगं ओघं । देवायु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू० । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचागो० तिण्णि पदा० इत्थिभंगो । अवत्त० ओघं । चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णि पदा० जह० एग०, उ० तेत्तीसं सा० सादि० । एवं अवत्त० । णवरि जह० अंतो० । पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णि पदा सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी दे० । ओरालि० अवत्त० ओघं । ओरालि०अंगो० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं० सादि० । वज्जरिस० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं० देसू० । तित्थय० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू० ।

पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी और विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका भङ्ग ओघके समान है । पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजस शरीर आदि नौके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यत्रिक और आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है । देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है । चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है । इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रसचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराच संहननके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है । औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । वज्रर्षभनाराच संहननके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है । अपगतवेदवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवगदवे० सव्वाणं भुज०-अप्प० जह० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं।

७४८. कोधे धुविगाणं अट्ठारसण्हं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थीणगिद्धि०३–मिच्छ०-बारसक० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। अवत्त० णत्थि अंतरं। णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव-तित्थय० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। चदुआयु० दोपदा० णत्थि अंतरं। सेसाणं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। एवं माणे। णवरि धुविगाणं सत्तारसण्णं। कोधसंज० णिद्दाए भंगो। एवं मायाए वि। णवरि दोसंज० णिद्दाए भंगो। एवं चेव लोभे। णवरि चत्तारि संज० णिद्दाए भंगो। आहारदुगं मणजोगिभंगो। सेसं कोधभंगो।

७४९. मदि०-सुद० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। सादासाद०-छण्णोक० ओघं सादभंगो। मिच्छ० णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० णत्थि अंतरं। णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-

उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

७४८. क्रोधकषायवाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली अठारह प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और बारह कषायके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नौ और तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। चार आयुओंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मानकषायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके ध्रुवबन्धवाली सत्रह प्रकृतियोंका अन्तरकाल कहना चाहिए। क्रोधसंज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार मायाकषायवाले जीवोंके भी कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके दो संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। इसी प्रकार लोभकषायवाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके चार संज्वलनका भङ्ग निद्राके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग क्रोधके समान है।

७४९. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। सातावेदनीय, असातावेदनीय और छह नोकषायका भङ्ग ओघके सातावेदनीयके समान है। मिथ्यात्वका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूभग-दुस्सर-अणादे० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू०। एवं अवत्त०। णवरि जह० अंतो०। चदुआयु०-वेउव्वियछ०-मणुसगदितिगं ओघं। तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० एक्कत्तीसं० सादिरे०। अवत्त० ओघं। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, अवत्त० ज० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सादि०। पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णि पदा०सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। ओरालि० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू०। अवत्त० ओघं। समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णिप० सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू०। ओरालि० अंगो०-[वज्जरिस०] ओरालियभंगो। णवरि अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि०। उज्जो० तिण्णि पदा० तिरिक्खगदिभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० एक्कत्तीसं सा० सादि०। णीचा० तिण्णिप० णवुंसगभंगो। अवत्तव्वं ओघं।

७५०. विभंगे धुविगाणं दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। एवं मिच्छ०। णवरि अवत्त० णत्थि अंतरं। णिरय-देवायूणं दोपदा० णत्थि अंतरं। तिरिक्ख-मणुसायूणं दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं

अनादेयके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। इसी प्रकार अवक्तव्य पदका अन्तरकाल है। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। चार आयु, वैक्रियिक छह और मनुष्यगतित्रिकका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारके तीन पदोंका अन्तर एक समय है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रस चतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। औदारिक शरीरके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य पदका अन्तर ओघके समान है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। औदारिक अङ्गोपाङ्ग और वज्रऋषभनाराच संहननका भङ्ग औदारिक शरीरके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतके तीन पदोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग नपुंसक वेदके समान है। अवक्तव्यपदका अन्तर ओघके समान है।

७५०. विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार मिथ्यात्व प्रकृतिका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देस्र० । सेसाणं ओरालि०भंगो । णवरि तिण्णिजा०-सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० तिण्णि पदा० जह० एग०, उ० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं ।

७५१. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०–छदंसणा०-चदुसंज०–पुरिस०-भय–दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४–अगु०४–पसत्थ०–तस०४–सुभग-सुस्सर–आदें०-णिमि०-उच्चा० तिण्णिपदा ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० छावट्ठि सा० सादि० । अट्ठक० तिण्णिप० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । दोआयु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । मणुसगदिपंचग० तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडि० सादि० । अवत्त० जह० पलिदो० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । देवगदि०४ तिण्णि प० जह० एग०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । आहारदुगं देवगदिभंगो । तित्थय० चत्तारि पदा ओघं । एवं ओधिदंस०-सम्मादि० ।

७५२. मणपज्जव० पंचणा०–छदंसणा०–चदुसंज०–पुरिस०-भय–दुगुं०–देवगदि–पंचिंदि०-तिण्णिसरीर०-समचदु०–वेउव्वि०अंगो०–वण्ण०४–देवाणु०-अगु०४–पसत्थ०–तस०४–सुभग-सुस्सर-आदेंज्ज०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०–पंचंत० तिण्णि प० जह० एग०,

छह महीना है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग औदारिक शरीरके समान है । इतनी विशेषता है कि तीन जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है ।

७५१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और उच्चगोत्रके तीन पदोंका अन्तरकाल ओघके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक छयासठ सागर है । आठ कषायके तीन पदोंका अन्तर ओघके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । मनुष्यगतिपञ्चकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर साधिक एक पल्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । देवगति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । आहारकद्विकका भङ्ग देवगतिके समान है । तीर्थङ्कर प्रकृतिके चार पदोंका भङ्ग ओघके समान है । इसीप्रकार अवधिदर्शनी और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये ।

७५२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, तीन शरीर, समचतुरस्र संस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० । देवायु० दोपदा० पगदिअंतरं । सेसाणं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । एवं संजदा० ।

७५३. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंसणा०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । आहारदुग० सादभंगो । णिद्दा-पचला-तिण्णिसंज०-पुरिस०-भय-दु०-देवगदि-पसत्थपणुवीस-तित्थय० दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सेसाणं संजदभंगो ।

७५४. परिहार० धुविगाणं दो पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । आहारदुगं चत्तारि पदा० जह० अंतो०, उक्क० अंतो० । तित्थय० तिण्णि पदा० णाणावरणभंगो । अवत्त० णत्थि अंतरं । सुहुमसंप० सव्वाणं भुज०-अप्प० जह० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० एग० । संजदासंजदा० परिहारभंगो ।

७५५. असंजदे धुविगाणं दो पदा ओघं । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-उज्जो०-

अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । देवायुके दो पदोंका अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है । शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये ।

७५३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । आहारक द्विकका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । निद्रा, प्रचला, तीन संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति आदि प्रशस्त पच्चीस प्रकृतियाँ और तीर्थङ्कर इनके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग संयतोंके समान है ।

७५४. परिहारविशुद्धि संयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । आहारकद्विकके चार पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है । सूक्ष्मसांपराय संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । संयतासंयत जीवोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है ।

७५५. असंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका भङ्ग ओघके समान है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, उद्योत, अप्रशस्त विहायो-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णवुंसगभंगो । पुरिस०-समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णि पदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० देसू०। ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णि पदा ओघं। अवत्त० णवुंसगभंगो। सेसं मदिभंगो। चक्खु० तसपज्जत्तभंगो। अचक्खुदं० ओघं।

७५६. किण्ण-णील-काउलेस्सा० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णवुंस०-दोगदि-पंचसंठा-पंचसंघ०-दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर अणादें०-णीचुच्चागो० तिण्णि प० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सत्तारस० सत्त साग० देसू०। पुरिस०-समचदु०-वज्जरिसभ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदे० तिण्णि पदा सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं० सत्तारस० सत्त-साग० देसू०। णिरय-देवायु० दोपदा० णत्थि अंतरं। तिरिक्ख-मणुसायु० णिरयगदिभंगो। णिरय-देवगदि-पंचजादि-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-तस-थावर-चदुयुगलं तिण्णि पदा० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० तिण्णि पदा जह० एग०, उक्क० बावीसं सत्तारस० सत्त साग०

गति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रऋषभनाराचसंहननके तीन पदोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्य पदका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। अचक्षुःदर्शनवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है।

७५६. कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग दुस्वर, अनादेय, नीचगोत्र और उच्चगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। पुरुषवेद समचतुरस्र संस्थान, वज्रऋषभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्तरह सागर और कुछ कम सात सागर है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग नरकगतिके समान है। नरकगति, देवगति, पाँच जाति, औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, त्रस स्थावर चार युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदका अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आङ्गोपाङ्गके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे साधिक बाईस सागर, साधिक सत्तरह सागर और साधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सादि० । अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारस० सादि०, उक्क० बावीसं० सादि० । णीलाए जह० सत्तसाग० [सादि०, उक्क०] सत्तारस० सादिरे० । काऊए जह० दसवस्ससहस्साणि सादि०, उक्क० सत्त साग० सादि० । तित्थय० धुवभंगो । णवरि अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । काऊए तित्थय० णिरयभंगो । णील-काऊए मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० पुरिसवेदभंगो ।

७५७. तेउले० धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थवि०-थावर-दूभग-दुस्सर-अणादें० णीचा० तिण्णिप० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेसाग० सादि० । पुरिस०-मणुसग०-पंचिंदि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु०-पसत्थवि०-तस-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० सोधम्मभंगो । अट्ठक० [ओरालि०-] आहारदुग-तित्थय० दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । देवायुग० दोपदा णत्थि अंतरं णिरंतरं । दोआयु० देवभंगो । देवगदिचदुक्क० तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि० । अवत्त०

सात सागर है । अवक्तव्य पदका कृष्णलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सत्रह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस सागर है । नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सात सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सत्रह सागर है । कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । कपोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिका नारकियोंके समान भङ्ग है । नील और कपोतलेश्यामें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है ।

७५७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सबका साधिक दो सागर है । पुरुषवेद, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका भङ्ग सौधर्मकल्पके समान है । आठ कषाय, औदारिक शरीर, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । देवायुके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है, वे निरन्तर हैं । दो आयुओंका भङ्ग देवोंके समान है । देवगति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए । इतनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि अंतरं । एवं पम्माए वि । णवरि ओरालि०-आहारदुग-'ओरालि०अंगो०-अट्ठक०-तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । देवगदि०४ तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अट्ठारस साग० सादि० । अवत्त० णत्थि अंतरं० ।

७५८. सुक्काए पंचणा०-छदंसणा०-चदुसंज०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क० वण्ण० ४-अगु०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि-णवुंसगवेदादि० णवगेवज-भंगो । दोवेदणीय चदुणोक०-आहारदुग-थिरादितिण्णियुगलं तिण्णिपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । अट्ठक०-मणुसगदिपंचगं दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । पुरिस०-समचदु०-वज्जरिस०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर आदें०-उच्चा० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तव्वं देवभंगो । देवगदि०४ तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । अवत्तव्व० जह० अट्ठारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । भवसिद्धि० ओघं । अब्भवसि० मिच्छादि० मदि० भंगो ।

७५६. खइगे ओधिभंगो । णवरि तेंत्तीसं साग० सादि० । आयुग० पगदि अंतरं ।

विशेषता है कि औदारिक शरीर, आहारकद्विक, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, आठ कषाय और तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । देवगति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है ।

७५८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थंकर और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद आदिका भङ्ग नौग्रैवेयकके समान है । दो वेदनीय, चार नोकषाय, आहारकद्विक और स्थिर आदि तीन युगलके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । आठ कषाय और मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराच संहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग देवोंके समान है । देवगति चतुष्कके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेंतीस सागर है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । भव्यजीवोंका भङ्ग ओघके समान है । अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानियोंके समान है ।

७५६. क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसगदिपंचग० दोण्णिप० जह० एग० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । देवगदि०४–आहारदुगं तिण्णिपदा जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । तित्थय० ओघं ।

७६०. वेदगे धुविगाणं तिण्णिपदा परिहार०भंगो । अट्ठक०-मणुसगदिपंचग० ओधिभंगो । देवगदिचदुक्क० तिण्णिप० ओधिभंगो । अवत्त० जह० पलिदो० सादि०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । दोआयु०-आहारदुगं ओधिभंगो । तित्थय० दोपदा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं ।

७६१. उवसम० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पुरिस०-भय-दु०-देवगदि०४–पंचिंदि०-तेजा०-क०–वण्ण०४–अगु०४–पसत्थ०–तस०४–सुभग–सुस्सर–आदेंज्ज०–णिमि०-तित्थय०-उच्चा०–पंचंत० तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं० । मणुसगदिपंचग० दोपदा जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सादादिबारस ओघं । एवं आहारदुगं ।

७६२. सासणे धुविगाणं णिरयोघं । तिण्णिआयु० दोपदा० णत्थि अंतरं । सेसाणं

कि यहाँ साधिक तेतीस सागर कहना चाहिए । आयुकर्मका अन्तर प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है । मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । देवगतिचतुष्क और आहारकद्विकके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है ।

७६०. वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयत जीवोंके समान है । आठ कषाय और मनुष्यगतिपञ्चकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । देवगतिचतुष्कके तीन पदोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर साधिक एक पल्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । दो आयु और आहारकद्विकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है ।

७६१. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगतिचतुष्क, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके तीन पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । मनुष्यगतिपञ्चकके दो पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार आहारकद्विकका भङ्ग है ।

७६२. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सादादीणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सम्मामि० सादासाद०-चदुणोक०-थिरादितिण्णियुग० ओघं । सेसाणं धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० ।

७६३. सण्णि० पंचिंदियपज्जत्तभंगो । असण्णी० धुविगाणं भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क, अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । तिण्णिआयु० दो पदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू० । तिरिक्खायु० दो पदा जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी सादि० । वेउव्वियछ०-मणुस०तिग० ओघं । तिरिक्खगदिदुग-णीचा० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तव्वं ओघं । ओरालि० तिण्णिपदा सादभंगो । अवत्तव्वं ओघं । सेसाणं सादभंगो । आहार० मूलोघं । णवरि जम्हि अणंतका० अद्ध-पोग्गलपरि० तम्हि अंगुलस्स असंखेज्ज० । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं अंतरं समत्तं ।

भंगविचयाणुगमो

७६४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-

---

समान है । तीन आयुओंके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है । शेष साता आदि प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सातावेदनीय, असातावेदनीय, चार नोकषाय और स्थिर आदि तीन युगलका भङ्ग ओघके समान है । शेष ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है ।

७६३. संज्ञी जीवोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके समान है । असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है । तीन आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभागप्रमाण है । तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है । वैक्रियिक छह और मनुष्यगति त्रिकका भङ्ग ओघके समान हैं । तिर्यञ्चगतिद्विक और नीचगोत्रके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है । औदारिक शरीरके तीन पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । आहारक जीवोंका भङ्ग मूलोघके समान है । इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्तकाल और अर्धपुद्गल परिवर्तन काल कहा है, वहाँ पर अङ्गुलके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहना चाहिए । अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान कहना चाहिए । इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

भङ्गविचयानुगम

७६४. नाना जीवोंका आलम्बन लेकर भङ्ग-विचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि० तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सिया एदे य अवत्तगे य। सिया एदे य अवत्तगा य। तिण्णिआयुगाणं दो पदा भयणिज्जा। तिरिक्खायु० दो पदा णियमा अत्थि। वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसाणि पदाणि भयणिज्जाणि। सेसाणं सव्वपगदीणं भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त० णियमा अत्थि। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालियका०-णवुंस०-कोधादि०४ मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि आहारग त्ति।

७६५. मणुसअपज्जत्त-वेउव्वियमि०-आहार०-आहारमि०-अवगदवे०-सुहुमसंप०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० सव्वाणं पगदीणं सव्वपदा भयणिज्जा।

७६६. एइंदिएसु धुविगाणं तिण्णि पदा सेसाणं चत्तारि पदा तिरिक्खायु० दो पदा णियमा अत्थि। मणुसायु० दो पदा भयणिज्जा। एवं पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय० एदेसिं बादराणं तेसिं चेव बादरअपज्ज० तेसिं सव्वसुहुम० वणप्फदि-णियोद एइंदियभंगो।

७६७. ओरालियमि०-कम्मइग०-अणाहारगेसु देवगदि०४-तित्थय० तिण्णि पदा

ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। कदाचित् इन पदोंके बन्धक जीव हैं और अवक्तव्य पदका बन्धक एक जीव है। कदाचित् इन पदोंके बन्धक जीव हैं और अवक्तव्य पदके बन्धक नाना जीव हैं। तीन आयुओंके दो पदवाले जीव भजनीय हैं। तिर्यञ्चायुके दो पदवाले जीव नियमसे हैं। वैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं। शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। शेष सब प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य पदवाले जीव नियमसे हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

७६५. मनुष्यअपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूक्ष्मसाम्परायसंयत, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब पद भजनीय हैं।

७६६. एकेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पद, शेष प्रकृतियोंके चार पद और तिर्यञ्चायुके दो पदवाले जीव नियमसे हैं। मनुष्यायुके दो पदवाले जीव नियमसे भजनीय हैं। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, इनके बादर तथा इन्हींके बादर अपर्याप्त और इन्हीं के सब सूक्ष्म, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंके एकेन्द्रियोंके समान भङ्ग हैं।

७६७. औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवों में देवगति चतुष्क

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भयणिज्जा । सेसाणं ओघं । णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेज्ज-असंखेज्जरासीणं अवट्ठि० णियमा अत्थि । सेसाणि पदाणि भयणिज्जाणि । एवं भंगविचयं समत्तं ।

भागाभागाणुगमो

७६८. भागाभागं दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालिय०-तेजा० क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप्प० केवडियो भागो । असंखेज्जदिभागो ? अवट्ठि० केव० ? असंखेज्जा भागा । अवत्त० सव्व० केव० ? अणंतभागो । चदुण्णं आयु० अवत्त० सव्वजी० केव० ? असंखेज्ज० । अप्प० सव्व० केव० ? असंखेज्जा भा० । आहारदुगं भुज०-अप्प०-अवत्त० सव्व० केव० ? संखेज्जदि० । अवट्ठि० सव्व० केव० ? संखेज्जा भा० । सेसाणं सव्वपग० भुज०-अप्प०-अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेज्ज० । अवट्ठि० सव्व० केव० ? असंखेज्जा भागा । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि० - अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि-आहार०-अणाहारग त्ति । णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहारगेसु

और तीर्थङ्कर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघ के समान है । नरक गति से लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात राशिवाली मार्गणाओंमें अवस्थित पदवाले जीव नियम से हैं । शेष पदवाले जीव भजनीय हैं । इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुआ ।

भागाभागानुगम

७६८. भागाभाग दो प्रकार का है—ओघ और आदेश । ओघ से पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं । अनन्तवें भाग प्रमाण हैं । चार आयुओंके अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ? अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । आहारकद्विकके भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । अवस्थितपदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । शेष सब प्रकृतियों के भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अवस्थितपदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, नपुंसक वेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकके भुजगार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवगदिपंचग० भुज०-अप्प० सव्व० केव० ? संखेंज्जदिभा०। अवट्ठि० सव्व० केव० ? संखेंज्जा भा०।

७६९. अवगदवे० सव्वाणं भुज०-अप्पद०-अवत्त० सव्व० केव० ? संखेंज्ज०। अवट्ठि० सव्व० केव० ? संखेंज्जा भा०। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति सव्वेसिं असंखेंज्जरासीणं ओघं सादभंगो कादव्वो। एसिं संखेंज्जरासिं तेसिं ओघं आहारसरीर-भंगो कादव्वो। एवं भागाभागं समत्तं।

परिमाणाणुगमो

७७०. परिमाणाणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप०-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता। अवत्त० केत्तिया ? संखेंज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०-ओरालि० तिण्णिपदा केत्तिया ? अणंता। अवत्त० केत्तिया ? असंखेंज्जा। तिण्णि आयु० दो पदा केत्तिया ? असंखेंज्जा। तिरिक्खायु० दो पदा केत्तिया ? अणंता। वेउव्वियछ० चत्तारि पदा केत्ति० ? असंखेंज्जा। आहारदुगं चत्तारि पदा केत्तिया ? संखेंज्जा। तित्थय० तिण्णिपदा केत्तिया ? असंखेंज्जा। अवत्त० केत्ति० ? संखेंज्जा। सेसाणं सव्व-पगदीणं चत्तारि पदा केत्तिया ? अणंता। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-ओरालि-

और अल्पतर पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अव-स्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं।

७६९. अपगत वेदवाले जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थित पदवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। शेष नरक गतिसे लेकर संज्ञी मार्गणा तक सब असंख्यात राशिवाली मार्गणाओं में ओघसे सातावेदनीयके समान भङ्ग जानना चाहिये। तथा जिन मार्गणाओंकी संख्यात राशि है, उन मार्गणाओंमें ओघसे आहारक शरीरके समान भङ्ग जानना चाहिये। इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

परिमाणानुगम

७७०. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय और औदारिक शरीरके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवक्तव्य पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तीन आयुओं के दो पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। तिर्यञ्चायुके दो पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। वैक्रियिक छहके चार पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। आहारकद्विकके चार पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अवक्तव्यपद वाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष सब प्रकृतियोंके चार पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। इस प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यका०-णवुंस० कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०- भवसि०- अब्भवसि०-मिच्छादि० सण्णि-आहारग त्ति एदे सव्वे असरिसा ओघेण साधेदव्वं। केसिं च धुविगाणं अवत्तव्वं अत्थि केसिं च णत्थि।

७७१. ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिपदा के० ? संखेंज्जा। सेसं ओघं। ओरालियं०-वेउव्वियमि०-इत्थिवेद-संजदासंजद-किण्ण-णीलासु उवसमसम्मादिट्ठीसु तित्थय० चत्तारि पदा के० ? संखेंज्जा। णवरि किण्ण-णीलासु अवत्त० णत्थि। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेंज्ज-असंखेंज्जरासीणं अणंतरासीणं च ओघेण साधेदव्वं। एवं परिमाणं समत्तं।

खेत्ताणुगमो

७७२. खेत्ताणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०—ओरालि०—तेजइगादिणव-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केवडि खेंत्ते ? सव्वलोगे। अवत्त० केवडि खेंत्ते ? लो० असंखें०। वेउव्विय०-आहारदुग-तित्थय० चत्तारि पदा केव० खेंत्ते ? लो० असंखें०। तिण्णिआयुगाणं [दोपदा०]केव० खेंत्ते ? लो० असंखें०। सेसाणं सव्वपग० सव्वपदा केव० खेंत्ते ? सव्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं

काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसक वेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवों तक ये सब असदृश पदवाले जीव ओघके अनुसार साध लेना चाहिये। इनमेंसे किन्हींके ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका अवक्तव्य पद है और किन्हींके नहीं है।

७७१. औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति चतुष्क और तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष भङ्ग ओघके समान है। औदारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिक मिश्रकाययोगी, स्त्रीवेदी, संयतासंयत, कृष्णलेश्यावाले, नील लेश्यावाले और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिके चार पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंमें अवक्तव्य पद नहीं है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी तक संख्यात, असंख्यात और अनन्त राशिवाली मार्गणाओंमें ओघके समान साध लेना चाहिये। इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ

क्षेत्रानुगम

७७२. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर आदि नौ और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है। वैक्रियिकद्विक, आहारकद्विक और तीर्थङ्करके चार पदोंके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। तीन आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि०४ - मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि-आहार-अणाहारग त्ति। णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० देवगदि०४-तित्थय० सव्वपदा लोग० असंखे०।

७७३. एइंदिएसु मणुसायु० ओघं। सेसाणं पगदीणं सव्वपदा सव्वलोगे। एवं सुहुम०। बादरपज्जत्त-अपज्जत्त० धुविगाणं सादादीणं च दसपगदीणं सव्वपदा सव्वलोगे। इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-सुभग-दोसर०-आदे०-जसगि० चत्तारिपदा लोग० संखेज्ज०। एवं तिरिक्खायु० दोपदा०। मणुसायु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० सव्वपदा लो० असंखे०। णवुंस०-एइंदि०-हुंडसं०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम०-पज्जत्तापज्जत्त-पत्ते०-साधार०-दूभग-अणादे०-अजस० तिण्णिप० सव्वलोगे। अवत्त० लो० संखेज्ज०। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिप० सव्वलो०। अवत्त० लोग० असंखे०।

७७४. पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० सव्वसुहुमाणं च एइंदियभंगो। बादरपुढवि-आउ० तेउ०-वाउ०-तेसिं अपज्ज० धुविगाणं तिण्णि प० सव्वलो०। सादादीणं दसण्हं पगदीणं

औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति चार और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७३. एकेन्द्रियोंमें मनुष्यायुका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इसी प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंके जानना चाहिए। बादर एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, आदेय और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तिर्यञ्चायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र जानना चाहिए। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

७७४. पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक तथा इनके सब सूक्ष्म जीवोंमें एकेन्द्रियोंके समान भङ्ग है। बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक और बादर वायुकायिक तथा उनके अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चत्तारि पदा सव्वलो०। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-साधार०-दूभग०-अणादें०-अजस०-णीचा० तिण्णिप०सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखे०। सेसाणं सव्वपदा लोग० असंखेंज्ज०। एवं बादरवण०-णियोद-पज्जत्तापज्ज०। णवरि वाऊणं जम्हि लोगस्स असंखेंज्ज० तम्हि लोगस्स संखेंज्ज० कादव्वो। बादरवणप्फदिपत्तेय० तस्सेव अपज्ज० बादरपुढवि०अपज्जत्तभंगो। सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेंज्ज-असंखेंज्जरासीणं सव्वभंगो लोग० असंखे०। एवं खेत्तं समत्तं।

फोसणाणुगमो

७७५. फोसणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठक०-भय-दु०-तेजइगादिणव-पंचंत० भुज०-अप्प०-अवट्ठि०बंधगेहि केवडियं खेत्तं फोसिदं? सव्वलो०। अवत्त० खेत्तं। थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा णाणावरणभंगो। अवत्त० अट्ठचों०। मिच्छ० तिण्णिपदा णाणा०भंगो। अवत्त० अट्ठ-बारह०। अपच्चक्खाणा०४ तिण्णपदा णाणा०भंगो। अवत्त० छच्चोंद्द०। णिरयु-देवायु०-आहारदुगं सव्व-

जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। सातावेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार बादर वनस्पतिकायिक, बादर निगोद और इनके पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वायुकायिक जीवोंके, जहाँ लोकका असंख्यातवाँ भागप्रमाण क्षेत्र कहा है, वहाँ लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहना चाहिए। बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और उनके अपर्याप्त जीवोंमें बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है। शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात संख्यावाली राशियोंमें सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

स्पर्शनानुगम

७७५. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर आदि नव और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदका भंग क्षेत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और आहारक द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार आहारक मार्गणा तक इन प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदा खेत्तभंगो। एवमेदाणं याव आहारग त्ति। [तिरिक्खायु० दोपदा सव्वलो०।] मणुसायु० दोपदा अट्ठचोद्द० सव्वलोगो०। णिरयगदि-देवगदि-दोआणुपु० तिण्णि प० छचोद्द०। अवत्त० खेत्तभंगो। ओरालिय० तिण्णिपदा सव्वलोगो। अवत्त० बारहचोद्दस०। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० तिण्णिपदा बारहचोद्दस०। अवत्त० खेत्तभंगो। तित्थय० तिण्णिप० अट्ठचो०। अवत्त० खेत्त०। सेसाणं कम्माणं सव्वपदा सव्वलोगो।

७७६. णिरएसु धुविगाणं तिण्णिपदा सादादीणं बारसण्णं चत्तारिपदा० छचोद्दस०। दोआयु०-मणुसग०-मणुसाणु०-तित्थय०-उच्चा० सव्वप० खेत्तभंगो। सेसाणं तिण्णिप० छचोद्द०। अवत्त० खेत्तभंगो। एवं सव्वणिरयाणं अप्पप्पणो फोसणं कादव्वं। णवरि मिच्छ० अवत्त० पंचचोद्द०।

७७७. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० सव्वलोगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०-ओरालि० तिण्णिप० सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखेज्ज०। णवरि मिच्छ० अवत्त० सत्तचो०। सेसाणं ओघं०।

जानना चाहिए। तिर्यञ्च आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्य आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, देवगति और दो आनुपूर्वीके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष कर्मोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७७६. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने और साता आदि बारह प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, तीर्थंकर प्रकृति और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार सब नारकियोंके अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछकम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७७७. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय और औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७८. पंचिंदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं तिण्णिपदा सादादिदसण्णं पगदीणं चत्तारि पदा० लोग० असंखे० सव्वलो०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०-णवुंस०-तिरिक्खग०[दुग-] एइंदि०-ओरालि०-हुंडसं० - पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम०-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादें०-अजस०-णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखे० सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखे०। णवरि मिच्छ०-अजस० अवत्त० सत्तचो०। इत्थिवे० तिण्णिप० दिवड्ढचोॅद्द०। अवत्त० खेत्त०। पुरिस०-णिरयगदि-देवगदि-समचदु० दोआणु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेंज्ज०-उच्चा० तिण्णिप० छच्चो०। अवत्त० खेत्त०। पंचिंदि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-तस० तिण्णिप० बारहचो०। अवत्त० खेत्त०। उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० सत्तचो०। चदुआयु०-मणुसग०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०मणुसाणु०-आदावं खेत्तभंगो। बादर०तिण्णिप० तेरह०। अवत्त० खेत्त०।

७७९. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तेसु धुविगाणं तिण्णिपदा सादादीणं चत्तारिप० लो० असंखे० सव्वलो०। णवुंस०-तिरिक्ख०-हुंडसं०-एइंदि-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सास-थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्ज०-पत्तेय० साधार०-दूभग०-अणादें०-णीचा० तिण्णिपदा लो० असंखे०

७७८. पंचेन्द्रियतिर्यञ्च त्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने तथा साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय, नपुंसक वेद, तिर्यंचगतिद्विक, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, हुंडसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीच गोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पुरुषवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्र संस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और त्रस प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार आयु, मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, औदारिक अंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और आतपके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७७९. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और सातादि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसक वेद, तिर्यंचगति, हुण्ड संस्थान, एकेन्द्रिय जाति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीच-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । अवत्त० खेत्त० । उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० सत्तचोद्द० । बादर० तिण्णिप० सत्तचो० । अवत्त० खेत्त० । अजस० तिण्णिप० सादभंगो । अवत्त० सत्तचो० । सेसाणं इत्थिवेदादीणं चत्तारिप० खेत्तभंगो । एस भंगो सव्वअपज्जत्तगाणं विगलिंदियाणं बादर-पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्जत्ताणं च ।

७८०. मणुस०३ पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि विसेसो णादव्वो । मिच्छ०-अवत्त० सत्तचोद्द० । दोआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा खेत्त० ।

७८१. देवेसु धुविगाणं तिण्णिपदा० अट्ठ-णवचोद्द० । सादादीणं बारसण्णं मिच्छ०-उज्जो० चत्तारिपदा० अट्ठ-णवचो० । एइंदिय-थावरसंजुत्त० [तिण्णिपदा] अट्ठ-णव-चोद्द० । [अवत्त०] सेसाणं [सव्वपदा] अट्ठचो० । एदेण बीजेण णेदव्वं । सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णेदव्वं ।

७८२. एइंदि०-सव्वसुहुम०—पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०—वणप्फदि-णियोद० मणुसायुगं मोत्तूण धुविगाणं तिण्णिप० सेसाणं चत्तारिप० सव्वलो० । मणुसायु० दोपदा०

गोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सवलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजु क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष स्त्रीवेद आदि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। यही भंग सब अपर्याप्तक, विकलेन्द्रिय, बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्नि-कायिक, बादर वायुकायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर और इनके पर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए।

७८०, मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु यहाँ जो विशेष हो, वह जान लेना चाहिए। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक द्विक और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७८१. देवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदिक बारह प्रकृतियाँ, मिथ्यात्व और उद्योतके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछकम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्थावर सहित एकेन्द्रिय जातिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनके अवक्तव्य पदके तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी बीजपदके अनुसार शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन भी जानना चाहिए। तथा सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन जानना चाहिए।

७८२. एकेन्द्रिय, सब सूक्ष्म, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुको छोड़कर ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लो० असं०सव्वलो० । बादरएइंदिय-पज्जत्तापज्जत्त० धुविगाणं तिण्णिप० सादादीणं दसण्णं चत्तारिप० सव्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदा०-दोविहा०-तस सुभग-दोसर-आदे० चत्तारिपदा०लो० संखेज्ज० । णवुंस०-एइंदि०-हुंडसं० पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय० साधार०-दूभग०-अणादे० तिण्णिप० सव्वलो० । अवत्त० लोग० संखेज्ज० । मणुसाउ० दोपदा० लोग० असंखेज्ज० । तिरिक्खायु० दोप० लो० संखेज्ज० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० तिण्णिप० सव्वलो० । अवत्त० लोग० असंखे० । मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० चत्तारिप० लोग० असंखे० । उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० सत्तचो० । बादर० तिण्णिप० सत्तचो० । अवत्त० खेत्त० । अजस० तिण्णिप० सव्वलो० । अवत्त० सत्तचोद्द० । एस भंगो बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं च अपज्ज० । बादरवणप्फदि-णियोदाणं च पज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदि-पत्तेय० तस्सेव अपज्ज० । णवरि विसेसो णादव्वो । जम्हि बादरएइंदि० लोग० संखेज्ज० तम्हि वाउ०वज्जाणं लोग० असंखे० कादव्वं ।

बन्धक जीवोंने तथा शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । बादर एकेन्द्रिय और इनके पर्याप्त अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और सातादि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड संस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और अनादेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तिर्यंच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तिर्यंचगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब-लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत और यशः कीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम सातबटे चौदह राजू क्षेत्र का स्पर्शन किया है । बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सात बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । यही भंग बादर पृथिवीकायिक, बादरजलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक और उनके अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए । बादरवनस्पतिकायिक और निगोदजीव तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर तथा उनके अपर्याप्त जीवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इनमें जो विशेष हो, वह जानना चाहिए । जिन बादर एकेन्द्रियोंमें लोकके संख्यातवें भाग स्पर्शन कहा है, उनमें वायुकायिक जीवोंको छोड़कर लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७८३. पंचिंदिय तस०२ पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क० वण्ण०-४-अगु०४-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिप० लो० असंखे० अट्ठचोद्द० सव्व लो०। अवत्त० खेत्त०। थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-एइंदि०-तिरिक्ख०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादेंज्ज०-णीचा० तिण्णिप० लोग० असंखेंज्ज० अट्ठचोद्दस० सव्वलो०। अवत्त० अट्ठचोद्द०। सादादीणं दसण्णं चत्तारिप० लोग० असंखे० अट्ठचो० सव्वलो०। मिच्छ० तिण्णिप० सादभंगो। अवत्त० अट्ठ-बारह०। अपच्चक्खाणा०४ तिण्णिप० अट्ठचो० सव्वलो०। अवत्त० छच्चोद्द०। इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर० आदें० तिण्णिप० अट्ठ बारह०। अवत्त० अट्ठचो०। णिरय-देवायु-तिण्णिजा०-आहारदुगं खेत्तभंगो। दोआयु-मणुसग०-मणुसाणु०-[1]आदाउच्चा० चत्तारिप० अट्ठचो०। उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अट्ठ-तेरह०। बादर० तिण्णिप० अट्ठ-तेरह०। अवत्त० खेत्त०। ओरालि० तिण्णिप० अट्ठचो०

७८३. पंचेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय, और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, तीन जाति और आहारक द्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका

१ मूलप्रतौ आदाउज्जो० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । अवत्त० बारह० । सुहुम-अपज्ज०-साधार० तिण्णिप० लोग० असंखे० सव्वलो० । अवत्त० खेत्त० । अजस० तिण्णिप० सादभंगो । अवत्त० अट्ठ-तेरह० । वेउव्वियछक्क-तित्थय० ओघं । एस भंगो पंचमण०-पंचवचि०-विभंग०-चक्खुदं०-सण्णि त्ति । णवरि जोगेसु ओरालि० अवत्त० खेत्त० । विभंग० देवगदि-देवाणुपु० तिण्णिप० पंचचो० । अवत्त० खेत्त० । ओरालि०-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०तिण्णिप० एक्कारह० । अवत्त० खेत्त० ।

७८४. कायजोगि०-ओरालि०-अचक्खु०-भवसि०-आहारग त्ति मूलोघं । णवरि किंचि विसेसो । ओरालिय० तिरिक्खोघं । वेउव्विय० धुविगाणं साददीणं बारसण्णं उज्जो० सव्वप० अट्ठ-तेरह० । थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४-णवुंस-तिरिक्खग० हुंड०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादे०-णीचा० तिण्णिप० अट्ठ-तेरह० । अवत्त० अट्ठचो० । एवं मिच्छ० । णवरि अवत्त० अट्ठ-बारह० । इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०

स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सूक्ष्म अपर्याप्त और साधारण प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । वैक्रियक छह और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है । यही भंग पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, विभंगज्ञानी, चक्षुदर्शनी, और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि योगोंमें औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । विभंगज्ञानी जीवोंमें देवगति और देवगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आंगोपांगके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

७८४. काययोगी, औदारिककाययोगी, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंमें मूल ओघके समान भङ्ग है । किन्तु यहाँ पर कुछ विशेषता है । औदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियाँ, साता आदि बारह प्रकृतियाँ और उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार मिथ्यात्वका स्पर्शन जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इसके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगो०-छस्संघ०-दोविहा० तस-सुभग-दोसर०-आदें० तिण्णिप० अट्ठ-बारह०। अवत्त० अट्ठचोंद्द०। दो आयु दोपदा मणुसग०-मणुसाणु०-आदा०-उच्चा० सव्वप० अट्ठचोंद्द०। एइंदि०-थावर० तिण्णिप० अट्ठ-णव०। अवत्त० अट्ठचों०। तित्थय० ओघं।

७८५. ओरालियमि०-वेउव्वियमि० आहार०-आहारमि०-कम्मइ०-अणाहार० खेत्त-भंगो। णवरि ओरालियमि० मणुसायु० दोप० लोग० असंखें० सव्वलो०। कम्मइ०-अणाहार० मिच्छत्तं अवत्त० ऍक्कारह०।

७८६. इत्थिवेदे धुविगाणं तिण्णिप० सादादीणं दसण्णं चत्तारिपदा अट्ठचों० सव्वलो०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस-तिरिक्ख०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादें०-णीचा० तिण्णिप० अट्ठचों० सव्वलो०। अवत्त० अट्ठचों०। णवरि-मिच्छ० अव० अट्ठ-णवचों०। णिद्दा-पचला-अट्ठक०-भय-दुगुं-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-पत्ते०-णिमि० तिण्णिप० अट्ठचों० सव्वलो०। अवत्त० खेत्त०।

है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछकम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने तथा मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रियजाति और स्थावर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है।

७८५. औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, और अनाहारक जीवोंमें अपनी-अपनी सब प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक है। कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७८६. स्त्रीवेदी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके और साता आदि दस प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसक वेद, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछकम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[णवरि ओरालि० अवत्त० दिवड्ढचों० । इत्थि०-पुरिसवे०-पंचसंठा-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० चत्तारिपदा अट्ठचों० । दो आयु०-तिण्णिजादि-आहारदुग-तित्थय खेंत्त० । दोआयुगस्स दोपदा मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव-उच्चा० चत्तारिप० अट्ठचों० । एइंदि०-थावर० तिण्णिप० अट्ठचों० सव्वलो० । अवत्त० अट्ठचों० । उज्जो०-जसगि० चत्तारिप० अट्ठ-णवचों० । बादर तिण्णिप० अट्ठ-तेरहचोंद्द० । अवत्त० खेत्त० । सुहुम-अपज्ज०-साधार० तिण्णिप० लो० असंखें० सव्वलो० । अवत्त० खेंत्तभंगो । वेउव्विय० ओघं । अजस० तिण्णिप० अट्ठचोंद्द० सव्वलो० । अवत्त० अट्ठ-णव-चोंद्द० । एवं पुरिस० वि । [णवरि] अपच्चक्खाणा०४-ओरालि० अवत्त० छच्चोंद्द० । तित्थय० ओघं ।

७८७. णवुंसगे अट्ठारसण्णं तिण्णि पदा सव्वलोगो । पंचदंस०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-[णिमि०] तिण्णिप० सव्वलो० ।

स्पर्शन क्षेत्रके समान है । इतनी विशेषता है कि औदारिकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेयके चारपदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो आयु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । दो आयुओंके दो पदोंके और मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । एकेन्द्रिय जाति और स्थावरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । उद्योत और यशः-कीर्तिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । बादर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असं-ख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । वैक्रियिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ओघके समान है । अयशःकीर्तिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके भी जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

७८७. नपुंसकवेदी जीवोंमें अठारह प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके तीन पदोंके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्त० खेँत्त० । णवरि मिच्छत्त० अवत्त० बारहचो० । ओरालिय० अवत्तव्वं छचोॅद्द० । दोआयु०-वेउव्वियछक्कं-[आहारदुग-] तित्थय० ओरालियकायजोगिभंगो । सेसाणं चत्तारि पदा सव्वलो० ।

७८८. कोधादि०४-मदि०-सुद० ओघं । णवरि मदि०-सुद० देवगदि-देवाणुपु० तिण्णिप० पंचचो० । अवत्त० खेँत्तभंगो । वेउव्वि०-वेउवि०अंगो० तिण्णि पदा ओरालि० [अवत्त०] एँक्कारह० । [वेउवि०दुग०] अवत्त० खेँत्तभंगो ।

७८९. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-अट्ठक०-पुरिस०-भय-दुगुं०-मणुसगदिपंचग०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेँ०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णि पदा अट्ठचोॅद्द० । अवत्त० खेँत्तभंगो । णवरि मणुसगदिपंचग० अवत्त० छचोॅद्द० । सादादीणं बारस० चत्तारि पदा अट्ठ० । मणुसायु० दो पदा अट्ठचोॅद्द० । देवायु-आहारदुगं खेँत्तभंगो । अपच्च-क्खाणा०४ तिण्णि पदा अट्ठचो० । अवत्त० छचोॅद्द० । देवगदि०४ तिण्णि पदा छचो० ।

जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। औदारिक शरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारक दो और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंका भंग औदारिककाययोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

७८८. क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, और श्रुताज्ञानी जीवोंका भंग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें देवगति और देवगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकआंगोपांगके तीन पदोंके तथा औदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिकद्विकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७८९. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, आठ कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, मनुष्यगति पंचक, पंचेन्द्रियजाति, तैजसशरीर कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थङ्कर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगति पंचकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकद्विकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवगति चारके तीन पदोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्त० खेत्त० । मणपज्जवादि याव सुहुमसंपराइगा त्ति खेत्तभंगो ।

७९०. संजदासंजदा० देवायु-तित्थय० खेत्त० । धुविगाणं तिण्णि पदा वि सेसाणं चत्तारि पदा छच्चों० । असंजदे ओघं । ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम० आभिणि०भंगो । णवरि खइगे उवसम० देवगदि०४ चत्तारिपदा मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेत्त० ।

७९१. किण्ण०-णील०-काउसु धुविगाणं तिण्णि पदा सव्वलो० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णि पदा सव्वलो० । अवत्त० खेत्त० । णवरि मिच्छ० अवत्त० पंच-चत्तारि-बेचोद्द० । णिरय-देवायु-देवगदिदुगं खेत्त० । णिरयगदि-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-णिरयाणु० तिण्णिपदा छ-चत्तारि-बेचोद्द० । अवत्त० खेत्त० । सेसाणं चत्तारि पदा सव्वलो० । तित्थय० चत्तारिपदा खेत्त० ।

७९२. तेऊए धुविगाणं तिण्णि पदा अट्ठ-णवचोद्द० । थीणगिद्धि०३-अणंताणु-बंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादें०-

बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायिकसंयत जीवों तक स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७९०. संयतासंयत जीवोंमें देवायु और तीर्थंकर प्रकृतिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने और शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंयत जीवोंमें स्पर्शन ओघके समान है। अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें आभिनिबोधिकज्ञानी जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवगति चतुष्कके चार पदोंके और मनुष्यगति पंचकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७९१. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु और देवगतिद्विकके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। नरकगति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आंगोपांग और नरकगत्यानुपूर्वीके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम छहबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

७९२. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानु-पूर्वी, स्थावर, दुर्भग अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णीचा० तिण्णिप० अट्ठ-णवचो० । अवत्त० अट्ठचो० । सादादिबारह-मिच्छत्त-उज्जो० चत्तारि पदा अट्ठ-णवचो० । अपच्चक्खाण०४-ओरालि० तिण्णि प० अट्ठ-णवचोद्द० । अवत्त० दिवड्ढचोद्द० । इत्थिवे० चत्तारि पदा अट्ठचोद्द० । एवं पुरिस० । मणुसगदि-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-दोविहा०-[तस०] सुभग-दोसर-आदें०-उच्चा०-देवगदि०४ तिण्णि पदा दिवड्ढचोद्द० । अवत्त० खेत्त० । णवरि मणुसदुग०-वज्जरिस०-ओरालि०अंगो० दिवड्ढचो० । पच्चक्खाण०४-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पम्माए तेउभंगो । णवरि याणि पदाणि दिवड्ढं तेसिं पंचचो० । सेसाणं अट्ठचो० । एवं सुक्काए वि । णवरि छचोद्द० ।

७६३. सासणे धुविगाणं तिण्णि पदा अट्ठ-बारह० । इत्थि०-पुरिस०-पंचसंठा-पंचसंघ०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदें० तिण्णि पदा अट्ठ-ऍक्कारह० । अवत्त० अट्ठचो० । तिरिक्खगदिदुग दूभग अणादें० णीचागो० तिण्णिपदा अट्ठ-बारह० । अवत्त० अट्ठचो० ।

चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह प्रकृतियाँ, मिथ्यात्व और उद्योतके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिक शरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछकम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पुरुषवेदके चार पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन जानना चाहिए। मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपांग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय, उच्चगोत्र और देवगतिचतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिद्विक, वज्रर्षभनाराचसंहनन और औदारिक आंगोपांगके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछकम डेढ़बटे चौदहराजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। प्रत्याख्यानावरण चार, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें पीतलेश्यावाले जीवोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि जिन पदोंका कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू स्पर्शन कहा है,उनका कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। शेष पदोंका कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँपर कुछकम छहबटे चौदहराजू क्षेत्र प्रमाण स्पर्शन कहना चाहिए।

७६३. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदहराजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर और आदेयके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तिर्यञ्चगतिद्विक, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सादादीणं परियत्तमाणियाणं उज्जो० चत्तारिप० अट्ठ-बारह० । दोआयु०-मणुसग०-मणुसाणु०-उच्चा० चत्तारिपदा अट्ठचोद्दस० । [देवायु० खेत्तभंगो] देवगदि०४ तिण्णि-पदा पंचचोद्दस० । अवत्त० खेत्त० । ओरालि० तिण्णिपदा अट्ठ-बारह० । अवत्त० पंचचोद्द० ।

७६४. सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिपदा अट्ठचो० । सादादीणं चत्तारिपदा अट्ठचो० । [णवरि देवगदि४ लोग० असंखे० ।] असण्णीसु णिरय-देवायु०-वेउव्विय०- [छ] ओरालि० खेत्तभंगो । सेसाणं एइंदियभंगो । एवं फोसणं समत्तं।

कालाणुगमो

७६५. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० भुज०-अप्पद०-अवत्त० एसिं परिमाणे अणंता असंखेज्जा लोगरासीणं तेसिं सव्वद्धा । असंखेज्जरासिं जहण्णेण एयस०, उक्क० आवलियाए असंखेज्ज० । जेसिं संखेज्जजीवा तेसिं जह० एग०, उक्क० संखेज्ज समय० । अवट्ठि० सव्वेसिं सव्वद्धा० । णवरि जेसिं भयणिज्जरासिं तेसिं अवट्ठिद-

---

चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । साता आदि परिवर्तमान प्रकृतियाँ और उद्योत प्रकृतिके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो आयु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्च-गोत्रके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । देवायु-के बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । देवगति चतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । औदारिकशरीरके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँच-बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

७६४. सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । साता आदि प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्कके चार पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । असंज्ञी जीवोंमें नरकायु, देवायु, वैक्रियिक छह और औदारिक शरीरके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन एकेन्द्रिय जीवोंके समान है । इस प्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ ।

कालानुगम

७६५. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है-ओघ और आदेश । ओघसे जिन मार्ग-णाओंमें भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका परिमाण अनन्त और असंख्यात लोक प्रमाण है, उनका काल सर्वदा है । जिनका परिमाण असंख्यात है, उनका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । जिनका परिमाण संख्यात है, उनका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है । अवस्थितपदवाले सब जीवोंका काल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालो अप्पप्पणो पगदिकालो कादव्वो । णवरि जह० एग० । तिण्णिआयुगाणं अवत्त-व्वगा जह० एग०, उक्क० आवलि० असंखे० । अप्पद० ज० अंतो०, उक्क० पलिदो० असंखे० । तिरिक्खायु० दोपदा सव्वद्धा । एवं याव अणाहारग त्ति णेदव्वं ।

एवं कालं समत्तं ।

अंतराणुगमो

७९६. अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंस०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । अवत्त० ज० एग०, उक्कस्सेण थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ सत्त रादिंदियाणि । अपच्चक्खाणा०४ चोद्दस रादिंदियाणि । पच्चक्खाणा०४ पण्णारस रादिंदियाणि । ओरालि० अंतो० । सेसाणं वासपुधत्तं० । वेउव्वियछ०-आहारदुगं भुज०-अप्पद०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० णत्थि अंतरं । तिण्णि आयुगाणं अवत्त०-अप्पद० जह० एग०, उक्क० चदुवीस मुहु० । तिरिक्खायुगस्स दोपदा० णत्थि अंतरं । तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो० ।

सर्वदा है । इतनी विशेषता है कि जिन मार्गणाओंकी राशि भजनीय है, उनके अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका काल अपने-अपने प्रकृतिबन्धके कालके समान कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि जघन्यकाल एक समय है । तीन आयुओंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्टकाल आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अल्पतर पदके बन्धक जीवोंका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । तिर्यंच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ ।

अन्तरानुगम

७९६. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारका सात दिनरात है । अप्रत्याख्यानवरण चारका चौदह दिनरात है । प्रत्याख्यानावरण चारका पन्द्रह दिन-रात है, औदारिकशरीरका अन्तर्मुहूर्त है और शेष प्रकृतियोंका वर्षपृथक्त्व है । वैक्रियिकछह, आहारकद्विकके भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है । अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । तीन आयुओंके अवक्तव्य और अल्पतरपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चौबीस मुहूर्त है । तिर्यंच आयुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवट्टि० णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं०। सेसाणं चत्तारि पदा णत्थि अंतरं।

७६७. णिरएसु धुविगाणं दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्टि० णत्थि अंतरं। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिपदा णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। तित्थय० दो पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्टि० णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असं०भागो। अथवा जह० एग०, उक्क० वासपुधत्तं०। दो आयु० पगदिअंतरं। सेसाणं तिण्णिपदा जह० एग० उक्क० अंतो। अवट्टि० णत्थि अंतरं। एवं सव्वणिरयाणं। णवरि सत्तमाए दोगदि-दोआणु०-दोगोदं थीणगिद्धिभंगो।

७६८. तिरिक्खेसु ओघं। पंचिंदिय तिरिक्ख०३ धुविगाणं तिण्णिपदा णिरयगदिभंगो। थीणगि०३-मिच्छ०-अट्ठक० ओघं। सेसाणं णिरयगदिभंगो। आयुगाणं पगदिअंतरं। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० णिरयोघं। एवं सव्वअपज्ज०-विगलिंदि०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वणप्फदिपत्तेय०पज्जत्ता। णवरि मणुसअपज्ज० धुविगाणं

समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तर-काल नहीं है।

७६७. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अथवा जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। दो आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवों का अन्तरकाल प्रकृतिबन्धके अन्तरकालके समान है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें दो गति, दो आनुपूर्वी और दो गोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धि प्रकृतिके समान है।

७६८. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग नरकगतिके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और आठ कषायका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नरकगतिके समान है। आयुओंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तक, विकलेन्द्रिय, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण्णि पदा ज० ए०, उ० पलिदो० असंखे० । सेसाणं चत्तारि प० ज० ए०, उ० पलिदो० असंखे० ।

७९९. मणुस०३ धुविगाणं दो पदा ज० ए०, उ० अंतो० । अवट्ठि० णत्थि अंतरं । अवत्त० ओघं । सेसाणं तिण्णि प० ज० ए०, उ० अंतो० । अवट्ठि० णत्थि अंतरं । [आउगाणं पगदिअंतरं ।] एवं पंचिंदिय–तस०२-पंचमण०–पंचवचि०–इत्थि०–पुरिस०–चक्खुदं० । देवेसु विभंगे णिरयभंगो । कायजोगि–ओरालिय०–णवुंस०–कोधादि०४—मदि०—सुद०–असंज०–अचक्खु०— तिण्णिले०–भवसि०–अब्भवसि०–मिच्छादि०–आहार० ओघं । णवरि धुविगाणं विसेसो णादव्वो ।

८००. ओरालियमिस्से देवगदि०४ तिण्णि प० ज० ए०, उ० मासपुध० । तित्थय० तिण्णिप० ज० ए०, उ० वासपुध० । मिच्छ० अवत्त० ज० ए०, उ० पलिदो० असंखे० । सेसाणं सव्वपदा णत्थि अंतरं । एवं कम्मइ० । वेउव्वियका० णिरयभंगो । वेउव्वियमि० तित्थय० तिण्णिपदा जह० एग०, उक्क० वासपुध० । सेसाणं सव्वपदा जह० एग०, उक्क० बारस मुहु० । एइंदियतिगस्स चदुवीस मुहु० । मिच्छ० अवत्त० जह० एग०,

शेष प्रकृतियोंके चार पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

७९९. मनुष्यत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । आयुओंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय-द्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और चक्षुःदर्शनी जीवोंके जानना चाहिये । देवोंमें और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । काययोगी, औदारिक काययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारकोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका विशेष जानना चाहिये ।

८००. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगति चतुष्कके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्त्व है । तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । इसीप्रकार कार्मणकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये । वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर बारह मुहूर्त है । एकेन्द्रियत्रिकका चौबीस मुहूर्त है । मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० पलिदो० असंखे०। आहार०-आहारमि० सव्वाणं सव्वे भंगा जह० एग०, उक्क० वासपुध०।

८०१. अवगदे० सव्वकम्मा० भुज०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुध०। अप्पद०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० छम्मासं०। एवं सुहुमसंप०। णवरि अवत्तव्वं णत्थि अंतरं।

८०२. आभि०-सुद०-ओधिणाणी० धुविगाणं तित्थय० मणुसभंगो। दोगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०-[दो आणु०] दोण्णि पदा जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उक्क० मासपुध०। सेसाणं तिण्णि प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। सव्वाणं अवट्ठि० णत्थि अंतरं। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-वेदगसम्मा०। मणपज्ज० धुविगाणं मणुसि०भंगो। सेसाणं ओधिभंगो। एवं संजदा संजदासंजदा।

८०३. सामाइ०-छेदो० धुविगाणं विसेसो णादव्वो। परिहारे धुविगाणं भुज०-अप्प० ज० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० णत्थि अंतरं। सेसाणं पि एस भंगो०। णवरि अवत्त० विसेसो।

८०४. तेउए देवगदि०४ भुज०-अप्प० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि०

भाग प्रमाण है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है।

८०१. अपगतवेदी जीवोंमें सब कर्मोंके भुजगार और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्व है। अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसीप्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदका अन्तरकाल नहीं है।

८०२. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और तीर्थंकर प्रकृतिके बन्धक जीवोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। दो गति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रऋषभनाराचसंहनन और दो आनुपूर्वीके दो पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मास पृथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सब प्रकृतियोंके अवस्थित पदका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इसी प्रकार संयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

८०३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका विशेष जानना चाहिये। परिहारविशुद्धि संयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। शेष प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका भी यही भङ्ग है। किन्तु अवक्तव्य पदमें कुछ विशेषता है।

८०४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें देवगति चतुष्क के भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि अंतरं। अवत्त० जह० एग०, उक्क० मासपुध०। ओरालिय० अवत्त० जह० एग०, उक्क० अडदालीसं मुहु०। मिच्छ० अवत्त० जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। सेसाणं मणुसोघो। विसेसो णादव्वो। पम्माए देवगदि०४ तेउभंगो। ओरालि०-ओरालि०अंगो० अवत्त० जह० एग०, उक्क० दिवसपुध०। सेसाणं च तेउभंगो। सुक्काए मणुसगदि-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०-दोआणु० ओधिभंगो। सेसाणं मणुसि०भंगो।

८०५. खइगे धुविगाणं मणुसगदि-देवगदि-दोसरीर-दोअंगो०-वज्जरिस०-दोआणु० अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुध०। सेसाणं ओधिभंगो। उवसम० पंचणाणावरणा० तिण्णि पदा जह० एग०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि। एवं सव्वाणं। णवरि आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० एग०, उक्क० वासपुध०। सेसाणं अवत्त० ओघं।

८०६. सासणे धुविगाणं तिण्णिप० जह० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। सेसाणं चत्तारि प० ज० एग०, उक्क० पलिदो० असंखे०। एवं सम्मामि०। सण्णि०

जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर मासप्रथक्त्व है। औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अड़तालीस मुहूर्त है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है। यहाँ पर जो विशेष हो वह जानना चाहिये। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें देवगति चतुष्कका भङ्ग पीत लेश्याके समान है। औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दिवस प्रथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पीतलेश्याके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मनुष्यगति, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग और दो आनुपूर्वीका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है।

८०५. क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों, मनुष्यगति, देवगति, दो शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रऋषभनाराचसंहनन और दो आनुपूर्वीके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थङ्कर प्रकृतिके भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षप्रथक्त्व है। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका अन्तरकाल ओघके समान है।

८०६. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके तीन पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचिंदियभंगो। असण्णीसु वेउव्वियछ०–ओरालि० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं अंतरं समत्तं।

भावाणुगमो

८०७. भावाणुगमेण दुवि०–ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा० चत्तारिपदा बंधगा ति को भावो? ओदइगो भावो। एवं सव्वपगदीणं सव्वत्थ णेदव्वं याव अणाहारग त्ति।

एवं भावं समत्तं

अप्पाबहुआणुगमो

८०८. अप्पाबहुगं दुवि०–ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०–णवदंसणा–मिच्छ०–सोलसक०–भय–दु०–ओरालि०–तेजा०–क०–वण्ण०४–अगु०–उप०–णिमि०–पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्तव्वबंधगा। अप्पद० अणंतगु०। भुजागारबंध० विसे०। अवट्ठि० असंखे०। दोवेदणी०-सत्तणोक०–दोगदि-पंचिंदि०–छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोआणु०–पर०–उस्सा०–उज्जो०–दोविहा०–तस–बादर–पज्जत्तापज्जत्त–पत्ते०–थिरादिछयुग०–दोगोद० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० संखेज्ज०। भुज० विसे०। अवट्ठि० असंखेज्ज०। चदुआयु० सव्वत्थोवा अवत्त०। अप्पद० असंखे०। वेउव्वियछ० सव्व-

---

चार पदोंके बन्धक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। संज्ञियोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भङ्ग है। असंज्ञियोंमें वैक्रियिक छह और औदारिक शरीरका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। अनाहारकोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

भावानुगम

८०७. भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरणके चार पदोंके बन्धक जीवोंका कौनसा भाव है? औदयिक भाव है। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंका सर्वत्र अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये। इसप्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्वानुगम

८०८. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतरपदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। दो वेदनीय, सात नोकषाय, दो गति, पञ्चेन्द्रियजाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यात गुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चार आयुओंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्थोवा अवत्त० । भुज०-अप्पद० दो वि सरिसा संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखे० । तिण्णि-जादी देवगदिभंगो । एइंदि०-आदाव-थावर-सुहुम-साधार० सव्वत्थो० अवत्त० । भुज० संखेंज्ज० । अप्पद० विसे० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । [आहार०-] आहार०अंगो० सव्वत्थो० अवत्त० । दोपदा० संखेंज्ज० । अवट्ठि० संखेंज्ज० । तित्थय० सव्वत्थो० अवत्त० । दोपदा असंखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० ।

८०९. णिरए धुविगाणं सव्वत्थोवा भुज०-अप्पद० । अवट्ठि० असंखे० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-तित्थय० सव्वत्थोवा अवत्त० । भुज०-अप्पद० असंखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखे० । सेसाणं सव्वत्थोवा अवत्त० । भुज०-अप्पद० संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । तिरिक्खायु० ओघं । मणुसायु० सव्वत्थो० अवत्त० । अप्पद० संखेंज्ज० । एवं सत्तसु पुढवीसु । णवरि सत्तमाए दोगदी-दोआणु०-दोगोद० थीणगिद्धिभंगो ।

८१०. तिरिक्खेसु धुविगाणं सव्वत्थो० अप्पद० । भुज० विसे० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । सेसाणं ओघं । पंचिंदियतिरिक्खेसु धुविगाणं णिरयभंगो । थीणगिद्धि०३-

पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । वैक्रियिक छहके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव दोनों ही समान होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । तीन जातियोंका भङ्ग देवगतिके समान है । एकेन्द्रिय जाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । आहारकशरीर और आहारक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

८०९. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार और तीर्थंकर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं । शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । तिर्यञ्चायुका भङ्ग ओघके समान है । मनुष्यायुके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें दो गति, दो आनुपूर्वी और दो गोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है ।

८१०. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिच्छ०–अट्ठक०–ओरालि० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०–अप्पद० असंखेंज्ज०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। सेसाणं सव्वत्थो० अवत्त०। दोपदा संखेंज्जगु०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। पंचिंदियतिरिक्खपज्ज०–पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीसु धुविगाणं पंचिंदियतिरिक्खोघं। णवरि ओरालि० सादभंगो। सेसाणं पि सादभंगो। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सेसाणं च णिरयोघं।

८११. मणुसेसु धुविगाणं ओरालि० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०–अप्पद० असंखेंज्ज०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। वेउव्वियछ०–आहारदुग-तित्थय० संखेंज्जगुणं कादव्वं। मणुसपज्जत्त–मणुसिणीसु तं चेव। णवरि संखेंज्ज०। मणुसअपज्ज०–सव्वएइंदि०–सव्वविगलिंदि०–पंचकायाणं पंचिंदि०अपज्ज० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। देवाणं णिरयभंगो।

८१२. पंचिंदिएसु धुविगाणं ओरालि० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०–अप्प० दोपदा असंखें०। अवट्ठि० असंखें०। मणुसग०–मणुसाणु०–उच्चा० ओघं। सेसं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। पंचिंदियपज्जत्तगेसु ओरालि० सादभंगो। सेसं तं चेव।

भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चपर्याप्तक और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिनी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामन्य पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरका भङ्ग साता वेदनीयके समान है। शेष प्रकृतियोंका भी भङ्ग साता वेदनीयके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली और शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

८११. मनुष्योंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। किन्तु वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्करके पदोंको संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें इसी प्रकारसे ही जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यात गुणा कहना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तक, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पाँच स्थावरकाय और पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तकोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है। देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है।

८१२. पञ्चेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर इन दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्र का भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें औदारिक शरीरका भङ्ग साता वेदनीयके समान है। शेष भंग उसी प्रकार हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८१३. तसेसु वेउव्वियछ०-आहारदुगं [मणुसभंगो ।] आदाव-थावर-सुहुम-साधार० देवगदिभंगो। सेसाणं ओघं। णवरि यम्हि अणंतगुणं तम्हि असंखेंज्ज०। एवं पज्जत्त०। णवरि ओरालि० सादभंगो।

८१४. तसअपज्जत्त० धुविगाणं सव्वत्थो० भुज०। अप्प० विसे०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। सादासादा०-पंचणोक०-तिरिक्खग०-पंचिंदि०-हुंडसं०-ओरालि०अंगो०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-तस०-बादर-पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच-णीचा० सव्वत्थो० अवत्त०। अप्पद० संखेंज्ज०। भुज० विसे०। अवट्ठि० असंखें०। मणुसगदि-मणुसाणु० ओघं। बीइंदि० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज० संखेंज्ज०। अप्पद० विसे०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। सेसं तिरिक्खभंगो।

८१५. पंचमण०-तिण्णिवचि० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-[उप०-] बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेंज्ज०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। चदुआयु०-आहारदुगं ओघं। सेसाणं सव्वत्थो०

---

८१३. त्रसोंमें वैक्रियिक छह और आहारक द्विकका भङ्ग मनुष्योंके समान है। आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण प्रकृतिका भङ्ग देवगतिके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्तगुणा कहा है, वहाँ पर असंख्यातगुणा कहना चाहिये। इसी प्रकार पर्याप्त त्रसोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीरका भङ्ग साता-वेदनीयके समान है।

८१४. त्रस अपर्याप्तकोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। सातावेदनीय, असातावेदनीय, पाँच नोकषाय, तिर्यञ्चगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। मनुष्य गति और मनुष्य गत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। द्वीन्द्रिय जातिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है।

८१५. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपांग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थंकर और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चार आयु और आहारकद्विकका भंग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवत्त० । भुज०-अप्पद० संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । दोवचि० तसपज्जत्तभंगो । णवरि भुजगार-अप्पदरं समं कादव्वं ।

८१६. कायजोगि० ओघं । ओरालिय० तिरिक्खोघं । णवरि भुज०-अप्पद० सरिसं० । णवरि तित्थय० मणुसिभंगो । ओरालियमि० धुविगाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। एइंदि०-आदाव-थावर-सुहुम-साधार० सव्वत्थो० अवत्त० । भुज० संखेंज्ज० । अप्पद० विसे० । अवट्ठि० असंखें० । मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० ओघं० । सेसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि देवगदि०४ सव्वत्थोवा भुज० । अप्पद०-अवट्ठि० संखेंज्ज० । एवं तित्थय० । अवत्त० णत्थि ।

८१७. वेउव्वि०-वेउव्वियमिस्स० देवोघं । णवरि थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ अवत्त० णत्थि । आहार०-आहारमि० सव्वट्ठभंगो । कम्मइ० ओरालियमिस्सभंगो। णवरि अत्थदो विसेसो० ।

८१८. इत्थिवे० धुवि० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० सव्वत्थोवा अवत्त०-भुज० । अप्पद०

पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । दो वचनयोगी जीवोंका भंग त्रस पर्याप्तकोंके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगार और अल्पतरपदकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व एक समान कहना चाहिए ।

८१६. काययोगी जीवोंमें अल्पबहुत्व ओघके समान है। औदारिक काययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगार और अल्पतर पदकी मुख्यतासे अल्पबहुत्व एक समान कहना चाहिए । उसमें भी इतनी विशेषता और है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भंग मनुष्यिनियोंके समान है । औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । एकेन्द्रिय जाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण प्रकृतिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भंग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगतिचतुष्कके भुजगार पदके बन्धक जीव सबके स्तोक हैं । इनसे अल्पतर और अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार तीर्थंकर प्रकृतिकी अपेक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसका अवक्तव्य पद नहीं है ।

८१७. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अल्पबहुत्व सामान्य देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारका अवक्तव्य पद नहीं है । आहारक काययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सर्वार्थसिद्धिके देवोंके समान अल्पबहुत्व है । कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान अल्पबहुत्व है । इतनी विशेषता है कि इस विषयमें वस्तुतः जो विशेषता हो वह जान लेनी चाहिये ।

८१८. स्त्रीवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्य और भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखे० । अवट्ठि० असंखेज्ज० । आहारदुग-तित्थय० मणुसभंगो । सेसाणं पंचिंदियभंगो । एवं पुरिसवेदे वि । णवरि तित्थयरस्स ओघं ।

८१९. णवुंसगे धुविगाणं सव्वत्थो० अप्प० । भुज० विसे० । अवट्ठि० असंखे० । पंचदंस०-मिच्छ० बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४ अगु०-उप०-णिमि० सव्वत्थो० अवत्त० । अप्पद० अणंतगु० । भुज० विसे० । अवट्ठि० असंखेज्ज० । इत्थिवे०-पुरिस० णिरयभंगो । सेसाणं ओघं । अवगदवे० सव्वपगदीणं सव्वत्थो० अवत्त० । भुज० संखेज्ज० । अप्पद० संखेज्ज० । अवट्ठि० संखेज्ज० ।

८२०. कोधकसाए धुविगाणं णवुंसगभंगो । सेसाणं ओघं । एवं माण-माया-लोभाणं ।

८२१. मदि०-सुद० धुविगाणं तिरिक्खोघं । मिच्छ०-ओरालि० सव्वत्थो० अवत्त० । अप्पद० अणंतगु० । भुज० विसे० । अवट्ठि० असंखेज्ज० । सेसाणं ओघं । विभंगे धुविगाणं देवोघं । मिच्छ०-देवगदि०-ओरालि०-वेउव्वि०-वेउव्विअंगो०-देवाणु०-पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सव्वत्थो० अवत्त० । भुज०-अप्प० असंखेज्जगु० । [अवट्ठि०

हैं । आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्योंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है । इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंमें भी जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है ।

८१९. नपुंसकवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । स्त्रीवेद और पुरुषवेदका भङ्ग नारकियोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं ।

८२०. क्रोध कषायवाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नपुंसकोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार मान, माया और लोभ कषायवाले जीवोंके जानना चाहिये ।

८२१. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । मिथ्यात्व और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । इनसे भुजगार पदके बन्धक जीव विशेष अधिक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । मिथ्यात्व, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखे०। सेसाणं पंचिंदियभंगो।

८२२. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि-पंचिंदि०-चत्तारिसरीर-समचदु०-दोअंगो०-वज्जरि०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४ पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-तित्थय०-उच्चा०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखे०। अवट्ठि० असंखे०। सादादिबारस० मणुसभंगो। मणुसायु०-देवायुग-आहारदुगं ओघं।

८२३. मणपज्जव० सव्वकम्माणं सव्वत्थो० अवत्त०। दोपदा० संखेंज्ज०। अवट्ठि० संखेंज्ज०। दो आयु० मणुसि०भंगो। एवं संजद०।

८२४. सामाइ० छेदोव० धुविगाणं सव्वत्थो० भुज०-अप्पद०। अवट्ठि० संखेंज्ज०। सेसाणं मणपज्जवभंगो। परिहार०[आहार-] कायजोगिभंगो। णवरि आहारदुगं अत्थि। सुहुमसंप० सव्वाणं सव्वत्थो० भुज०। अप्प० संखेंज्ज०। अवट्ठि० संखेंज्ज०। संजदासंजद० धुविगाणं सव्वत्थो भुज०-अप्पद०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। सेसाणं ओधिभंगो। णवरि तित्थय० मणुसि०भंगो। असंजद० सव्वपगदीणं ओघं।

प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है।

८२२. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रऋषभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण, तीर्थंकर, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्योंके समान है। मनुष्यायु, देवायु और आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है।

८२३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें सब कर्मोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे दो पदोंके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। इसी प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये।

८२४. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है। परिहारविशुद्धि संयत जीवोंका भङ्ग आहारक काययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनमें आहारकद्विक है। सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंके भुजगार पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। संयतासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। असंयतोंमें सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२५. चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो। अचक्खुदं० ओघं। ओधिदं० ओधिणाणिभंगो।

८२६. किण्ण-णील-काऊसु तिरिक्खोघं। णवरि किण्ण-णीलासु तित्थय० मणुसिभंगो। काऊए णिरयभंगो।

८२७. तेऊए धुविगाणं सव्वत्थो० भुज०-अप्प०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-देवगदि०४-ओरालि०-तित्थय० सव्वत्थो० अवत्त०। भुज०-अप्प० असंखें०। अवट्ठि० असंखें०। सेसाणं सव्वत्थोवा अवत्त०। भुज०-अप्प० संखेंज्ज०। अवट्ठि० असंखेंज्ज०। आहारदुगं ओघं। तिरिक्ख-देवायु० विभंगभंगो। मणुसायु० देवभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि ओरालि०अंगो देवगदिभंगो।

८२८. सुक्काए पंचणा०-णवदंस०-मिच्छत्त०-सोलसक०-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरीर-दोअंगो०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्त०। भुज०-अप्पद० असंखेज्ज०। अवट्ठि० असंखेज्ज०। सेसाणं पम्माए भंगो। दोआयु० मणुसि०भंगो।

८२५. चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। अचक्षुःदर्शनवाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। अवधिदर्शनवाले जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है।

८२६. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नील लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। कापोत लेश्यावाले जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है।

८२७. पीत लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, देवगति चतुष्क, औदारिक शरीर और तीर्थंकर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चायु और देवायुका भङ्ग विभङ्गज्ञानियोंके समान है। मनुष्यायुका भङ्ग देवोंके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिक आङ्गोपाङ्गका भङ्ग देवगतिके समान है।

८२८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, निर्माण, तीर्थंकर और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पद्म लेश्याके समान है। दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२९. भवसि० ओघं । अब्भवसि० मदि०भंगो । णवरि मिच्छ० अवत्तव्वं णत्थि ।

८३०. सम्माइ०-खइगस० ओधिभंगो । णवरि खइगे देवायु०मणुसि०भंगो । वेदगे धुविगाणं सव्वत्थो० भुज०-अप्पद० । अवट्ठि० असंखेंज० । सेसं ओधिभंगो । उवसम० ओधिभंगो । णवरि तित्थय० मणुसि०भंगो । सासणे धुविगाणं देवभंगो । सेसाणं साद-भंगो । णवरि ओरालि०-ओरालि०अंगो० सव्वत्थो० अवत्त० । भुज०-अप्पद० असंखेंज० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । सम्मामि० सासण०भंगो । किंचि विसेसो । मिच्छादिट्ठि० मदि०भंगो ।

८३१. सण्णि० मणजोगिभंगो । असण्णीसु ओरालि०-ओरालि०अंगो० ओघं । सेसं मदि०भंगो । आहार० ओघं । अणहार० कम्मइगभंगो ।

एवं अप्पाबहुगं समत्तं ।

एवं भुजगारबंधो समत्तो।

८२९. भव्य जीवोंके ओघके समान भङ्ग हैं। अभव्य जीवोंमें मत्यज्ञानियोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं है।

८३०. सम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें देवायुका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। वेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। उपशम सम्यग्दृष्टि जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भंग साता वेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे भुजगार और अल्पतर पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके समान भङ्ग है। किन्तु यहाँ कुछ विशेषता है। मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है।

८३१. संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग हैं। असंज्ञी जीवों में औदारिक शरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्ग का भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

इस प्रकार भुजगारबन्ध समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदणिक्खेवो

८३२. पदणिक्खेवे तिण्णि अणियोगद्दाराणि। तत्थ इमाणि समुक्कित्तणा सामित्तं अप्पाबहुगे त्ति।

समुक्कित्तणा

८३३. समुक्कित्तणाए दुविधं—जहण्णयं उक्कस्सयं च। उक्कस्सए पगदं। दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० सव्वाणं पगदीणं अत्थि उक्कस्सिया वड्ढी उक्कस्सिया हाणी उक्कस्सयमवट्ठाणं। एवं अणाहारग त्ति।

८३४. जहण्णए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० सव्वाणं पगदीणं अत्थि जहण्णिया वड्ढी जहण्णिया हाणी जहण्णयमवट्ठाणं। एवं याव अणाहारग त्ति।

एवं समुक्कित्तणा समत्ता।

सामित्तं

८३५. सामित्तं दुविधं—जहण्णयं उक्कस्सयं च। उक्कस्सए पगदं। दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खगदि—एइंदि०—ओरालि०—तेजा०—क०—हुंडसं०—वण्ण०४-तिरिक्खाणु०—अगु०४-आदाउज्जो०-थावर-बादर पज्जत्त-पत्ते०-अथिरादिपंच०—णिमि०—णीचा०—पंचंत०उक०वड्ढी कस्स होदि? यो चदुट्ठाणिययवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडी ट्ठिदिबंधमाणो तप्पाओग्ग-उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सयं दाहं गदो तत्तो उक्कस्सयं ट्ठिदिबंधो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी।

पदनिक्षेप

८३२. पदनिक्षेपमें तीन अनुयोग द्वार हैं जो ये हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

समुत्कीर्तना

८३३. समुत्कीर्तना दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

८३४. जघन्यका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

स्वामित्व

८३५. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असातावेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, आतप, उद्योत, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है? जो चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट दाहको प्राप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कस्सिया हाणी कस्स० ? यो उक्कस्सयं ट्ठिदिं बंधमाणो मदो एइंदिए जादो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्कस्सिया हाणी । उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स० ? यो उक्कस्सयं ट्ठिदिं बंधमाणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णाए पडिदो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं । सादावे०-हस्स-रदि-थिर-सुभ-जसगि एदाणं णाणावरणभंगो । णवरि तप्पाओग्गसंकिलिट्ठा त्ति भाणिदव्वं । इत्थि०-पुरिस०-मणुस० देवगदि-तिण्णिजादि ओरालियसरीरअंगोवंग-पंचसंठा०-पंचसंघ०-दोआणु०-पसत्थ०-सुहुम-[अ-] पज्जत्त-साधार०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० उक्कस्सिया वड्ढी कस्स० ? यो यवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडी ट्ठिदिं बंधमाणो तप्पाओग्गसंकिलेसेण तप्पाओग्गउक्कस्सदाहं गदो तप्पाओग्गउक्कस्सट्ठिदिबंधो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी । उक्कस्सिया हाणी कस्स० ? यो उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणो सागारक्खएण पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्कस्सिया हाणी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं । णिरयगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-वेउव्विअंगो०-असंपत्त०-णिरयाणु०-अप्पसत्थ०-तस-दुस्सर० उक्कस्सिया वड्ढी कस्स० ? यो चदुट्ठाणिययवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडी ट्ठिदिं बंधमाणो उक्कस्सयं दाहं गदो तदो उक्कस्सयं ट्ठिदिबंधो तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी० कस्स होदि ? यो उक्कस्सयं ट्ठिदिं बंधमाणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्कस्सिया हाणी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं । आहार०-

---

होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला मरकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करने लगता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । सातावेदनीय, हास्य, रति, स्थिर, शुभ और यशःकीर्ति इनका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि यहाँ तत्प्रायोग्य संक्लिष्ट जीव स्वामी होता है, ऐसा कहना चाहिए । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, देवगति, तीन जाति, औदारिक शरीर आङ्गोपाङ्ग, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो यवमध्यके ऊपर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य संक्लेशके कारण तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । नरकगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्त विहायोगति, त्रस और दुःस्वरकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर अन्तःकोडाकोडी स्थितिका बन्ध करनेवाला उत्कृष्ट दाहको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । आहारक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहार०अंगो०-तित्थय० उक्क० वड्ढी कस्स० ? यो तप्पाओग्गजहण्णयं ट्ठिदिबंधमाणो तप्पाओग्गजहण्णियादो संकिलेसादो तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो तप्पाओग्गउक्क० ट्ठिदि० तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स० ? यो तप्पओग्गउक्कस्सयं ट्ठिदिबंधमाणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्कस्सिया हाणी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-आहारग त्ति।

८३६. णिरएसु पंचणाणावरणादीणं उक्कस्सयं संकिलिट्ठाणं ओघं णिरयगदिणामभंगो। सादादीणं तप्पाओग्गसंकिलिट्ठाणं ओघं इत्थिवेदभंगो। तित्थय० ओघभंगो। एवं सव्वणिरयाणं। णवरि सत्तमाए मणुसग०—मणुसाणु०—उच्चा० तित्थयरभंगो।

८३७. तिरिक्खेसु णिरयोघभंगो। मणुस०३-पंचिंदि०२-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-ओरालि०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस०-विभंग०-चक्खुदं०-पम्मले०-सण्णि त्ति एदाणं उक्कस्ससंकिलिट्ठाणं ओघं णिरयगदिभंगो। तप्पाओग्गसंकिलिट्ठाणं ओघं इत्थि०भंगो।

८३८. सव्वअपज्जत्त० पंचणा०-णवदंसणा०-असादा०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०-वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०-उप०-थावरादि०४-अथिरादिपंच-णिमि०-णीचा०-पंचंत० उक्क० वड्ढी०

शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है? जो तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला तत्प्रायोग्य जघन्य संक्लेशसे तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है? जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

८३६. नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण आदि उत्कृष्ट संक्लेशसे बँधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग ओघमें कही गयी नरकगति नामकर्मकी प्रकृतिके समान है। तत्प्रायोग्य संक्लेशसे बँधनेवाली साताआदि प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके अनुसार कहे गये स्त्रीवेदके समान है। तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है।

८३७. तिर्यञ्चोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिक, पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, औदारिक काययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी, विभङ्गज्ञानी, चक्षुदर्शनी, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी इनमें उत्कृष्ट संक्लेशसे बँधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग ओघमें कही गई नरकगतिके समान है। तत्प्रयोग्य संक्लेशसे बँधनेवाली प्रकृतियोंका भङ्ग ओघमें कहे गये स्त्रीवेदके समान है।

८३८. सब अपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, असाता वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कस्स० ? यो जहण्णगादो संकिलेसादो उक्कस्सयं संकिलेसं गदो उक्कस्सयं ट्ठिदिं पि बंधो तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स होदि ? यो उक्कस्सयं ट्ठिदिबं० सागारक्खएण० पडिभग्गो तप्पाओग्गजहण्णए पडिदो तस्स उक्कस्सिया हाणी। तस्सेव से काले उक्कस्सय-मवट्ठाणं । सेसाणं सादादीणं तं चेव । णवरि तप्पाओग्ग त्ति भाणिदव्वं । एवं आणदादि याव सव्वट्ठा त्ति सव्वएइंदि०-विगलिंदि०[1] पंचकायाणं च । देवा याव सहस्सार त्ति णिरयभंगो । ओरालिय०-वेउव्वियमि०-आहारमि० अपज्जत्तभंगो। वेउव्विय०-आहारका० देवभंगो । कम्मइगा० ओरालियमिस्सभंगो । णवरि अवट्ठाणं बादरएइंदियस्स कादव्वं ।

८३९. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० उक्क० वड्ढी कस्स० ? अण्णद० उवसामगस्स अणियट्टीबादरसांपराइगस्स दुचरिमादो ट्ठिदिबंधादो चरिमे ट्ठिदिबंधे वट्टमाणगस्स तस्स उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी कस्स० ? अण्णदरस्स खवगस्स अणियट्टि० पढमादो ट्ठिदिबंधादो बिदिए ट्ठिदिबंधे वट्टमाण० तस्स० उक्क० हाणी । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं ।

८४०. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-छदंसणा०-असादा०-बारसक०-पुरिस०-अरदि-सोग-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरी०-समचदु०-[दो] अंगो०-वज्जरिस०

स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि पाँच, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो जघन्य संक्लेशसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य बन्ध कर रहा है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है । तथा वह तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है । शेष सातादि प्रकृतियोंका यही भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि तत्प्रायोग्यके कहना चाहिए । इसी प्रकार आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंके तथा सब एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके कहना चाहिए । सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । वैक्रियिक काययोगी और आहारक काययोगी जीवोंमें देवोंके समान भङ्ग है । कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि अवस्थान बादर एकेन्द्रियके कहना चाहिए ।

८३९. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो अन्यतर उपशामक अनिवृत्तिबादरसाम्परायिक जीव द्विचरम स्थितिबन्धसे अन्तिम स्थितिबन्धमें अवस्थित है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है । उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो अन्यतर क्षपक अनिवृत्तिकरण जीव प्रथम स्थितिबन्धसे द्वितीय स्थितिबन्धमें विद्यमान है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है तथा वही तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है ।

८४०. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, असाता वेदनीय, बारह कषाय, पुरुषवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चे-

१ मूलप्रतौ-लिंदि० पंचिंदि-तसपज्जत्त पंच-इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वण्ण०४–दोआणु०–अगु०४–पसत्थवि०-तस०४-अथिर–असुभ–सुभग–सुस्सर–आदे०–अज०–णिमि०–उच्चा०–पंचंत० उक्क० वड्डी कस्स० ? यो जहण्णयं ट्ठिदिबंधमाणो तप्पाओग्गजहण्णगादो संकिलेसादो उकस्सयं संकिलेसं गदो उकस्सयं ट्ठिदिबंधो तस्स मिच्छत्ताभिमुहस्स चरिमे उकस्सए ट्ठिदिबंधे वट्टमाण० तस्स उक्क० वड्डी । उक्क० हाणी कस्स० ? उकस्सयं ट्ठिदिबंधमाणो सागारक्खयेण पडिभग्गो तप्पाओग्ग० जह० ट्ठिदी० तस्स उक्क० हाणी । वड्डीए चेव उकस्सयं अवट्ठाणं । सादावे०-हस्स-रदि-आहारदुग-थिर-सुभ०-जसगि० आहार०भंगो । एवं मणपज्जव-संजद-सामाइयच्छेदो०-परिहार०-संजदासंज०–ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०-सम्मामिच्छा० । णवरि खइगे उकस्सयं संकिलेसं कादव्वं । सुहुमसंप० अवगद०भंगो । [किण्ण० णील काउ० णिरयभंगो । तेउए सोधम्मभंगो । सुक्काए] णवगेवज्जभंगो । सासणे णेरइगभंगो । असण्णि० तिरिक्खोघं । अणाहार० कम्मइगभंगो ।

एवं उकस्ससामित्तं समत्तं

८४१. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०–मिच्छ०–सोलसक०-भय-दुगुं०-तिरिक्खदुग-पंचिंदि०–ओरालि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-दो-अंगो०–वण्ण०४-अगु०४-उज्जोव–तस०४-णिमि०–णीचा०–पंचंत० जह० कस्स० ?

न्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्र संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, अस्थिर, अशुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, अयशःकीर्ति, निर्माण, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य जघन्य संक्लेशसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है और जो मिथ्यात्वके अभिमुख होकर अन्तिम उत्कृष्ट स्थितिबन्धमें विद्यमान है, वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? जो उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव साकार उपयोगका क्षय होनेसे प्रतिभग्न होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है, वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। और वृद्धिके होनेपर ही उत्कृष्ट अवस्थान होता है । सातावेदनीय, हास्य, रति, आहारकद्विक, स्थिर, शुभ और यशःकीर्तिका भङ्ग आहारककाययोगी जीवोंके समान है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिक सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशम सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट संक्लेश करना चाहिये । सूक्ष्मसाम्परायिकसंयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है । कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म कल्पके समान भङ्ग है । शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें नौग्रैवेयकके समान भङ्ग है । सासादन सम्यग्दृष्टिजीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । असंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ ।

८४१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चद्विक, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, दो आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अण्ण० जो समयूणं उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणो पुण्णाए ट्ठिदिबंधगद्धाए उक्कस्सए संकिलेसं गदो तदो उक्कस्सयं ट्ठिदिं पबद्धो तस्स जह० वड्ढी। जहण्णिया हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं सव्वजह० ट्ठिदि० पुण्णाए ट्ठिदिबंधगद्धाए उक्कस्सयं विसोधिं गदो तदो दाह० ट्ठिदि० तस्स जहण्णिया हाणी। एक्कदरत्थमवट्ठाणं। सादावे० पुरिस०-हस्स-रदि-दोगदि-समचदु०-वज्जरिस०-दोआणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० जह० वड्ढी कस्स ? यो समयूणं तप्पाओग्गउक्कस्सयं ट्ठिदिं बंध० तप्पाओग्गउक्क० संकिले० तदो उक्क० ट्ठिदिबंध० तस्स जहण्णिया वड्ढी। जह० हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं तप्पाओग्गजह० माणो उक्कस्सं विसोधिं गदो तदो सव्व जह० तस्स जह० हाणी। एक्कदरत्थमवट्ठाणं। असादा०-णवुंस०-अरदि-सोग-णिरयगदि-एइंदि०-हुंड०-असंपत्त०-णिरयाणु०-अप्पसत्थवि०-आदाव-थावर-अथिरादिछ० जह० वड्ढी कस्स० ? यो समयूणं उक्कस्सयं ट्ठिदि बंध० पुण्णाए ट्ठिदि बंध० उक्कस्सियं संकिलेसं गदो तदो उक्क० ट्ठिदि० तस्स जह० वड्ढी। जह० हाणी० कस्स० ? यो तप्पाओग्गजह० समजुत्तरं ट्ठिदि० तप्पाओग्ग विसोधिं गदो तदो जह० ट्ठिदि० तस्स जह० हाणी। एगदरत्थमवट्ठाणं। इत्थिवे०-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-चदुसंघ०-सुहुम-अपज्ज०-साधार० जह० वड्ढी कस्स ? यो समयूणं तप्पाओग्गउक्क० ट्ठिदि०माणो पुण्णाए ट्ठिदिबंधगद्धाए तप्पाओग्गउक्क०

लघुचतुष्क, उद्योत, त्रस चतुष्क, निर्माण, नीचगोत्र, और पाँच अन्तरायकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला स्थितिबन्धके कालके पूर्ण होनेपर उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, दो गति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रऋषभनाराच संहनन, दो आनुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर सबसे जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। असातावेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्वी, अप्रशस्तविहायोगति, आतप, स्थावर और अस्थिर आदि छहकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव तत्प्रायोग्य विशुद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। स्त्रीवेद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय कम तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदि० तस्स जह० वड्ढी। जह० हाणी कस्स० ? समजुत्तरं तप्पाओग्गज० ट्ठिदि० पुण्णाए ट्ठिदिबं० तप्पाओग्गउक्क० विसोधिं गदो तप्पाओग्गजह० ट्ठिदि० तस्स जह० हाणी। एक्कदरत्थमवट्ठाणं। आहार०-आहार०अंगो०-तित्थय० जह० वड्ढी कस्स० ? यो समजुत्तरं तप्पाओग्गउक्क० ट्ठिदो० पुण्णाए ट्ठिदिबं० तप्पाओ० उक्कस्ससंकिले० गदो तप्पाओ० उक्क० ट्ठिदि० तस्स जह० वड्ढी। जह० हाणी कस्स० ? यो समजुत्तरं सव्व जह० ट्ठिदि० पुण्णाए ट्ठिदिबंधगद्धाए उक्कस्सिया विसोधिं गदो तदो सव्व जह० बंधो तस्स जह० हाणी। एक्कदरत्थमवट्ठाणं। एवं ओघभंगो पंचिंदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-सण्णि-आहारग त्ति।

८४२. णेरइएसु पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-ओरालि०-तेजा०-क०-ओरालि०अंगो०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-पंचंत० जह० वड्ढी-हाणी-अवट्ठाणं ओघं णाणावरणीयभंगो। साद०-पुरिस०-हस्स-रदि मणुसग०-समचदु०-वज्जरिस०-मणुसाणु०-पसत्थ०-थिरादिछ०-उच्चा० जह० वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणं ओघं। असादा०-णवुंस०-अरदि-सोग-तिरिक्खग०-हुंड०-असंपत्त०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-अप्प-

कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। आहारक शरीर, आहारक आङ्गोपाङ्ग और तीर्थंकर प्रकृतिकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जो एक समय अधिक सबसे अधिक जघन्य स्थितिबन्ध करनेवाला जीव स्थितिबन्ध कालके पूर्ण हो जानेपर उत्कृष्ट विशुद्धिको प्राप्त होकर जघन्य स्थितिबन्ध करता है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा इनमेंसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। इसी प्रकार ओघके समान पञ्चेन्द्रिय, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

८४२. नारकियोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और पाँच अन्तरायकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानका स्वामी ओघमें कहे गये ज्ञानावरणीयके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, मनुष्यगति, समचतुरस्र संस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, प्रशस्त विहायोगति, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानका स्वामी ओघके समान है। असाता वेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर आदि छह और

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

सत्थ०-अथिरादिछ०-णीचा० ओघं असादभंगो। इत्थिवे०-चदुसंठा०-चदुसंघ० ओघं इत्थिभंगो। तित्थय० ओघं। एवं सव्वणिरयाणं। णवरि सत्तमाए मणुस०—मणुसाणु०—उच्चा० तित्थय०भंगो।

८४३. तिरिक्खेसु ओघेण साधेदव्वं। पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-मिच्छ०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत०जहण्णि० तिण्णि वि ओघभंगो। साद०-पुरिस०-हस्स-रदि-मणुसगदि-पंचिंदि०-समचदु०-ओरालि०अंगो०—वज्जरिस०—मणुसाणु०—पर०-उस्सा-०पसत्थ०—तस०४—थिरादिछ०—उच्चा० ओघं आहारसरीरभंगो। असादा०-णवुंस०—अरदि-सोग-तिरिक्खगदि-एइंदि०-हुंडसं०—तिरिक्खाणु०—थावरादि०४—अथिरादिछ०-णीचा० ओघं असादभंगो। इत्थिवे०—तिण्णिजादि—चदुसंठा०-चदुसंघ०—आदाउज्जो०—अप्पसत्थ०-दुस्सर० ओघं इत्थिभंगो। एवं सव्वअपज्जत्तगाणं आणद याव उवरिमाणं देवाणं। हेट्ठाणं णिरयभंगो।

८४४. मणुस०३ तिरिक्खभंगो। एइंदिय-पंचकायाणं विगलिंदियाणं च अपज्जत्तभंगो। ओरालियका०-ओरालियमि० तिरिक्खोघं। वेउव्विय० वेउव्वियमि० देवोघं। णवरि मिस्से आणदभंगो। आहार०-आहारमिस्स० णिरयभंगो। कम्मइग० अवट्ठाणं

नीचगोत्रका भङ्ग ओघमें कहे गये असातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेद, चार संस्थान और चार संहननका भङ्ग ओघके अनुसार कहे गये स्त्रीवेदके समान है। तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकियोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भंग तीर्थङ्कर प्रकृतिके समान है।

८४३. तिर्यञ्चोंमें ओघके अनुसार साध लेना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, मिथ्यात्व, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायके जघन्य तीनों ही ओघके समान हैं। सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्र संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, स्थिर आदि छह और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघमें कहे गये आहारक शरीरके समान है। असातावेदनीय, नपुंसकवेद, अरति, शोक, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार, अस्थिर आदि छह और नीचगोत्रका भङ्ग ओघमें कहे गये असातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेद, तीन जाति, चार संस्थान, चार संहनन, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति और दुःस्वरका भङ्ग ओघमें कहे गये स्त्रीवेदके समान है। इसी प्रकार सब अपर्याप्तकोंके तथा आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंके जानना चाहिए। नीचेके देवोंके नारकियोंके समान भङ्ग हैं।

८४४. मनुष्यत्रिकमें तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग हैं। एकेन्द्रिय, पाँच स्थावरकायिक और विकलेन्द्रियोंमें अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग हैं। औदारिक काययोगी और औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग हैं। वैक्रियक काययोगी और वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग हैं। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें आनत कल्पके समान भङ्ग हैं। आहारक काययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें नारकियोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एइंदियभंगो। सेसाणि णत्थि।

८४५. इत्थि०-पुरिस० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवुंसगे तिरिक्खोघं। अवगदवे० सव्वकम्माणं जह० वड्ढी कस्स०? अण्णदरस्स उवसमग० परिवद० पढमट्ठिदिबंधादो विदिए ट्ठिदिबंधे वट्टमा० तस्स जहण्णिया वड्ढी। जह० हाणी कस्स०? अण्णद० खवग० सुहुमसंप० दुचरिमादो ट्ठिदिबंधादो चरिमे ट्ठिदिबंधे वट्टमा० तस्स जह० हाणी। तस्सेव से काले जह० अवट्ठाणं। चदुसंज० अवट्ठिदस्स कादव्वं। एवं सुहुमसंप०। [विभंगे णिरयभंगो]

८४६. आभि०-सुद०-ओधि० मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार-संजदासंजद-ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०-सासण०-सम्मामि० णाणावरणादि-सादासाद-आहारदुग-तित्थय० एदे अप्पप्पणो ट्ठिदिबंधेण ओघेण साधेदव्वं। किण्ण-णील-काउ० णिरयोघं। तेउ० सोधम्मभंगो। पम्माए सहस्सारभंगो। सुक्काए णवगेवज्जभंगो। असण्णि० तिरिक्खोघं। अणाहार० कम्मइगभंगो।

एवं जहण्णसामित्तं समत्तं।

८४७. एत्तो जहण्णुक्कस्ससामित्तसाधणट्ठं जहण्णुक्कस्समद्धच्छेदादो उक्कस्ससंकिलिट्ठं तप्पाओग्गसंकिलिट्ठं उक्कस्सविसोधि-तप्पाओग्गविसोधीहि जहण्णुक्कस्स-

---

समान भङ्ग हैं। कार्मण काययोगी जीवोंमें अवस्थानका भङ्ग एकेन्द्रियोंके समान है। शेष पद नहीं हैं।

८४५. स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। नपुंसकवेदी जीवोंमें समान्य तिर्यञ्चोंके समान भंग है। अपगतवेदी जीवोंमें सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है? जो गिरनेवाला अन्यतर उपशामक प्रथम स्थितिबन्धसे आकर द्वितीय स्थितिबन्धमें अवस्थित है, वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। जघन्य हानिका स्वामी कौन है? जो अन्यतर क्षपक सूक्ष्म-साम्परायिक जीव द्विचरम स्थितिबन्धसे अन्तिम स्थितिबन्धमें अवस्थित है, वह जघन्य हानिका स्वामी है तथा वही तदनन्तर समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है। चार संज्वलनका भंग अवस्थितके कहना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्म साम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिए। विभंगज्ञानी जीवोंमें नारकियोंके समान भंग है।

८४६. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ज्ञानावरणादि, सातावेदनीय, असातावेदनीय, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इन प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धिबन्ध आदिका स्वामित्व अपने-अपने स्थितिबन्धको ध्यानमें रखकर ओघके अनुसार साध लेना चाहिए। कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। पीतलेश्यावाले जीवोंमें सौधर्म कल्पके समान भङ्ग है। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें सहस्रार कल्पके समान भङ्ग है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें नौग्रैवेयकके देवोंके समान भङ्ग है। असंज्ञी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है।

इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

८४७. इसके आगे जघन्योत्कृष्ट स्वामित्वकी सिद्धि करनेके लिए जघन्य उत्कृष्ट अद्धाच्छेदके अनुसार उत्कृष्ट संक्लिष्ट, तत्प्रायोग्य संक्लिष्ट, उत्कृष्ट विशुद्धि और तत्प्रायोग्य विशुद्धिको जहाँ जो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामित्तं साधेदव्वं ।

एवं सामित्तं समत्तं ।

अप्पाबहुगं

८४८. अप्पाबहुगं दुविधं—जहण्णयं उक्कस्सयं च । उक्कस्सए पगदं । दुविधं—ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-दोवेदणी०-मिच्छ०-सोलसक०-णवुंस०-चदुणोक०-भय-दु०—तिरिक्खग०—एइंदि०—ओरालि०-तेजा०-क०-हुंडसं०—वण्ण०४-तिरिक्खाणु०-अगु०४-आदाउज्जो० -थावर-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०—थिराथिर-सुभासुभ-दूभग-अणादें०-जस०-अजस०-णिमि०-णीचा०-पंचंत० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । उक्क० अवट्ठाणं विसे० । उक्क० हाणी विसे० । आहारदुगं सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवट्ठाणं च । वड्ढी संखेंज्जगु० । तित्थय० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवट्ठाणं च । उ० वड्ढी संखेंज्जगु० । सेसाणं सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्लाणि विसे० । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४-मदि०—सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-आहारग त्ति ।

८४९. अवगदवे०-सुहुमसंप० सव्वाणं सव्वत्थोवा उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला । उक्क० वड्ढी संखेंज्जगु० । आभि०-सुद०-ओधि०-मणपज्जव-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओधिदं०—सम्मादि०-खइग०—वेदग०-उवसम०-सम्मामि०

सम्भव हो, ध्यानमें रखकर जघन्योत्कृष्ट स्वामित्व साध लेना चाहिए ।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

अल्पबहुत्व

८४८. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, दो वेदनीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, भय, जुगुप्सा, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मणशरीर, हुण्डसंस्थान, वर्णचतुष्क, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, आतप, उद्योत, स्थावर, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र और पाँच अन्तरायकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट अवस्थान विशेष अधिक है । इससे उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है । आहारकद्विककी उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर विशेष अधिक हैं । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

८४९. अपगतवेदी और सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिक संयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धि संयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला । उ० वड्ढी संखेंज्जगु० । सादादीणं एसिं सत्थाणं उक्कस्सियं तेसिं सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला विसे० । सेसाणं णिरयादि याव असण्णि त्ति सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी । उक्क० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला विसे० । णवरि कम्मइग-अणाहारगेसु सव्वत्थोवा उक्क० अवट्ठाणं । वड्ढी संखेंज्जगु० । उ० हाणी विसेसाहिया ।

एवं उक्कस्सयं समत्तं

८५०. जहण्णए पगदं । दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० सव्वकम्माणं जह० वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणं च तिण्णि वि तुल्ला । एवं णेरइगादि याव अणाहारग त्ति णेदव्वं । णवरि अवगदवे० सव्वत्थोवा जह० हाणी अवट्ठाणं च दो वि तुल्ला । जह० वड्ढी संखेंज्जगु० । एवं सुहुमसंप० ।

एवं अप्पाबहुगं समत्तं ।

पदणिक्खेवे त्ति समत्तं ।

वड्ढिबंधो

८५१. वड्ढिबंधे त्ति तत्थ इमाणि तेरसेव अणियोगद्दाराणि । तं यथा—समुक्कित्तणा याव अप्पाबहुगे त्ति ।

वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । सातादिमेंसे जिनका स्वस्थान उत्कृष्ट होता है, उनकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर विशेष अधिक हैं । शेष नारकियोंसे लेकर असंज्ञी तककी मार्गणाओंमें उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर विशेष अधिक हैं । इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है । इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है । इससे उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

८५०. जघन्यका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार है—ओघ और आदेश । ओघसे सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान तीनों ही तुल्य हैं । इसी प्रकार नारकियोंसे लेकर अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपगतवेदी जीवोंमें जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे जघन्य वृद्धि संख्यातगुणी है । इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक जीवोंके जानना चाहिए ।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

इस प्रकार पदनिक्षेप समाप्त हुआ ।

वृद्धिबन्ध

८५१. अब वृद्धिबन्धका प्रकरण है । वहाँ ये तेरह अनुयोगद्वार हैं । यथा—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समुक्कित्तणा

८५२. समुक्कित्तणाए दुवि० ओघे० आदे०। ओघे० खवगपगदीणं अत्थि चत्तारि वड्डी चत्तारिहाणी अवट्ठिद-अवत्तव्वबंधगा य। चदुण्णं आयुगाणं मूलपगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अवत्तव्वबंधगा य। एवं ओघभंगो मणुस०३-पंचिंदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-सण्णि-आहारग त्ति।

८५३. णेरइएसु धुवियाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-बंधगा य। सेसाणं तित्थयरेण सह अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्व-बंधगा य। दो आयु० अत्थि असंखेंज्जभागहाणि-अवत्तव्वबंधगा य। एवं सव्वणिरय सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-सव्वदेव० पंचिंदिय-तसअपज्जत्तगाणं च।

८५४. एइंदिय-पंचकाएसु धुविगाणं अत्थि एकवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-बंधगा य। सेसाणं अत्थि एक-वड्ढि-हाणि-अवट्ठिदअवत्तव्वबंधगा य। विगलिंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्तेसु धुविगाणं अत्थि बे वड्ढि-हाणि-अवट्ठिदबंधगा य। सेसाणं अत्थि बे-वड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्वबंधगा य।

८५५. ओरालियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०-उप०-णिमि०-

समुत्कीर्तना

८५२. समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे क्षपक प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। चार आयुओंका भङ्ग मूल प्रकृतिबन्धके समान है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार ओघके समान मनुष्यत्रिक, पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

८५३. नारकी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। तीर्थङ्कर प्रकृतिके साथ शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। दो आयुओंकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सब देव, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

८५४. एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। विकलेन्द्रिय और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

८५५. औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, देवगति, औदारिक शरीर, वैक्रियिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिकआं-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थय०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद०। सादादीणं मिच्छत्तस्स च सव्व पगदीणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्वबं०।

८५६. वेउव्वि० देवोघं। वेउव्वियमि० पंचणा०-णवदंसणा०-सोलसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजा० क० वण्ण०४-अगु०४- बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-तित्थय०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०। सेसाणं० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्व-बंधगा य।

८५७. आहार०-आहारमि० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदबं०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद अवत्तव्वबं०। कम्मइ० धुविगाणं देवगदि०४-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०बं०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद-अवत्त०।

८५८. इत्थि-पुरिस-णवुंसगेसु अट्ठारसण्णं अत्थि चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदबं०। सादावे०-पुरिस०-जस०-उच्चा० अत्थि चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० अत्थि संखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। सादावे०-जसगि०-उच्चा० अत्थि संखेंज्जभागवड्ढि-हा०-संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०।

ङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। साता आदि और मिथ्यात्वसे लेकर सब प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं॥

८५६. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण, तीर्थङ्कर और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

८५७. आहाककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन-हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियाँ, देवगति चतुष्क और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

८५८. स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी जीवोंमें अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, और उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुण-हानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चदुसंज० अत्थि संखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० ।

८५९. कोधे पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । सादावे०-पुरिस०-जस०-उच्चा० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० । सेसाणं ओघं । माणे पंचणा०-चदुदंस०-तिण्णिसंज०-पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । कोधसंजलण० सादभंगो । सेसं ओघं । मायाए पंचणा०-चदुदंस०-दोसंज०-पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि अवट्ठि० । सेसाणं ओघं । लोभे ओघं । णवरि चोद्दस० अवत्तव्वं णत्थि ।

८६०. मदि०-सुद० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । चदुआयु० ओघं । मिच्छ० सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अवत्त० । एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छादि० । णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० मिच्छत्तस्स अवत्त० णत्थि ।

८६१. आभिणि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंसणा०-सादा०-चदुसंज०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० । सेसाणं अत्थि तिण्णि-वड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० । एवं मणपज्ज०-संजद-ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०-उवसम० ।

चार संज्वलनकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं ।

८५९. क्रोध कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, और उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । मान कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण चार दर्शनावरण, तीन संज्वलन और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । क्रोध संज्वलनका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । माया कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, दो संज्वलन और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । लोभ कषायवाले जीवोंमें ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि चौदह प्रकृतियोंका अवक्तव्य पद नहीं है ।

८६०. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । चार आयुओंका भङ्ग ओघके समान है । मिथ्यात्व और शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद नहीं है ।

८६१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, चार संज्वलन, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८६२. सामाइ०–छेदो० पंचणा०–चदुदंस०–लोभसंज०–उच्चा०–पंचंत० अत्थि चत्तारिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०। सेसाणं ओघं। परिहार०–संजदासंजदा० आहारकायजोगिभंगो। सुहुमसंप० पंचणा०–चदुदंस०-सादावे०–जस०–उच्चा०–पंचंत० अत्थि संखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि०। असंजदे पंचणा०-छदंसणा०-बारसक०–भय०–दु०–तेजा०–क०–वण्ण०४–अगु०–उप०-णिमि०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०–अवत्त०। एवं किण्ण–णील–काऊणं। णवरि किण्ण-णीलाणं तित्थय० अवत्त० णत्थि।

८६३. तेऊए पंचणा०–छदंसणा०–चदुसंज०–भय–दु०–तेजासरीरादि–पंचंतरा० अत्थि तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०-अवत्त०। पम्माए पंचणा०–छदंसणा०–चदुसंज०–भय०–दु०–पंचिंदियादिपण्णरस–पंचंत० अत्थि-तिण्णिवड्डि-हाणी०-अवट्ठि०। सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। सुक्काए ओघं।

८६४. वेदगस० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०। सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। सासणे धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०। सेसाणं० तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि०–अवत्त०। सम्मामिच्छा० पंचणा०–छदंसणा०–

८६२. सामायिक और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि, और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। परिहारविशुद्धि संयत और संयतासंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव हैं। असंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कृष्ण और नीललेश्यावाले जीवोंके तीर्थङ्कर प्रकृतिका अवक्तव्य पद नहीं है।

८६३. पीतलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर आदि और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। पद्मलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति आदि पन्द्रह और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव हैं। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है।

८६४. वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारसक०-पुरिस०-भय०-दु०-दोगदि पंचिंदि०-चदुसरीर-समचदु ०-दोअंगो०-वजरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-पंचंत० अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० ।

८६५. असण्णीसु धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० । सेसाणं अत्थि तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० । अणाहार० कम्मइगभंगो । एवं समुकित्तणा समत्ता ।

सामित्तं

८६६. सामित्ताणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेंज्जभाग-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्णद० एइंदियस्स वा बीइंदियस्स वा तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिंदि० सण्णि० असण्णि० बादर० सुहुम० पज्जत्ता अपज्जत्त० । संखेंज्जभागवड्डि-हाणिबंधो कस्स० ? अण्ण० बेइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिंदि० सण्णि० असण्णि० पज्जत्त० अपज्ज० । संखेंज्जगुणवड्डि-हाणि० कस्स० ? अण्ण० पंचिंदि० सण्णि० असण्णि० पज्जत्त० अपज्जत्त० । असंखेंज्जगुणवड्डिबंधो कस्स० ? अण्ण० अणियट्टिबादर० उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिएणी वा पढमसमय देवस्स वा । असंखेंज्जगुणहाणिबंधो कस्स० ? अण्ण० उवसामगस्स वा खवगस्स वा

स्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चेन्द्रिय जाति, चार शरीर, समचतुरस्र संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं ।

८६५. असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव हैं । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव हैं । अनाहारक जीवोंमें कार्मणकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

स्वामित्व

८६६. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पदका स्वामी कौन है ? अन्यतर एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है । संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है । संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर पञ्चेन्द्रिय संज्ञी-असंज्ञी पर्याप्त या अपर्याप्त जीव स्वामी है । असंख्यात गुणवृद्धिबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला अनिवृत्तिबादरसाम्परायिक मनुष्य या मनुष्यनी अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है । असंख्यातगुणहानिबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक या क्षपक अनिवृत्तिबादरसाम्परायिक जीव स्वामी है । अवक्तव्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणियट्टिबादरसांपराइगस्स । अवत्त० कस्स होदि ? उवसमणादो परिवदमाणस्स मणुसस्स वा मणुसिणीए वा पढमसमयदेवस्स वा । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० संजमादो वा संजमासंजमादो वा सम्मत्तादो वा सम्मामिच्छादो वा परिवदमाणगस्स पढमसमय-मिच्छादिट्ठिस्स वा सासणसम्मादिट्ठिस्स वा । णवरि मिच्छत्तस्स सासणादो वा पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स वा । साद०-पुरिस०-जस०-उच्चा० चत्तारिवड्ढि हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० परियत्त० । णिद्दा-पचला-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि०तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णाणावरणभंगो । असाद०-इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक०-तिरिक्ख-मणुसग०-पंचजादि-छस्संठा०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरण-भंगो । अवत्त० सादभंगो । अपचक्खाणा०४-तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० संजमादो वा संजमासंजमादो वा परिवदमा० पढमस० मिच्छादि० सासण० सम्मामिच्छादिट्ठिस्स वा असंजद० वा । पचक्खाणा०४-तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणा-वरणभंगो । अवत्त० संजमादो परिवदमा० पढम० मिच्छा० सासण० सम्मामि० असंज० संजदासंजदस्स वा । चदुआयु० अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पढमसमय-आयुग० बंधमा-

बन्धका स्वामी कौन है ? उपशमश्रेणिसे गिरनेवाला मनुष्य या मनुष्यिनी अथवा प्रथम समयवर्ती देव स्वामी है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर संयमसे संयमासंयमसे, सम्यक्त्वसे या सम्यग्मिथ्यात्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व प्रकृतिकी अपेक्षा अवक्तव्य बन्धका स्वामी संयमादि चार स्थानोंसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव तो है ही । साथ ही सासादनसम्यक्त्वसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि भी है । सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर परिवर्तमान जीव स्वामी है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति, पाँच जाति, छह संस्थान, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्यबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अप्रत्याख्यानावरण चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी संयम या संयमासंयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि या असंयतसम्यग्दृष्टि जीव है । प्रत्याख्यानावरण चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी संयमसे गिरनेवाला प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि या संयतासंयत जीव है । चार आयुओंके अवक्तव्यबन्धका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णस्स । तेण परं असंखेंज्जभागहाणी । वेउव्वियछ० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० सण्णि० असण्णि० । णवरि संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि० सण्णिपज्जत्त० । अवत्तव्व० सादभंगो । आहारदुग-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? अण्णद० पढमसमयबंधमा० । ओरालि०-ओरालि०-अंगो० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० पढमसमयबंध० । एवं ओघभंगो कायजोगि-अचक्खु०-भवसि०-आहारग त्ति ।

८६७. णेरइएसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघादो साधेदव्वं । णवरि सत्तमाए तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० थीणगिद्धिभंगो । मणुस०-मणुसाणु०-उच्चा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० कस्स० ? अण्ण० मिच्छत्तादो परिवद० पढम० असंज० सम्मामि० ।

८६८. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३ । पंचिंदि०तिरिक्खअपज्जत्त० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसं ओघं । एवं सव्वअपज्ज० अणुदिसदेवाणं च । मणुसेसु

स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें आयुकर्मका बन्ध करनेवाला जीव स्वामी है । उसके बाद असंख्यातभागहानि होती है । वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर संज्ञी और असंज्ञी जीव स्वामी है । इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका स्वामी संज्ञी पर्याप्त जीव है । अवक्तव्यबन्धका स्वामी सातावेदनीयके समान है । आहारकद्विक, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत और तीर्थंकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव स्वामी है । औदारिकशरीर और औदारिकआङ्गोपाङ्गकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव स्वामी है । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

८६७. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष ओघके अनुसार साध लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है । मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर मिथ्यात्वसे असंयत सम्यग्दृष्टि या सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाला प्रथम समयवर्ती नारकी जीव स्वामी है ।

८६८. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार सब अपर्याप्त और अनुदिश देवोंके जानना चाहिए । मनुष्योंमें ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्य बन्धका स्वामी प्रथम समय-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओघं। णवरि अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वं। एवं पंचमण०-पंचवचि०। देवेसु णिरयभंगो।

८६९. एइंदिय-पंचकाएसु धुविगाणं एकवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स०? अण्णद०। सेसाणं एकवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स०? अण्ण०। अवत्त० कस्स०? अण्ण० परियत्त० पढम०। विगलिंदिएसु धुविगाणं दोवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० बंधो कस्स०? अण्ण०। सेसाणं दोण्णिवड्ढि हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० कस्स०? अण्ण० परियत्त० पढम०। पंचिंदि० तस्सेव पज्जत्ता ओघं। णवरि पंचिंदि० सण्णि०-असण्णि०-पज्जत्त०-अपज्जत्त त्ति भाणिदव्वं। तस-तसपज्जत्ता ओघं। णवरि बीइंदि० तीइंदि० चदुरिंदि० पंचिंदि० सण्णि० असण्णि० पज्जत्ता अपज्जत्ता त्ति भाणिदव्वं।

८७०. ओरालिका० ओघं। णवरि देवो त्ति ण भाणिदव्वं। ओरालियमि० तिरिक्खोघं। णवरि मिच्छ० कस्स०? अण्ण० सासण० परिवद० पढम० मिच्छादिट्ठि०। देवगदि०४-तित्थय० अवत्त० णत्थि। वेउव्विय० वेउव्वियमि० देवोघं। आहार०-आहारमि० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स०? अण्णद०। सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० ओघं सादभंगो। कम्मइग० धुविगाणं देवगदि

वर्ती देव होता है, यह नहीं कहना चाहिए। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीवोंके जानना चाहिए। देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है।

८६९. एकेन्द्रियोंमें और पाँच स्थावर कायिक जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है। विकलेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है। पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय संज्ञी-असंज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसा कहना चाहिए। त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय संज्ञी-असंज्ञी पर्याप्त व अपर्याप्त ऐसा कहना चाहिए।

८७०. औदारिक काययोगी जीवोंमें ओघके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका स्वामी प्रथम समयवर्ती देव होता है, ऐसा नहीं कहना चाहिए। औदारिक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर सासादन सम्यक्त्वसे गिरकर प्रथम समयमें मिथ्यादृष्टि हुआ जीव स्वामी है। देवगति चतुष्क और तीर्थंकर प्रकृतिका अवक्तव्य बन्ध नहीं है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिक आंगोपांगका भंग सामान्य देवोंके समान है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका स्वामी ओघमें कहे गये सातावेदनीयके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचगस्स च अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं अवट्ठि०-अवत्त० कस्स० ? अण्ण० । एवं अणाहार० ।

८७१. इत्थि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । णवरि असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि० अणियट्टि० । णिद्दादंडस्स अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वं । सेसाणं ओघं । पुरिसेसु ओघं । णवुंसगे धुविगाणं इत्थिभंगो । सेसाणं ओघं । अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० संखेंज्जभागवड्ढि-संखेंज्जगुणवड्ढि-अवत्त० कस्स० ? अण्णद० उवसम परिवद० । तेसिं हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० उवसम० खवग० । सादावे०-जस०-उच्चा० संखेंज्जभागवड्ढि-संखेंज्जगुणवड्ढि-असंखेंज्जगु०-अवत्त० कस्स० ? अण्ण० उवसम० परिवद० । तेसिं हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० उवसम० खवग० । चदुसंज० संखेंज्जभाग०-अवत्त० कस्स० ? अण्ण० उवसाम० परिवद० । संखेंज्जभागहाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० उवसाम० खवग० ।

८७२. कोधेसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओघं । अवत्त० णत्थि । सेसाणं च ओघं । माणे तिण्णिसंजलणं,

कार्मणकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और देवगतिपञ्चकके अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

८७१. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका स्वामी अनिवृत्तिकरण जीव है । निद्रादण्डकके अवक्तव्य बन्धका स्वामी देव है, ऐसा नहीं कहना चाहिए । शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । पुरुषवेदी जीवोंमें ओघके समान भंग है । नपुंसकवेदी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भंग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है । उनकी हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और क्षपक जीव स्वामी है । साता-वेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है । उनकी हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और क्षपक जीव स्वामी है । चार संज्वलनोंकी संख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है । संख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और क्षपक जीव स्वामी है ।

८७२. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवस्थित बन्धका भंग ओघके समान है । यहाँ अवक्तव्य बन्ध नहीं है । शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । मानमें तीन संज्वलन और मायामें दो संज्वलनोंके तीन पद कहने चाहिये । शेष भङ्ग ओघके समान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मायाए दोसंज० तिण्णि भाणिदव्वं। सेसं ओघं। लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अवत्तव्वं णत्थि। सेसाणं ओघं।

८७३. मदि०-सुद० धुविगाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। एवं विभंग०-अब्भवसि०-मिच्छा०। णवरि अब्भवसि०-मिच्छादि० मिच्छत्त० अवत्त० णत्थि।

८७४. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स०? अण्ण०। असंखेँज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० ओघं। मणुसगदिपंचगस्स तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स०? अण्ण०। अवत्त० कस्स०? अण्ण० पढमस० देवस्स वा णेरइगस्स वा। सादावे०-जस० असंखेँज्जगुणवड्ढि-हाणि० ओघं। सेसाणं णाणावरणभंगो। णिद्दा-पचलादीणं अवत्त० ओघं। सेसाणं णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० कस्स०? अण्ण० परियत्तमा०। णवरि देवगदि०४-तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० कस्स०? अण्ण०। एवं ओधिदंस-सम्मादि०-खइग०-वेदग०-उवसम०। णवरि वेदगे किंचि विसेसो। उवसमे वि असंखेँज्जगुणवड्ढि० कस्स०? अण्ण० उवसामगस्स परिवदमा० पढमस० देवस्स वा। असंखेँज्जगुणहाणि० कस्स०? अण्ण० उवसाम०

हैं। लोभ कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य बन्ध नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

८७३. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी तिर्यञ्चोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मिथ्यात्वका अवक्तव्यबन्ध नहीं है।

८७४. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका स्वामी ओघके समान है। मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर प्रथम समयवर्ती देव और नारकी जीव स्वामी है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका स्वामी ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। निद्रा और प्रचला आदिकके अवक्तव्यबन्धका स्वामी ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर परिवर्तमान जीव स्वामी है। इतनी विशेषता है कि देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि वेदकसम्यक्त्वमें कुछ विशेषता है। उपशमसम्यक्त्वमें भी असंख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कौन है? अन्यतर उपशमश्रेणीसे गिरकर प्रथम समयमें देव हुआ जीव स्वामी है। असंख्यातगुणहानिका स्वामी कौन है? अन्यतर उपशामक अनिवृत्तिकरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणियट्टि० । मणपज्जव-संजदे ओधिभंगो । णवरि खइगाणं पगदीणं असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० मणुसिभंगो ।

८७५. सामाइ०-छेदोव० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० अवत्त० णत्थि । सेसाणं मणपज्जवभंगो । परिहार० आहारकायजोगिभंगो । सुहुमसंप० पंचणा०-चदुदंस०-सादावे०-जस०-उच्चा०-पंचंत० संखेंज्जभागवड्ढि० कस्स० ? अण्णदरस्स उवसाम० परिवद० । संखेंज्जभागहा०-अवट्ठि० कस्स० ? अण्णद० उवसाम० वा खवगस्स वा । संजदासंजदेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं परिहार-भंगो । असंजदे धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं तिरि-क्खोघं । णवरि तित्थयरं ओघं । एवं किण्ण-णील-काउ० ।

८७६. चक्खुदं० तसपज्जत्तभंगो । किंचि विसेसो । तेऊए पंचणा० छदंसणा०-चदुसंजल०-भय०-दु०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । थीणगिद्धितिग-मिच्छत्त-बारसक० अवत्तव्वं ओघं । सेसं णाणावरणभंगो । सेसाणं पगदीणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०

जीव स्वामी है । मनःपर्ययज्ञानी और संयत जीवोंमें अवधिज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि क्षायिक प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका स्वामी मनुष्यिनियोंके समान है ।

८७५. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका अवक्तव्यबन्ध नहीं है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है । परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्तरायकी संख्यातभागवृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर गिरनेवाला उपशामक जीव स्वामी है ? संख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर उपशामक और क्षपक जीव स्वामी है । संयतासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंके समान है । असंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ! अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये ।

८७६. चक्षुदर्शनी जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । कुछ विशेषता है । पीतलेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण, चार संज्वलन, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और बारह कषायके अवक्तव्यबन्धका स्वामी ओघके समान है । शेष ज्ञानावरणके समान भङ्ग है । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । अवक्तव्यबन्धका स्वामी ओघके समान है । इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिये ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्वं ओघं । एवं पम्माए । सुक्काए खवगपगदीणं असंखेंज्जगुण-वड्डि-हाणि-अवत्तव्वं ओघं । सेसाणं तेउभंगो ।

८७७. सासणे धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० विभंगभंगो । सम्मामि० धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० कस्स० ? अण्ण० । अवत्त० कस्स० ? बंधगस्स पढमसम० ।

८७८. सण्णीसु पंचिंदियभंगो । णवरि सण्णि त्ति भाणिदव्वं । असण्णीसु धुविगाणं दोवड्डि-हाणि-अवट्ठि०. कस्स० ? अण्ण० । सेसाणं दोवड्डि-हाणि-अवट्ठिदं कस्स० ? अण्ण० । अवत्तव्वं कस्स० ? परिय० । मणुसगदिदुग-वेउव्विगछ०-उच्चागोद वज्जित्ता सेसाणं-संखेंज्जगु० कस्स० ? अण्ण० एइंदि० विगलिंदियस्स वा विगलिंदिएसु असण्णिपंचिंदिएसु उवव० पढमसम० । संखेंज्जगुणहाणी कस्स० ? अण्ण० विगलिंदि० असण्णिपंचिंदि० एइंदिएसु वा विगलिंदिएसु उवव० पढम० । णवरि एइंदि० आदाव-थावर-सुहुम-साधार० वड्ढी णत्थि ।

एवं सामित्तं समत्तं

शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य-बन्धका स्वामी ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग पीतलेश्यावाले जीवोंके समान है ।

८७७. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका स्वामी विभङ्गज्ञानी जीवोंके समान है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका स्वामी कौन है? अन्यतर जीव स्वामी है । अवक्तव्यबन्धका स्वामी कौन है? प्रथम समयमें बन्ध करनेवाला जीव स्वामी है ।

८७८. संज्ञी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि संज्ञी ऐसा कहना चाहिए । असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । शेष प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका स्वामी कौन है ? अन्यतर जीव स्वामी है । अवक्तव्य बन्धका स्वामी कौन है ? परिवर्तमान प्रथम समयवर्ती जीव स्वामी है । मनुष्यगतिद्विक, वैक्रियिक छह और उच्चगोत्रको छोड़कर शेष प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव मरकर जब विकलेन्द्रियों और असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है, तो ऐसा जीव पहले समयमें स्वामी है । संख्यातगुणहानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर विकलेन्द्रिय और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव जब मरकर एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है, तब उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें वह स्वामी है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियोंमें आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण प्रकृतिकी वृद्धि नहीं है ।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालो

८७९. कालाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० । ओघेण खवगपगदीणं [1]चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणिबंध० केवचि० ? जह० एग०, उक्क० बेसमयं । असंखेंज्जगुण[2]हाणि-अवत्तव्वं केव० ? एग०। अवट्ठिद० जह० एग०, उक्क० अंतो० । चदुण्णं आयुगाणं अवत्तव्वं एग० । असंखेंज्जभागहाणी जहण्णुक्कस्सेण अंतो० । सेसाणं तिण्णिवड्ढि-हाणी जह० एग०, उक्क० बेसमयं । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्तव्वं एग० । एवं ओघभंगो पंचिंदिय-तस०२-कायजोगि-पुरिस०-कोधादि०४-आभि०-सुद०-ओधि०-चक्खु०-अचक्खु० ओधिदं०-सुक्कले०-भवसि०-सम्मादि०-खइग०-उवसम०-सण्णि-आहारग त्ति । मणुस-तिण्णि-पंचमण०-पंचवचि०-ओरालिय० ओघं । णवरि असंखेंज्जगुणवड्ढी बे समयं ण लभदि । एगसमयं भवदि । मणपज्जवसंजद-सामाइ०-छेदोवट्ठावण० मणुसभंगो ।

८८०. अवगदवेदे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० सव्वत्थ संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी अवत्त० एग० । अवट्ठिदं ओघं । सादावे०-जस०-उच्चा० संखेंज्ज-भागवड्ढि-हाणी संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी अवत्तव्वं एग० । अवट्ठि०

काल

८७९. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे क्षपक प्रकृतियोंके चार वृद्धिबन्ध और तीन हानिबन्धोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । चारों आयुओंके अवक्तव्यबन्धका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । असंख्यात-भागहानिबन्धका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है । अवस्थितबन्धका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । इसी प्रकार ओघके समान पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, काययोगी, पुरुषवेदी, क्रोधादि चार कषाय-वाले, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी, शुक्ल-लेश्यावाले, भव्य, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए । मनुष्यत्रिक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी और औदारिक काययोगी जीवोंमें ओघके समान काल है । इतनी विशेषता है कि इन मार्गणाओंमें असंख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल उपलब्ध नहीं होता; किन्तु जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । मनःपर्ययज्ञानी, संयत सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें मनुष्योंके समान भङ्ग है ।

८८०. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और चार संज्वलनकी सर्वत्र संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थित बन्धका काल ओघके समान है । सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि संख्यात गुणहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका जघन्य और उत्कृष्ट काल

१ मूलप्रतौ चत्तारितिण्णिवड्ढिहाणि इति पाठः । २ मूलप्रतौ गुणवड्ढिहाणि० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बं० ओघं। सुहुमसंप० सव्वपग० संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी एगस०। अवट्ठि० ओघं।

८८१. णिरएसु धुविगाणं सेसाणं च सव्वे भंगा ओघं णिरयगदीणामभंगो। णवरि पगदिविसेसं णादव्वं। एवं याव अणाहारग त्ति णेदव्वं। णवरि कम्मइ०-अणाहा० धुविगाणं अवट्ठिदं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। देवगदिपंचगस्स अवट्ठिदं जह० एग०, उक्क० बेसमयं। सेसाणं थावरपगदीणं अवट्ठिदं जह० एग०, उक्क० तिण्णिसमयं। इत्थि०-पुरिस०-मणुसग०-चदुजादि-पंचसंठाण-ओरालि०अंगो०-छस्संघडण-मणुसाणु० दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेंज्ज०-उच्चागो० अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० एग०।

एवं कालं समत्तं।

अंतरं

८८२. अंतराणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अंतरं केव०? जह० एग०, उक्क० अंतो०। वेवड्ढि-हाणीबंध० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं०। असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अद्धपोग्गल०। णवरि असंखेंज्जगुणव० जह०

एक समय है। तथा अवस्थितबन्धका काल ओघके समान है। सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अवस्थितबन्धका काल ओघके समान है।

८८१. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली तथा शेष प्रकृतियोंके सब भङ्ग ओघके अनुसार नरकगति नामकर्मके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रकृतिविशेष जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके अवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। देवगति पञ्चकके अवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। शेष स्थावरप्रकृतियोंके अवस्थितबन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन समय है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके अवस्थित बन्धका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल दो समय है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा काल समाप्त हुआ।

अन्तर

८८२. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका अन्तरकाल कितना है? जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानिबन्धोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एग० । थीणगि०३–मिच्छ०-अणंताणु०४ असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू० । बेवड्ढि-हाणि-अवत्तव्वं णाणावरणभंगो । णिद्दा-पचला-भय०-दुगुं०–तेजइगादिणव तिण्णिवड्ढि-हाणि–अवट्ठि०–अवत्त० णाणावरणभंगो । सादावेदणीय-जसगि० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णु० अंतो० । असाद०-चदुणोकसाय-थिराथिर-सुभासुभ–अजस० तिण्णिवड्ढि–हाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्वं सादभंगो । अट्ठकसा० असंखें०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुव्वको० देसू० । बेवड्ढि-हाणि-अवत्तव्वं णाणावरणभंगो । इत्थिवे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० थीणगिद्धिभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० सादि० । पुरिसवेदं चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० सादिरे० । णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० असंखेंज्ज०वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादि० तिण्णिपलिदोवमाणि देसू० । बेवड्ढि-हाणि० णाणावरणभंगो । अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णिपलिदो० देसू० । णिरय-मणुस-देवायूणं असंखेंज्जभागहाणि-अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क०

जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छियासठ सागर है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभाग हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर है। पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित पदका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर है। नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। नरकायु, मनुष्यायु और देवायुके असंख्यातभाग हानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंतका० असं०। तिरिक्खायु० असंखेज्जभागहाणि-अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० सागरो०सदपुधत्तं। वेउव्वियछक्कं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अणंतका०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अणंतका० असंखे० परि०। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणुपु० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तेवट्ठिसागरो० सदं०[1]। बेवड्डि-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। मणुसगदि-मणुसाणु० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठिदं जह० अंतो०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेज्जा०। बेवड्डि० बेहाणि० णाणावरणभंगो। चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठिदं जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं। बेवड्डि-हाणी० णाणावरणभंगो। पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरोवमसदं। ओरालि० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठिदं जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदोवमाणि सादि०। बेवड्डि०-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० अणंतकालमसं०। आहारदुगं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०,

पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है। तिर्यञ्चायुकी असंख्यात भागहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण है। वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका एक सौ पचासी सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रस चतुष्कके तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ पचासी सागर है। औदारिकशरीरकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है। अवक्तव्य बन्धका

१ मूलप्रतौ साग० सत्त बे इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० अद्धपोग्गल०। समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णिपलिदो० देसू०। ओरालि०अंगो०-वज्जरि० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओरालियसरीरभंगो। अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। उज्जो० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० तिरिक्खगदिभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेवट्ठिसागरो०सदं। तित्थयरं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि०। उच्चागो० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० मणुसगदिभंगो। अवत्तव्वं तं चेव। असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि० णाणावरणभंगो। णीचागो० असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० सादि० तिण्णिपलिदोवमाणि देसू०। बेवड्ढि-हाणी० णाणावरणभंगो। अवत्तव्वं जहण्णेण अंतो०, उक्क० असंखेज्जा लोगा।

८८३. णिरएसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणु०४-इत्थि०-णवुंस०-दोगदि०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-[1]दोआणु०-उज्जो०-अप्पसत्थवि०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णीचुच्चागोदं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क०

जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी, तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रर्षभनाराचसंहननकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग औदारिक शरीरके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक सौ त्रेसठ सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। अवक्तव्य बन्धका वही भङ्ग है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नीचगोत्रकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है।

८८३. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, दो गति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, दो आनुपूर्वी, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय,

1 मूलप्रतौ दोअंगो० उज्जो० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तेत्तीसं साग० देसू० । सादादिबारस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह०[1] उक्क० अंतो० । पुरिस०-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्तव्वं इत्थिभंगो । दोआयु० दोपदा जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं देसू० । तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि० ज० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं । अवत्त० णत्थि अंतरं । एवं तीसु पुढवीसु तित्थक० । णवरि पढमाए अवत्त० णत्थि । छसु उवरिमासु मणुस०-मणुसाणुपुव्वीणं उच्चा० पुरिसभंगो । सेसाणं अप्पप्पणो अंतरं भाणिदव्वं । सत्तमाए णिरयोघं ।

८८४. तिरिक्खेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि० ओघं । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि समयं । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ असंखेंज्ज०वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । बेवड्ढि-हाणि-अवत्त० ओघं । सादादिबारस ओघं । इत्थिवे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० थीणगिद्धिभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । अपच्चक्खाणा०४-णवुंस०-पंचसंठा-

नीचगोत्र और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका कुछ कम तेतीस सागर है। साता आदि बारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यबन्धका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है। तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्यबन्धका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार तीन पृथिवियोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका अन्तर काल है। इतनी विशेषता है कि पहली पृथिवीमें अवक्तव्यपद नहीं है। आगेकी छह पृथिवियोंमें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंका अपना-अपना अन्तर काल कहना चाहिये। सातवीं पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है।

८८४. तिर्यञ्चोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यबन्धका अन्तर काल ओघके समान है। साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग स्त्यानगृद्धिके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरण चार, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप,

1 मूलप्रतौ जह० एग० उक्क० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओरालिअंगो०-छस्संघडण-आदाउज्जो०-अप्पसत्थवि०-दूभग-दुस्सर-अणादें० असंखेंज्ज-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं जह० एग०,उक्क० पुव्वकोडी देसू०। बेवड्ढि-हाणी० ओघं। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडि०। णवरि अपच्चक्खाणा० अवत्त० उक्क० अद्धपोग्ग० लपरि०। पुरिस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू०। तिण्णिआयुगाणं दोपदा जह० अंतो०, उक्क० पुव्वको-डितिभागं देसूणं। तिरिक्खायुगस्स दोपदा जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी० सादि०। वेउव्वियछक्क-मणुसगदि-मणुसाणु०-उच्चागो० ओघं। पंचिंदि० समचदु०-पर०-उस्सा०-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० पुरिसवेदभंगो। अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणं। तिरिक्खग०-चदुजादि-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-थावरादि०४-णीचागो० णवुंसगभंगो। णवरि तिरिक्खगदि-ओरालि०-तिरिक्खाणु०-णीचा० अवत्तव्वं ओघं।

८८५. पंचिंदि०तिरिक्ख०३ धुविगाणं बेवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिसम०। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदं जह०

उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-भागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्याना-वरण चारके अवक्तव्यबन्धका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। तीन आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। तिर्यञ्चगति, चार जाति औदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर आदि चार और नीचगोत्रका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, औदारिकशरीर, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ओघके समान है।

८८५. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू० पुव्वकोडिपुध०। अपच्चक्खाणा०४ णवुंसगभंगो। णवरि अवत्तव्वं जह०अंतो०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। सादादिबारस वेवड्ढि-हाणि-अवट्ठि-अवत्त० णिरयभंगो। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणि- जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडिपुध०। इत्थिवे० तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। पुरिसवे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलि० देसू०। णवुंसकवे०-तिण्णिगदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदा-उज्जो०-अप्पसत्थवि०-थावरादि०४-दूभग-दुस्सर-अणादें०-णीचागो०वेवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी० देसू०। संखे०गुणवड्ढि-हाणि० णाणावरणभंगो। चदुण्णं आयुगाणं तिरिक्खोघो। देवगदि०४-पंचिंदि०-समचदु० पर०-उस्सास-पसत्थवि०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो। अवत्त० णवुंसगभंगो।

८८६. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि० जह० एग०,

---

और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक कुछकम तीन पल्य है। अप्रत्याख्यानावरण चारका भङ्ग नपुंसक वेदके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बंधका जघन्य अन्तर अन्तर्मूहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। साता आदि बारह प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग नारकियोंके समान है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नपुंसकवेद, तीन गति, चार जाति, औदारिकशरीर, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपांग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर आदि चार, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका भंग ज्ञानावरणके समान है। चार आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। देवगतिचतुष्क, पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यबन्धका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है।

८८६. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकों में ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहुर्त । अवस्थितबन्धका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०,उक्क० तिण्णिसमयं । सेसाणं णिरयसादभंगो । एवं सव्वअपज्जत्ताणं ।

८८७. मणुस०३ पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि संखेँज्जगुणवड्ढि-हाणि० उक्क० अंतो० । खवियाणं असंखेँज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । मणुसअप० धुवियाणं तिरिक्खअपज्जत्तभंगो । णवरि अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । सेसाणं सादभंगो ।

८८८. देवेसु धुविगाणं णिरयभंगो । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग दुस्सर-अणादें०-णीचा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त०जह०अंतो०,उक्क०ऍक्कत्तीसं साग० देसू० । सादादि-बारस० णिरयभंगो । पुरिस०-समचदु०-वज्जरि०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदेँज्ज०-उच्चा० तिण्णिवड्ढि हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० ऍक्कत्तीसं सा० देसू० । दोआयु० णिरयभंगो । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणुपु०-उज्जोवं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठारस सागरोवमाणि सादि० । मणुसगदि-मणुसाणु० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० तिरिक्खगदिभंगो । एइंदिय-आदाव-थावर० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०,

---

जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंमें सातावेदनीयके समान है । इसी प्रकार सब अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिये ।

८८७. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । क्षपक प्रकृतियोंकी असंख्यात-गुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्च-अपर्याप्तोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग साता वेदनीयके समान है ।

८८८. देवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रऋषभनाराच संहनन, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । दो आयुओंका भङ्ग नारकियोंके समान है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है । मनुष्यगति, और मनुष्य-गत्यानुपूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अव-क्तव्यबन्धका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है । एकेन्द्रियजाति, आतप और स्थावरकी तीन वृद्धि, तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० बेसागरो० सादि०। पंचिंदि०-ओरालि०अंगो०-तस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो। अवत्त० एइंदियभंगो। तित्थय० धुवभंगो। एवं सव्वदेवाणं अप्पप्पणो अंतरं कादव्वं।

८८९. एइंदिएसु धुवियाणं एक्कवड्ढि-हाणी जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। एवं सव्वएइंदियाणं णादव्वं। णवरि तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-णीचा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेंज्जलोगा। बादरे कम्मट्ठिदी। पज्जत्ते संखेंज्जाणि वाससहस्साणि। सुहुमे असंखेंज्जा लोगा। मणुसगदिदुग-उच्चागो० एक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० असंखेंज्जा लोगा। बादरे कम्मट्ठिदी। पज्जत्ते संखेंज्जाणि वाससहस्साणि। सुहुमे असंखेंज्जा लोगा। सेसाणं अपज्जत्तभंगो। णवरि दोआयुगं पगदिअंतरं। विगलिंदि० दोआयु० पगदिअंतरं। सेसाणं मणुसअपज्जत्तभंगो।

८९०. पंचिंदिय०२ पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंतरा० बेवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्तव्वं जह० अंतो०, उक्क० कायट्ठिदी०। णवरि

हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर है। पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और त्रसकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य बन्धका भङ्ग एकेन्द्रियके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना अन्तर काल जान लेना चाहिये।

८८९. एकेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, और एक हानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इसी प्रकार सब एकेन्द्रियोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रके अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। बादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। मनुष्यगति द्विक और उच्चगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक प्रमाण है। बादर एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थिति प्रमाण है। पर्याप्तकोंमें संख्यात हजार वर्ष है। सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें असंख्यात लोक प्रमाण है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। इतनी विशेषता है कि दो आयुओंका भङ्ग प्रकृतिबन्धके अन्तरके समान है। विकलेन्द्रियोंमें दो आयुओंका भङ्ग प्रकृति बन्धके अन्तरके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है।

८९०. पञ्चेन्द्रियद्विकमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जगुणवड्ढि० जह० एग० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० देसू० । अवत्त० णाणावरणभंगो । सादा० जस० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । णिद्दा-पचला-भय०-दुगुं०-तेजा०-कम्मइगादिणव० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्वं च णाणावरणभंगो । असादादिदस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सादावे०भंगो । अट्ठक०दोवड्ढि-दोहाणि०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० । संखेज्जगुणवड्ढि-हा०-अवत्तव्वं० णाणावरणभंगो । इत्थिवे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० देसू० । पुरिस०४वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० दोहि पुव्वकोडीहि० । णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादिरे० तिण्णिपलिदो देसू० । तिण्णिआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरो०सदपुध० । मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरोवमसहस्सा० पुव्वकोडिपुधत्तं । पज्जत्तगे चदुण्णंआयुगाणं दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० सागरो०सदपु० । णिरयगदि-चदुजादि-णिरयाणु०-आदाव-थावरादि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसागरो०-

जघन्य अन्तर एक समय है । स्त्यानगृद्धि तीन मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर और कार्मणशरीरादि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । असाता आदि दस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान हैं । आठ कषायोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यबन्धका भंग ज्ञानावरणके समान है । स्त्रीवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है । पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितबन्धका भंग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर दो पूर्वकोटि अधिक दो छयासठ सागर है । नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । तीन आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण है । मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर है । पर्याप्तकोंमें चारों आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ सागर पृथक्त्व प्रमाण है । नरकगति, चार जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, आतप और स्थावर आदि चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सद० । तिरिक्खगदि-तिरिक्खाणु०-उज्जो० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेवट्ठिसाग०सदं० । मणुसग०-देवग०-वेउव्वि०-वेउव्वि०-अंगो०-वेआणु० तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं साग० सादि० । पंचिंदि०-पर०-उस्सास-तस०४ तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पंचासीदिसाग०सद० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं सा० सादि० । आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० कायट्ठिदी० । समचदु०-पसत्थ० सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० सादि० तिण्णिपलिदो० देसू० । तित्थय० ओघं । णीचा० णवुंसगभंगो । उच्चा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० देवगदिभंगो । असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि० सादि० तिण्णिपलिदो० देसू० । एवं तस-तसपज्जत्तगे । णवरि सगट्ठिदी भाणिदव्वा ।

८६१. तसअपज्जत्तगेसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० ।

समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एकसौ पचासी सागर है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और उद्योतकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर एकसौ त्रेसठ सागर है । मनुष्यगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआंगोपाङ्ग, और दो आनुपूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रसचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एकसौ पचासी सागर है । औदारिकशरीर, औदारिआंगोपांग और वज्रऋषभनाराच संहननकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कायस्थिति प्रमाण है । समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । तीर्थंकर प्रकृतिका भंग ओघके समान है । नीचगोत्रका भंग नपुंसकवेदके समान है । उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग देवगतिके समान है । असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । इसी प्रकार त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिये ।

८६१. त्रस अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि स० । सेसाणं तिरिक्खअपज्जत्तभंगो ।

८९२. पंचमण०-पंचवचि० पंचणा०अट्ठारस० तिण्णिवड्डि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। असंखेज्जगुणवड्डि हाणि० जहण्णु० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । पंचदंस०-मिच्छ०-बारसक०-भय दुगु०-तेजइगादिणव-आहारदुग-तित्थयर० तिण्णिवड्डि-हा०-अवट्ठि०-अवत्त० णाणावरणभंगो । सादा०-पुरिस०-जस०-उच्चा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखेज्जगुणवड्डि-हा० जह० उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग-चदुगदि-पंचजादि-ओरालि०-वेउव्वि०-छस्संठाण-दोअंगो०-छस्संघ०-चदुआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवड्डि-हा०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । चदुण्णं आयुगाणं दोपदा० णत्थि अंतरं । एवं ओरालि०-वेउव्वि०-आहार० । णवरि ओरालि० काईसु० विसेसो । परियत्तमाणिगाणं अवत्त० जहण्णु० अंतो० ।

८९३. कायजोईसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हा०-अवट्ठि० ओघं । असंखेज्जगुणवड्डि-हा० जह० उक्क० अंतो० । णवरि वड्डि० जह० एग० । अवत्त०

अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल चार समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान है।

८९२. पाँच मनोयोगी और पाँच वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल दो समय है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर आदि नौ, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर काल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, चारगति, पाँच जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, चार आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। चार आयुओंके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। इसीप्रकार औदारिक काययोगी, वैक्रियिक काययोगी और आहारककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगी जीवोंमें परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है।

८९३. काययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ओघके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णत्थि अंतरं। थीणगिद्धितिग-मिच्छ०-बारसक० तिण्णिवड्डि-हा० णाणावरणभंगो। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारिसम०। णिद्दा-पचला-भय-दु० ओरालि०-तेजइगादि-णव असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। बेवड्डि-हा० जह० एग०, उक्क० अणंतकालं असंखें०। अवत्त० णत्थि अंतरं। साद०-पुरिस०-जस० चत्तारिवड्डि-हा०-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। आसाद०-छण्णोकसाय-पंचजादि-छस्संठा०-ओरालियंगो०-छस्संघ०-पर०-उस्सा० आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस० तिण्णिवड्डि-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। णिरय-देवायुगस्स दोपदा० णत्थि अंतरं। तिरक्खायु० दोपदा० ज० अंतो०, उक्क० बावीसं वाससहस्सा० सादि०। मणुसायु० दो वि पदा ओघं। मणुसग०-मणुसाणु० ओघं। वेउव्वियछक्क-आहारदुग-तित्थयरं तिण्णि-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० संखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। बेवड्डि-हाणि-अवत्त० मणुसगदिभंगो। उच्चा० मणुसगदिभंगो। णवरि असंखेंज्जगुणवड्डि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असं-

और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर काल एक समय है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और बारह कषायकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर और तैजसशरीरादि नौ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। सातावेदनीय, पुरुषवेद और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असाता वेदनीय, छह नोकषाय, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस हजार वर्ष है। मनुष्यायुके दोनों ही पदोंका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग ओघके समान है। वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। उच्चगोत्रका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खेज्जगुणहा० जह० उक्क० अंतो० । एवं सव्वाणं असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी० ।

८६४. ओरालियमिस्सका० धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । देवगदि०४–तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हा० णाणावरणभंगो । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । दोआयु० दोपदा० अपज्जत्त-भंगो । सेसाणं परियत्तमाणियाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जहण्णु० अंतो० ।

८६५. वेउव्वियमि० वेउव्वियकायजोगिभंगो । णवरि परियत्तमाणियाणं अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । एवं आहारमि० । कम्मइ० सव्वाणं णत्थि अंतरं । अथवा वेउव्वि-यमि०-ओरालियमि०-कम्मइ० अवत्त० णत्थि अंतरं ।

८९६. इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० बेवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । संखेज्जगुणवड्ढि-हा० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडिपुध० । असंखेज्ज-गुणवड्ढि-हा० जह० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग० उक्क० तिण्णि समयं । थीणगिद्धि०३ मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुध० । णिद्दा-

---

समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब जीवोंके असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका अन्तर काल जानना चाहिये।

८६४. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। देवगति चार और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। दो आयुओंके दो पदोंका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

८६५. वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंका भङ्ग वैक्रियिककाययोगी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। कार्मणकाययोगी जीवोंमें सब कर्मोंका अन्तर काल नहीं है। अथवा वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी और कार्म-णकाययोगी जीवोंमें अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है।

८६६. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्त-रायकी दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो। अवत्त० णत्थि अंतरं। सादा०-जसगि० तिण्णि-वड्डि-हा० णाणावरणभंगो। असंखेंज्जगुणवड्डि-हा०-अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क अंतो०। असादादिदस० पंचिंदियभंगो। अट्ठकसा० बेवड्डि हा०-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी देसू०। संखेज्जगुणहाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं। इत्थि०-णवुंस० तिरिक्खग०—एइंदि०—पंचसंठा०—पंचसंघ०-तिरिक्खाणु०-आदाउज्जो०—अप्पसत्थ०-थावर-दूभग—दुस्सर—अणादें० णीचा० तिण्णिवड्डि—हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू०। णिरयायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू०। तिरिक्ख—मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० पलिदो० सदपुध०। [देवायु०] दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० अट्ठावण्णं पलिदो० पुव्वकोडिपुध०। मणुसगदिपंचगं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० [तिण्णि] पलिदो० देसू०। अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू०। णवरि ओरालियसरीर० पणवण्णं पलिदो० सादि०। वेउव्वियछ०-तिण्णिजादि—सुहुम—अपज्ज०—साधार० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं

बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तरसौ पल्य पृथक्त्व प्रमाण है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असाता आदि दस प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। आठ कषायोंकी दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्य पृथक्त्व प्रमाण है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है। नरकायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्व कोटिका कुछ कम त्रिभाग-प्रमाण है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तरमुहूर्त है। और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्य पृथक्त्व प्रमाण है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक अट्ठावन पल्य है। मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है। इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीरका साधिक पचपन पल्य है। वैक्रियिक छह, तीन जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पलिदो० सादि० । पुरिस०-उच्चा० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू०[1] । [पंचिंदि-समच०-पसत्थ०-तस०सुभग० सुस्सर०-आदे०] तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० [2]सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० देसू० । आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह०-एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० सगट्ठिदी० । पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्ते० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पणवण्णं पलिदो० सादि० । तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं ।

८६७. पुरिस० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० पंचिंदियपज्जत्तभंगो । णवरि अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि सम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सेसाणं सव्वाणं पंचिंदियपज्जत्तभंगो । यो विसेसो तं भणिस्सामो । पुरिसे अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० सादि० । णिरयायु० दोपदा० जह०-अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू० । देवायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० तेत्तीसं

तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचपन पल्य है । पुरुषवेद और उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है । पञ्चेन्द्रियजाति, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीनवृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचपन पल्य है । आहारकद्विककी तीनवृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर अपनी स्थिति प्रमाण है । परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक पचपन पल्य है । तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है ।

८६७. पुरुषवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन समय है । अवक्तव्यबन्धका अन्तर काल नहीं है । शेष सब प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक जीवोंके समान है । जो विशेषता है उसे कहते हैं—पुरुषवेदके अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर है । नरकायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है । देवायुके दो

१ मूलप्रतौ देसू० । सेसाणं ओघं । ओरालि०अंगो० तिण्णि० इति पाठः । २ मूलप्रतौ अवट्ठि० मणुसगदिभंगो इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साग० सादि० । मणुसगदिपंचगस्स तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादि० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० बेछावट्ठि सा० सादि० तिण्णि पलिदो० देसू० । उच्चा० चत्तारि-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० समचदु०भंगो । एसिं० असंखेंज्जगुणहाणि-बंधंतरं कायट्ठिदी० तेसिं तेंत्तीसं सा० सादि० पुव्वकोडी सादिरे० ।

८६८. णवुंस० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंजल०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणी० ओघं । असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणी० जह० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि सम० । थीणगिद्धि३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू० । बेवड्डि-हाणि-अवत्त० ओघं । णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णाणावरणभंगो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सादावे०-जसगि० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० ओघं । असंखेंज्ज-गुणवड्डि-हाणी० जह० उक्क० अंतो० । असादादिदस-अट्ठकसा०-तिण्णिआयु०-वेउ-व्वियछ०-मणुसगदिदुग०-आहारदुग० ओघं । देवायु० तिरिक्खभंगो । इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा-पंचसंघ०-उज्जो०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० असंखेंज्जभागवड्डि-

पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है । समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्त विहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छियासठ सागर और कुछ कम तीन पल्य है । उच्चगोत्रकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । अवक्तव्यबन्धका भङ्ग समचतुरस्र संस्थानके समान है । जिनके असंख्यात गुणहानिबन्धका अन्तर कायस्थिति प्रमाण है, उनके वह पूर्वकोटि अधिक साधिक तेतीस सागर है ।

८६८. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग ओघके समान है । असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है । स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ओघके समान है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है । सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि अवस्थित और अवक्तव्यबन्धका अन्तरकाल ओघके समान है । असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असातावेदनीय आदि दस, आठ कषाय, तीन आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है । देवायुका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू० । बेवड्ढि-हाणी० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू० । पुरि०-समच०-पसत्थ०-सुभग०-सुस्सर०-आदें० तिण्णिवड्ढि-हाणि० सादभं० । अवत्त० जह० अंतो, उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू० । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० इत्थिवेदभंगो । बेवड्ढि-हाणी-अवत्त० ओघं । चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ ऍक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । बेवड्ढि-हा० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सादभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी० देसू० । बेवड्ढि-हा० ओघं । ओरालि० अवत्त० ओघं । ओरालि०अंगो० अवत्त० जह०अंतो०,उक्क० तेंत्तीसं० सा० सादि०। वज्जरिस० देसू० । तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडि-तिभागं देसू०। उच्चा० मणुसगदिभंगो । णवरि असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी० इत्थि०भंगो ।

संहनन, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। पुरुषवेद, समचतुरस्र संस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यबन्धका भङ्ग ओघके समान है। चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। पञ्चेन्द्रियजाति, परघात, उच्छ्वास और त्रस चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। औदारिक शरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रऋषभनाराच संहननकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिकशरीरका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक आङ्गोपाङ्गके अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। तथा वज्रऋषभनाराच संहननका कुछ कम तेतीस सागर है। तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यबन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। उच्चगोत्रका भङ्ग मनुष्यगतिके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८९९. अवगदवे० सव्वपगदीणं वड्डि-हाणी० जह० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । एवं सुहुमसंपराइ० । णवरि अवट्ठि० जह० उक्क० एग० । अवत्त० णत्थि अंतरं ।

९००. कोधे पंचणाणावरणादिअट्ठारसण्णं तिण्णिवड्डि-हाणि०-असंखेंज्जगुणवड्डी जह० एग०, उक्क अंतो० । असंखेंज्जगुणहाणी[1] जह० [2]उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० चत्तारि समयं । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४ तिण्णिवड्डि-हाणि० अवट्ठि० णाणावरणभंगो । अवत्त० णत्थि अंतरं । चदुआयु-आहारदुगं मणजोगिभंगो । सेसाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । एसिं असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणि-अवट्ठि० तेसिं० णाणावरणभंगो । एवं माण-माया-लोभाणं । णवरि माणे कोधसंज० अवत्त० भाणिदव्वं । मायाए दो संज० अवत्त० । लोभे चदुसंज० अवत्त० भाणिदव्वं ।

९०१. मदि०-सुद० धुविगाणं तिरिक्खोघं । सादादिबारस०-इत्थि०-पुरिस० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ओघं सादभंगो । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । णवुंस०-पंचसंठा०-छस्संघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि०

८९९. अपगतवेदी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी वृद्धि और हानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यबन्धका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवस्थितबन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। अवक्तव्यबन्धका अन्तर काल नहीं है।

९००. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और असंख्यात गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चारकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्यबन्धका अन्तरकाल नहीं है। चार आयु और आहारकद्विकका भंग मनोयोगी जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्यबन्धका अन्तरकाल नहीं है। जिनका असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात-गुणहानि और अवस्थित बन्ध होता है, उनका ज्ञानावरणके समान भङ्ग है। इसी प्रकार मान, माया और लोभ कषायवाले जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि मानकषायवाले जीवोंमें क्रोध संज्वलनका अवक्तव्य कहना चाहिये। माया कषायवाले जीवोंमें दो संज्वलनोंका अवक्तव्य कहना चाहिये और लोभ कषायवाले जीवोंमें चार संज्वलनोंका अवक्तव्य कहना चाहिये।

९०१. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। साता आदि बारह प्रकृतियाँ, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ओघके अनुसार सातावेदनीयके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य

१ मूलप्रतौ-गुणवड्डिहाणी इति पाठः। २ मूलप्रतौ जह० एग० अवट्ठि० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जह० एग०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू० । बेवड्ढि-हाणी० णाणाव०भंगो । अवत्त०जह० अंतो०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । चदुआयु-वेउव्वियछ०-मणुसगदिदुग-उच्चा० ओघं । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० एँक्कत्तीसं सा० सादि० । बेवड्ढि-हाणी-अवत्त० ओघं । चदुजादि-आदाव-थावरादि०४ णवुंसगभंगो । पंचिंदि०-पर०-उस्सा०-तस०४ णवुंसगभंगो । ओरालि०-ओरालि०अंगो० एँक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । सेसं ओघं । समचदु०-[पसत्थ०-] सुभग-सुस्सर-आदें० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू० । सेसं सादभंगो । उज्जो० एँक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० एँक्कत्तीसं सा० सादि० । बेवड्ढि-हाणी० ओघं । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० एँक्कत्तीसं सा० सादि० । णीचा० एँक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसू० । बेवड्ढि-हाणि-अवत्त० ओघं । विभंगे भुजगारभंगो ।

९०२. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखेंज्जगुणवड्ढी जह० एग०,

और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, छह संहनन, अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । दो वृद्धि और दो हानियों का भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है । तिर्यञ्चगति और तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वीकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है । दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य बन्धका अन्तर ओघके समान है । चार जाति, आतप और स्थावर आदि चारका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है । पञ्चेन्द्रिय जाति, परघात, उच्छ्वास और त्रस चतुष्कका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है । औदारिकशरीर और औदारिक आङ्गोपाङ्गकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ तीन पल्य है । शेष भङ्ग ओघके समान है । समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । शेष भङ्ग सातावेदनीयके समान है । उद्योतकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है । दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग ओघके समान है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है । नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है । दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ओघके समान है । विभङ्गज्ञानी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंका भङ्ग भुजगार बन्धके समान है ।

९०२. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुण-

हाणी-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० छावट्ठि० साग० सादि० । सादावे०-जसगि० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णाणाव०भंगो । अवत्त० जह० उक्क० अंतो । असादादिदस० सादभंगो । अट्ठकसा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० मणुसभंगो । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । दोआयु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । मणुसगदिपंचगस्स तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० पुव्वकोडी सादि० । अवत्त० जह० पलिदो० सादि० । उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । देवगदि०४-आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । [तेजइगादि-धुवि० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णाणावरणभंगो ।] तित्थय० ओघं । एवं ओधिदं०-सम्मादि०-खइग० । णवरि खइग० [1]मणुसायु० दोपदा० जह० अंतो०, उक्क० छम्मासं० देसू० । देवायु० दोपदा जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडितिभागं देसू० । मणुसगदिपंचगस्स तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । अवत्त० णत्थि अंतरं । सेसाणं जम्हि छावट्ठि० तम्हि तेंत्तीसं सा० कादव्वं[2] ।

९०३. मणपज्ज० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णि-

वृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सबका उत्कृष्ट अन्तर साधिक छियासठ सागर है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असाता आदि दस प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। आठ कषायोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग मनुष्योंके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। दो आयुओंके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितबन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक पूर्वकोटि है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर साधिक एक पल्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। देवगति चतुष्क और आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर इन सबका साधिक तेतीस सागर है। तैजसशरीर आदि ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छह महीना है। देवायुके दो पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर एक पूर्वकोटिका कुछ कम त्रिभाग प्रमाण है। मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। शेष प्रकृतियोंका जहाँ छियासठ सागर अन्तर काल कहा है, वहाँ तेतीस सागर कहना चाहिये।

९०३. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद,

१ मूलप्रतौ मणुसाणु० दो-इति पाठः। २ मूलप्रतौ कादव्वं मणुसपज्जत्ते पंच-इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० । सादावे०-जस० णाणावरणभंगो । णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा० क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४ - सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्ढि०-हाणि०-अवट्ठि०-जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० पुव्वकोडी देसू० । असादा०-चदुणोक०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । देवायु० मणुसि०भंगो । एवं संजदा० ।

६०४. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंस०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हा० जह० एग०, उक्क० अंतो० । असंखेंज्जगुणवड्ढि-हा० जह० उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । णिद्दा-पचला तिण्णिसंज०-पुरिस०-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि० तेजा०-क०-समचदु० वेउव्वि०अंगो०—वण्ण०४—देवाणु०-अगु०४ पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम० । णवरि तिण्णिसंज०-पुरिस०

उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्ण चतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है । असातावेदनीय, चार नोकषाय, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । देवायुका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है । इसीप्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये ।

६०४. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र, और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है । निद्रा, प्रचला, तीन संज्वलन, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणी० णाणावर०भंगो। सादावे०-जस० णाणाव०भंगो। णवरि अवत्त० ज० उक्क० अंतो०। सेसाणं णिद्दादीणं अवत्त० णत्थि अंतरं। असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० ज० ए०, उक्क० अंतो०। अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। परिहारे धुविगाणं सेसाणं च भुजगारभंगो। एवं संजदासंजदे।

९०५. असंजदे धुविगाणं मदि०भंगो। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-इत्थि०-णवुंस०-पंचसंठा०-पंचसंघ०-अप्पसत्थ०-दूभग-दुस्सर-अणादें० णवुंसगभंगो। सादादिबारस मदि०भंगो। पुरिस०-समचदु०-पसत्थ०-सुभग-सुस्सर-आदें० अवत्त० ज० अंतो०, उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू०। सेसाणं सादभंगो। चदुआयु०-वेउव्वियछ०-मणुसगदिदुग-उच्चा० ओघं। तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-उज्जो०-णीचा० णवुंस०भंगो। ओरालि०-ओरालि०अंगो०-वज्जरिस० ओघं। णवरि वज्जरि० अवत्त० उक्क० तेंत्तीसं सा० देसू०। चदुजादिदंडओ पंचिंदियदंडओ णवुंसगभंगो। तित्थय० णवुंस०भंगो।

९०६. तिण्णिले० धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० ज० ए०, उ० चत्तारि सम०। णिरय-देवायु० दोपदा० णत्थि अंतरं। तिरिक्ख-

---

अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष निद्रा आदिकके अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। असाता आदि दस और आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और शेष प्रकृतियोंका भङ्ग भुजगारबन्धके समान है। इसी प्रकार संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

९०५. असंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। साताआदिक बारह प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर और आदेयके अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक और उच्चगोत्रका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, उद्योत और नीचगोत्रका भङ्ग नपुंसकवेदी जीवोंके समान है। औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और वज्रऋषभनाराचसंहननका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि वज्रऋषभनाराच संहननके अवक्तव्य बन्धका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। चार जातिदण्डक और पञ्चेन्द्रियदण्डकका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है।

९०६. तीन लेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसायु० णिरयभंगो। दोगदि-पंचिंदि०-ओरालि०-ओरालि०अंगो०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-आदाव-तस-थावरादिचदुयुगलं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बावीसं सत्तारस सत्त सागरो० सादि०। अवत्त० किण्णाए जह० सत्तारससा० सादि०, उक्क० बावीसं सा० सादि०। णीलाए जह० सत्त साग० सादि०, उक्क० सत्तारस साग० सादि०। काऊए जह० दसवस्ससहस्सा० सादि०, उक्क० सत्त-साग० सादि०। तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। सेसाणं णिरयोघं। णवरि णील-काऊए मणुसग०-मणु-साणु०-उच्चा० पुरिसभंगो[1]। काऊए० तित्थय० अवत्त० णत्थि अंतरं।

९०७. तेऊए धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणी० जह० एग० उक्क० अंतो०। अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसमयं। अट्ठक०-ओरालि०-आहारदुग-तित्थय० धुविगाण भंगो। णवरि अवत्त० णत्थि अंतरं। देवायु० दोपदा णत्थि अंतरं। देवगदि०४ तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसाग० सादि०। अवत्त० णत्थि अंतरं। थीण-

एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर चार समय है। नरकायु और देवायुके दो पदोंका अन्तरकाल नहीं है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग नारकियोंके समान है। दो गति, पञ्चेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, त्रस और स्थावर आदि चार युगलकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकआङ्गोपाङ्गकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे साधिक बाईस सागर, साधिक सत्तरह सागर और साधिक सात सागर है। अवक्तव्य बन्धका कृष्णलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सत्तरह सागर और उत्कृष्ट अन्तर साधिक बाईस सागर है। नीललेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक सात सागर और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सत्तरह सागर है। कापोतलेश्यामें जघन्य अन्तर साधिक दसहजार वर्ष और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि नील और कापोत लेश्यामें मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। कापोतलेश्यामें तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है।

९०७. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। आठ कषाय, औदारिक शरीर, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। देवायुके दो पदोंका अन्तर काल नहीं है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक

१ मूलप्रतौ–भंगो तित्थय० अवत्त० णत्थि अंतरं। काऊए० तेऊए इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गिद्धि०३दंडओ साददंडओ इत्थिदंडओ पुरिसदंडओ तिरिक्ख-मणुसायुग० सोधम्मभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि ओरालि०-ओरालि०अंगो० अट्ठक०भंगो। सेसाणं सहस्सारभंगो।

९०८. सुक्काए पंचणा०अट्ठारसण्णं चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। असंखेज्जगुणहाणी० जह० उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अंतरं। थीणगिद्धि०३ दंडओ णवगेवज्जवभंगो। णिद्दा-पचला-भय-दु०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-तस०४-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो०। अवत्त० णत्थि अतरं। साद०-जस० णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० जह० उक्क० अंतो०। असादादिदस-आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सादभंगो। णवरि आहारदुगं अवत्त० णत्थि अंतरं। अट्ठकसा०-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि० अंगो०-वज्जरिस०-मणुसाणु० सादभंगो। णवरि अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० बेसम०। अवत्त० णत्थि अंतरं। पुरिस०-उच्चा० अवत्त० जह० अंतो०, उक्क० ऍक्कत्तीसं सा० देसू०। सेसाणं णाणावरणभंगो। देवगदि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणी-अवट्ठि० जह० एग०,

दो सागर है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धित्रिकदण्डक, सातावेदनीयदण्डक, स्त्रीवेददण्डक, पुरुषवेददण्डक, तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुका भङ्ग सौधर्मकल्पके समान है। इसी-प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीर और औदारिक अङ्गोपाङ्गका भङ्ग आठ कषायके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रारकल्पके समान है।

९०८. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणादि अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। स्त्यानगृद्धित्रिकदण्डकका भङ्ग नौ ग्रैवेयिकके समान है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रिय जाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्ण चतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, त्रस चतुष्क, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असातावेदनीय आदि दस और आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य बन्धका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता कि आहारकद्विकके अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। आठ कषाय, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रऋषभनाराचसंहनन और मनुष्यगत्यानुपूर्वीका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है। पुरुषवेद और उच्चगोत्रके अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर साधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्क० तेंत्तीसं सा० सादि० । अवत्त० जह० अट्ठारस साग० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं साग० सादि० । सेसाणं भुजगारभंगो । भवसि० ओघं । अब्भवसि० मदि०भंगो ।

६०९. वेदगे धुविगाणं सादादिबारस० परिहारभंगो । अट्ठक०-दोआयु०-मणुसगदिपंचग-आहारदुगं ओधिभंगो । देवगदि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओधिभंगो । अवत्त० जह० पलिदो० सादि०, उक्क० तेंत्तीसं० सादि० । तित्थय० तेउभंगो ।

६१०. उवसम० पंचणा०अट्ठारस० चत्तारिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एग०, उक्क० अंतो० । णवरि असंखेंज्जगुणहाणी जह० उक्क० अंतो० । अवत्त० णत्थि अंतरं । णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्विय० अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४—पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि० तित्थय० णाणावरणभंगो । सादावे०-जस० अवत्त० जह० उक्क० अंतो० । सेसाणं णाणावरणभंगो । असादा०-अट्ठक०-चदुणोक०-आहारदुग-थिरादिपंच सादभंगो । मणुसगदिपंचग० तिण्णिवड्ढि-हाणी० जह० एग०, उक्क० अंतो० । अवट्ठि० जह० एग०, उ० बेसम० । अवत्त० णत्थि अतरं ।

६११. सासणे धुविगाणं वेदगभंगो । सेसाणं मणजोगिभंगो । सम्मामि० धुविगाणं

अठारह सागर है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। शेष भङ्ग भुजगारके समान है। भव्य जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। अभव्य जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है।

६०९. वेदक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और सातावेदनीय आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग परिहारविशुद्धि संयतोंके समान है। आठ कषाय, दो आयु, मनुष्यगति पञ्चक और आहारकद्विकका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। देवगति चतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर साधिक एक पल्य है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग पीतलेश्यावाले जीवोंके समान है।

६१०. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण आदि अठारह प्रकृतियोंकी चार वृद्धि, चार हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका अन्तरकाल नहीं है। निद्रा, प्रचला, भय जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्त विहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्ति के अवक्तव्य पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असातावेदनीय, आठ कषाय, चार नोकषाय, आहारकद्विक और स्थिर आदि पाँचका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि और तीन हानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो समय है। अवक्तव्य बन्धका अन्तर काल नहीं है।

६११. सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदगभंगो। सेसाणं तिण्णिवड्डि–हाणि–अवट्ठि० ज० ए०, उ० अंतो०। अवत्त० जह० एग०, उ० अंतो०। मिच्छ० मदि०भंगो। सण्णि० पंचिंदियपज्जत्तभंगो।

६१२. असण्णीसु धुविगाणं असंखेज्जभागवड्डि-हाणि० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेज्जभागवड्डि–हाणि० जह० एग०, उ० अणंतका०। एवं संखेज्जगुणवड्डि–हाणि०। णवरि जह० खुद्दा० समयू०। एसिं संखेज्जगुणवड्डि–हाणि० अत्थि तेसिं सव्वेसिं पि एवं चेव। अवट्ठि० जह० एग०, उ० बे–तिण्णि सम०। चदुआयु०–वेउव्वियछ०–मणुसग०-मणुसाणु०–उच्चा० तिरिक्खोघं। तिरिक्खग०–तिरिक्खाणु०–णीचा० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि–अवट्ठि० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेज्जभागवड्डि-हाणि० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० अंतो०, उ० असंखेज्जा लोगा। सेसाणं असंखेज्जभागवड्डि–हाणि–अवट्ठि० जह० एग०, उ० अंतो०। संखेज्जभागवड्डि–हाणी० णाणावरणभंगो। अवत्त० जह० उ० अंतो०।

६१३. अहारा० ओघं। णवरि यम्हि अणंतका० तम्हि अगुल० असंखेज्ज० कादव्वो। सेसं ओघं। अणाहार० कम्मइगभंगो। एवं अंतरं समत्तं।

समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भङ्ग है। संज्ञी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है।

६१२. असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात भागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि, और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। इसी प्रकार संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका अन्तर काल जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि इनका जघन्य अन्तर एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहण प्रमाण है। जिनकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि होती है, उन सबके भी इसी प्रकार जानना चाहिये। अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर दो-तीन समय है। चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्रका भङ्ग सामन्य तिर्यञ्चोंके समान है। तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित बन्धका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अवक्तव्य बन्धका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

६१३. आहारक जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ अनन्तकाल कहा है, वहाँ अङ्गुलका असंख्यातवाँ भाग प्रमाण अन्तर कहना चाहिये। शेष भङ्ग ओघके समान है। अनाहारक जीवोंका भङ्ग कार्मणकाययोगी जीवोंके समान है। इसप्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णाणाजीवेहि भंगविचओ

६१४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुवि०–ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०–सोलसक०-भय०-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४–अगु०-उप०-णिमि०-पंचंत० असंखेंज्जभागवड्ढि हाणि-अवट्ठि० बं० णियमा अत्थि। सेसाणि पदाणि भयणिज्जाणि। तिण्णिआयु० पदा० भयणिज्जाणि। वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। सेसाणं असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। एवं ओघभंगो कायजोगि-ओरालि०–ओरालि०मि० कम्मइ०-णवुंस०-कोधादि०४–मदि०-सुद०असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-आहार०-अणाहारग त्ति। णवरि ओरालियमि०-कम्मइ०-अणाहार० मिच्छ० अवत्त० देवगदिपंचग० अवट्ठि० भयणिज्जा। सेसाणं अवट्ठि० अवत्त० णियमा अत्थि।

९१५. तिरिक्खेसु ओघं। मणुसअपज्जत्त०–वेउव्वियमि०–आहार०–आहारमि०-अवगदवे०-सुहुमसंप०–उवसम०–सासण०–सम्मामि० सव्वपदा भयणिज्जा। एइंदिय-वणप्फदि-णियोद–बादरपज्जत्तापज्ज०–पुढवि०–आउ०-तेउ०-वाउ०–सव्वसुहुमबादरपुढवि-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय० तेसिं अपज्ज० सव्वपदा णियमा अत्थि।

नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय

६१४. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। तीन आयुओंके पद भजनीय हैं। वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवस्थित पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके और देवगति पञ्चकके अवस्थित पदके बन्धक जीव भजनीय हैं। शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव नियमसे हैं।

६१५. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। मनुष्य अपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारक काययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, सूक्ष्मसाम्परायसंयत, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब पद भजनीय हैं। एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद और इनके बादर पर्याप्त और अपर्याप्त, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, सब-सूक्ष्म, बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर वायुकायिक, बादर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति असंखेँज्ज-संखेँज्जरासीणं आयुगवज्जाणं अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। आयु० सव्वपदा भयणिज्जा।

एवं भंगविचयं समत्तं

भागाभागो

६१६. भागाभागाणु० दुवि०—ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेँज्जभागवड्ढि-हाणिबंधगा सव्वजीवाणं केवडियो भागो? असंखेँज्ज०भागो। तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवत्त०बंध० सव्वजी० अणंतभा०। अवट्ठि० सव्वजी० केव०? असंखेँ०भा०। पंचदंसणा०—मिच्छ०—बारसक०—भय०—दु०—ओरालि०—तेजइगादिणव० तिण्णिवड्ढि-हाणि—अवट्ठि०—अवत्त० णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा० असंखेँज्जभागवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्वजी० केव०? असंखेँज्जदिभा०। तिण्णिवड्ढि-हाणी० सव्व० केव०? अणंतभाग०। अवट्ठि० सव्व० केव०? असंखेँज्जभा०। असादा०-इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक०-दोगदि-पंचजादि०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-पर०-उस्सा०-अदाउज्जो०-दोविहा०—तसथावरादिणवयुगल—अजस०-णीचा० सादभंगो। चदु-

वनस्पतिकायिक, प्रत्येकशरीर और इनके अपर्याप्त जीवोंमें सब पदवाले जीव नियमसे हैं। नरकगतिसे लेकर संज्ञीतक शेष सब असंख्यात और संख्यात राशिवाली मार्गणाओंमें आयुकर्मको छोड़कर अवस्थित पदवाले जीव नियमसे हैं। शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। आयुकर्मके सब पदवाले जीव भजनीय हैं।

इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुआ।

भागाभाग

६१६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर और तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। तीन वृद्धि और तीन हानियोंके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? अनन्तवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, दो गति, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि नौ युगल, अयशः-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयु० अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेंज्जदिभागो । असंखेंज्जदिभागहाणी सव्व० केव० ? असंखेंज्जा भागा । वेउव्वियछ०-तित्थय तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेंज्जदिभागो । अवट्ठि० सव्व० केव० ? असंखेंज्जा भागा । आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हा०-अवत्त० सव्व० केव० ? संखेंज्जभागो । अवट्ठि० सव्व० केव० ? संखेंज्जा भागा । एवं तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुद०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-आहारग त्ति एदेसिं ओघेण साधेदूण अप्पप्पणो पगदी णादूण कादव्वं । एसिं असंखेंज्जजीविगा तेसिं ओघे देवगदि-भंगो । ए संखेंज्जजीविगा ते आहारसरीरभंगो । ए अणंतजीविगा ते असादभंगो । णवरि एइंदिय-वणप्फादि-णियोदाणं धुविगाणं असंखें० भागवड्ढि-हाणी केव० ? असंखेंज्जदिभागो । अवट्ठि० असंखेंज्जा भागा । सेसाणं एगवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेंज्जदि-भागो । अवट्ठि० सव्व० केव० ? असंखेंज्जा भागा ।

९१७. कम्मइग० परियत्तमणियाणि अवत्त० सव्व० केव० ? असंखेंज्जदिभागो । अवट्ठि० सव्व० केव० ? असंखेंज्जा भागा । एवं अणाहारा० ।

कीर्ति और नीचगोत्रका भंग सातावेदनीयके समान है। चार आयुओंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। वैक्रियिक छह और तीर्थंकर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्य-पदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुःदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक इनके ओघसे साधकर अपनी अपनी प्रकृतियोंको जानकर भागाभाग कहना चाहिये। जिन मार्गणाओंका प्रमाण असंख्यात है,उनमें ओघके अनुसार देवगतिके अनुसार भंग जानना चाहिये। तथा जिन मार्गणाओंका प्रमाण संख्यात है उनका ओघके अनुसार आहारक शरीरके समान भंग जानना चाहिये। और जिन मार्गणाओंका प्रमाण अनन्त है उनका असाता-वेदनीयके समान भंग जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यात बहु भाग प्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं।

९१७. कार्मणकाययोगी जीवोंमें परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९१८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंतरा० संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्व० केव० ? संखेंज्जदिभागो। अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? संखेंज्जा भागा। सादावे०-जसगि०-उच्चा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवत्त० संखेंज्जदिभागो। अवट्ठि० संखेंज्जा भागा। सुहुमसंप० सव्वाणं संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी संखेंज्जदिभागो। अवट्ठि० संखेंज्जा भागा।

एवं भागाभागं समत्तं

परिमाणं

९१९. परिमाणाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे०। ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केवडिया ? अणंता। बेवड्ढि-हाणी केव० ? असंखेंज्जा। असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० केव० ? संखेंज्जा। थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-अपच्चक्खाणा०४-ओरालिय० णाणाव०भंगो। णवरि अवत्त० असंखेंज्जा। णिद्दा-पचला-पच्चक्खाणा०४-भय०-दुगुं०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अणंता। बेवड्ढि-हाणि केव० ? असंखेंज्जा। अवत्त० संखेंज्जा। तिण्णिआयु० दोपदा० असंखेंज्जा। तिरिक्खायु० दोपदा अणंता।

९१८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी संख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं। सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिके बन्धक जीव संख्यातवें भाग प्रमाण हैं। अवस्थितपदके बन्धक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं।

इस प्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

परिमाण

९१९. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिक शरीरका भंग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, उपघात और निर्माणकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव अनन्त हैं। दो वृद्धि और दो हानि पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। तीन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वियछक्कं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० केव० ? असंखेज्जा। आहारदुगं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० केव० ? संखेज्जा। तित्थय तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० असंखेज्जा। अवत्त० संखेज्जा। सेसाणं असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० ? अणंता। सेसपदा केव० ? असंखेज्जा। एवं ओघभंगो तिरिक्खोघं कायजोगि-ओरालि०-ओरालियमि०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छादि०-असण्णि-आहारग त्ति। णवरि ओरालियमि० देवगदिपंचग० तिण्णिवड्ढि-हा०-अवट्ठि० केव० ? संखेज्जा। सेसाणं पि किंचि विसेसो णादव्वो।

६२०. णिरएसु मणुसायु० दोपदा तित्थय० अवत्त० संखेज्जा। सेसाणं सव्वपदा असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-देवाणं वेउवि०। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जा।

६२१. सव्वपंचिंदियतिरिक्ख० सव्वपगदीणं सव्वपदा असंखेज्जा। एवं मणुसअपज्जत्त-सव्वविगलिंदि०-सव्वपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्ते०-पंचिंदिय-तसअपज्जत्त-वेउव्वियमि०-विभंग०।

६२२. मणुसेसु पंचणा०-णवदंसणा०-मिच्छ०-सोलसक०-भय-दु०-तेजा०-क०-

आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। तिर्यञ्चायुके दो पदोंके बन्धक जीव अनन्त हैं। वैक्रियिक छहकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। आहारकद्विककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। तीर्थंकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें देवगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेषमें भी कुछ विशेषता जाननी चाहिये।

६२०. नारकियोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, देव, और वैक्रियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं।

६२१. सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, सब पृथवी कायिक, सब जलकायिक, सब अग्निकायिक, सब वायुकायिक, बादर वनस्पति कायिक प्रत्येकशरीर, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और विभङ्गज्ञानी जीवोंमें जानना चाहिये।

६२२. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण नौ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और पाँच अन्तरायकी तीन-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वण्ण०४–अगु०-उप०-णिमि०–पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० केव० ? असंखेंज्जा । सेसपदा संखेंज्जा । दोआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अवत्त० संखेंज्जा । सेसाणं सव्वपदा असंखेंज्जा । णवरि साद०-जस०-उच्चा० असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणी केव० ? संखेंज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु सव्वपदा संखेंज्जा । एवं एस भंगो आहार०-आहारमि०-अवगदवे०-मणपज्ज०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुम० ।

६२३. सव्वएइंदिय-वणप्फदि-णियोदेसु मणुसायुगस्स दोपदा असंखेंज्जा । सेसाणं सव्वपदा अणंता ।

६२४. पंचिंदिय-तस०२ पंचणा०–चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० असंखेंज्जगुणवड्डि-हाणी-अवत्त० केव० ? संखेंज्जा । सेसपदा असंखेंज्जा । णिद्दा-पचला-भय-दु०-पच्चक्खाणा०४–तेजइगादिणव-तित्थय० अवत्त० केव० ? संखेंज्जा । सेसपदा असंखेंज्जा । आहारदुगं ओघं । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वपदा केव० ? असंखेंज्जा । एवं पंचमण०-पंचवचि०–इत्थि०–पुरिस०–चक्खुदं०–सण्णि त्ति । णवरि इत्थि० तित्थय० सव्वपदा संखेंज्जा० ।

९२५. कम्मइग०–अणाहार० देवगदिपंचगस्स अवट्ठि० केवडिया ? संखेंज्जा । सेसाणि अवट्ठि०–अवत्त० केव० ? अणंता । मिच्छत्त० अवत्त० असंखेंज्जा ।

वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव कितने हैं ?. असंख्यात हैं । शेष पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं । दो आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । इतनी विशेषता है कि सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार यह भङ्ग आहारककाययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंके जानना चाहिये ।

६२३. सब एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक और निगोद जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव अनन्त हैं ।

६२४. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, प्रत्याख्यानावरण चार, तैजसशरीरादि नौ और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं । आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है । शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, चक्षुःदर्शनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदी जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं ।

६२५. कार्मण काययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकके अवस्थित पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष प्रकृतियोंके अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९२६. आभि०–सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० असंखेज्जा। असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० केव० ? संखेज्जा। णिद्दा-पचला-पच्चक्खाणा०४-भय-दु०-देवगदि-पंचिंदि०-वेउव्वि०-तेजा०-क०-समचदु०-वेउव्वि०अंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० असंखेज्जा। अवत्त० संखेज्जा। सादावे०-जस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० असंखेज्जा। असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी संखेज्जा। असादा०-अपच्चक्खाणा०४-चदुणोक०-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०अंगो० वज्जरिस०-मणुसाणु०-थिराथिर-सुभासुभ-अजस० तिण्णि-वड्ढिहाणि-अवट्ठि०-अवत्त० असंखेज्जा। मणुसायु० दोपदा आहारदुगं सव्वपदा संखेज्जा। देवायु० दोपदा असंखेज्जा। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०। संजदासंजदे तित्थय० सव्वपदा संखेज्जा। सेसा असंखेज्जा।

९२७. तेऊए पच्चक्खाणा०४-देवगदि-तित्थय० अवत्त० संखेज्जा। सेसा असंखेज्जा। मणुसायु० दोपदा० असंखेज्जा। आहारदुगं ओघं। सेसाणं सव्वपदा असंखेज्जा। एवं पम्माए वि। सुक्काए वि असादवे०-थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अट्ठक०-छण्णोक०-छस्संठा०-छस्संघ०-दोविहा०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० तिण्णिवड्ढि-

९२६. आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यात हैं। असातावेदनीय, अप्रत्याख्यानावरण चार, चार नोकषाय, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराच संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ और अयशःकीर्तिकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित, और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दो पदों और आहारकद्विकके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। देवायुके दो पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनी और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। संयतासंयत जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

९२७. पीत लेश्यावाले जीवोंमें प्रत्याख्यानावरण चार, देवगति और तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। मनुष्यायुके दोनों ही पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें असातावेदनीय, स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय, छह नो कषाय, छह संस्थान, छह संहनन, दो विहायोगति, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति, और नीच-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाणि–अवट्ठि०-अवत्त० असंखेंज्जा । सादावे०-जसगि०–उच्चा० ओधिभंगो । दोआयु०-आहारदुग० मणुसिभंगो । सेसाणं असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० संखेंज्जा । सेसपदा असंखेंज्जा ।

६२८. खइग० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज–पुरिस-उच्चा०–पंचंत-सादादिबारसओधिभंगो । दोआयु०-आहारदुगं सव्वपदा संखेंज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेंज्जा । सेसपदा असंखेंज्जा । वेदगे सादादिबारस-अपच्चक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० असंखेंज्जा । सेसाणं अवत्त० संखेंज्जा । सेसाणं सव्वपदा असंखेंज्जा । उवसम० पंचणा चदुदंस-चदुसंज-पुरिस-उच्चा० ओधिभंगो । सादावे०-जसगि० असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी-संखेंज्जा । सेसं असंखेंज्जा । असादादिदस०-अपच्चक्खाणा०४ सव्वपदा असंखेंज्जा । आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा संखेंज्जा । सेसाणं पगदीणं अवत्त० संखेंज्जा । सेसं० असंखेंज्जा । सासणे मणुसायु० दोपदा संखेंज्जा । सेसाणं सव्वेसिं सव्वपदा असंखेंज्जा । सम्मामि० सव्वेसिं सव्वपदा असंखेंज्जा ।

एवं परिमाणं समत्तं ।

गोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। दो आयु और आहारकद्विकका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

६२८. क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र पाँच अन्तराय और साता आदिक पाँच प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। दो आयु और आहारकद्विकके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें साता आदिक बारह, अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्यगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पुरुषवेद और उच्चगोत्रका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। सातावेदनीय और यशःकीर्तिकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। असातावेदनीय आदि दस और अप्रत्याख्यानावरण चारके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीव संख्यात हैं। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीव असंख्यात हैं।

इस प्रकार परिमाण समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खेत्तं

६२९. खेत्ताणुगमेण दुवि०—ओघे० आदे० । ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज-पंचंत० असंखेंज्ज-भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे । सेसपदा लोगस्स असंखेंज्जदिभागे । पंचदंस०-मिच्छ० बारसक०-भय-दुगुं०-तेजइगादिणव०णाणावरणभंगो । सादावे०-पुरिस०-जस०-उच्चा० असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलोगे । सेसपदा लोगस्स असंखेंज्जदिभागे । तिण्णिआयु०-वेउव्वियछ०-आहारदुग-तित्थय० सव्वपदा लोगस्स असंखें० । तिरिक्खायु० दोपदा केवडि खेंत्ते ? सव्वलोगे । सेसाणं असंखेंज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलोगे । दोवड्डि-हाणी लोगस्स असंखें० । एवं ओघभंगो तिरिक्खोघो कायजोगि-ओरालियका०-ओरालियमि०-णवुंस०-कोधादि०४-मदि०-सुद०-असंज०-अचक्खुदं०-तिण्णिले०-भवसि०-अब्भवसि०-मिच्छा०-असण्णि-आहारग त्ति । तं पि खेंत्तं ओघेण साधेदव्वं ।

६३०. एइंदिय-सुहुमएइंदिय-पज्जत्तापज्जत्ता पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ० तेसिं सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-वणप्फदि-णियोद० तेसिं च सुहुम पज्जत्तापज्जत्ताणं मणुसायु० दोपदा लोगस्स असंखें० । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वपदा सव्वलोगे । सव्वबादरेइंदिए

क्षेत्र

६२९. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीरादि नौ प्रकृतियोंका भंग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । तीन आयु, वैक्रियिक छह, आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिके सब पदोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । तिर्यञ्चायुके दो पदोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है । शेष प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । इसी प्रकार ओघके समान सामान्य तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिक काययोगी, औदारिक मिश्रकाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, तीन लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये । यह क्षेत्र भी ओघके समान साध लेना चाहिये ।

६३०. एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, उनके पर्याप्त और अपर्याप्त पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक तथा इनके सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद तथा इनके सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें मनुष्यायुके दो पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंका क्षेत्र सब लोक है । सब बादर एकेन्द्रिय जीवोंमें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धुविगाणं असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो० । सादादिदस० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो० । इत्थि०-पुरिस०-चदुआदि-पंचसंठा-ओरालि०अंगो० छस्संघ०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-बादर-सुभग-दोसर० आदेँज्ज०-जसगि० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० केवडि खेँत्ते ? लोग० संखेँज्ज० । णवुंस०-एइंदि०-हुंड०-पर०-उस्सा-०थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादेँ०-अजस० एँक्क-वड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो० । अवत्त० लोग० संखेँज्ज० । तिरिक्खायु० दोपदा लोग० संखेँज्ज० । मणुसायु० दोपदा ओघं । तिरिक्खग०-तिरिक्खाणु०-णीचा० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० लोग० असंखे० । मणुसगइदुग०-उच्चा० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० लो० असंखे० । एवं बादरवाउ०-बादरवाउ० अपज्ज० । णवरि तिरिक्खगइतिगं धुवं कादव्वं ।

९३१. बादरपुढवि०-आउ०-तेउ० तेसिं च अपज्ज० धुविगाणं एक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-सादादिदसण्णं एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो० । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्ज०-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादेँ०-अजस०-णीचा० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो० । अवत्त० लो०

ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । साता आदि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । स्त्रीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, आदेय और यशःकीर्तिकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । नपुंसकवेद, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड-संस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और अयशःकीर्तिकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । तिर्यञ्चायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका ओघके समान क्षेत्र है । तिर्यञ्चगति, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । मनुष्य-गतिद्विक, और उच्चगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । इसी प्रकार बादर वायुकायिक और बादर वायुकायिक अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि इनमें तिर्यञ्चगति त्रिकको ध्रुव करना चाहिये ।

९३१. बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक और बादर अग्निकायिक तथा इनके अपर्याप्तक जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका तथा साता आदि दस प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंका सब लोक क्षेत्र है । अवक्तव्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखे० । सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वपवदा लो० असंखे० । एवं बादरवणप्फदि-णियोद-पज्जत्त-अपज्जत्त बादरवणप्फदिपत्तेय० तेसिं अपज्जत्त० ।

९३२. कम्मइ० अणाहारगेसु देवगइपंचगस्स सव्वपदा लो असं० । सेसाणं सव्व-पगदीणं सव्वपदा सव्वलो० । सेसाणं णिरयादि याव सण्णि त्ति संखेज्ज-असंखेज्ज-जीविगाणं सव्वासिं पगदीणं सव्वपदा लोगस्स असंखेज्ज० ।

एवं खेत्तं समत्तं ।

फोसणं

९३३. फोससाणुगमेण दुवि०-ओघे० आदे० ।ओघे० पंचणा०-चदुदंसणा-चदुसंज०-पंचंत० असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०बंधगेहि केवडियं खेत्तं फोसिदं ? सव्वलो० । बेवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे० अट्ठचो० सव्वलोगो वा । असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० लो० असंखे० । थीणगिद्धि०३-अणंताणुबंधि०४ अवत्त० अट्ठचोद्दस० । सेसपदा णाणावरणभंगो । णिद्दा-पचला-पचक्खाणा०४-भय०-दु०-तेजइगादिणव० अवत्त० लोग० असंखेज्ज० । सेसपदा णाणावरणभंगो । सादावे० अवत्त० सव्वलो० । सेसपदा णाणा-

पदके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र है । इसी प्रकार बादर वनस्पतिकायिक, निगोद और इनके पर्याप्त, अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और इनके अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये ।

९३२. कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें देवगति पञ्चकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । शेष नरकगतिसे लेकर संज्ञी मार्गणातक संख्यात और असंख्यात जीव राशि-वाली मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

इसप्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ ।

स्पर्शन

९३३. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यातभाग हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें-भाग प्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भङ्ग ज्ञाना-वरणके समान है । निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीरादि नौ प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीयके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरणभंगो। असादादिदस० अवत्त० सव्वलो०। सेसं णाणावरणभंगो। मिच्छ० अवत्त० अट्ठ-बारह०। सेसं णाणावरणभंगो। अपच्चक्खाणा०४ अवत्त० छचोंद्द०। सेसाणं णाणावरणभंगो। इत्थिवे०-पंचिंदि० पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्सं०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेंज्ज०असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणि अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो०। दोवड्ढि-हाणी०लो० असंखें० अट्ठ-बारहचों०। पुरिसवे० दोवड्ढि-हाणी इत्थिवेदभंगो। सेसपदा सादभंगो। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-पज्जत्त-पत्ते०दूभ०-अणादें०[1]-णीचा० एँक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो०। दोवड्ढि-हाणि० अट्ठचोंद्द० सव्वलो०। णिरय-देवायु० दोपदा खेंत्त०। तिरिक्खायु० दोपदा सव्वलो०। मणुसायु० दोपदा अट्ठचोंद्द० सव्वलो०। णिरय-देवगदि-दोआणु० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० छचोंद्द०। अवत्त० खेंत्त०। मणुसग०-मणुसाणु०-आदाव० एँक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो०। दोवड्ढि-हाणि०-अट्ठचोंद्द०। बेइंदि०-तेइंदि०-चदुरिंदि० दोवड्ढि-हा० लोग०

सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असातावेदनीय आदि दस प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छःबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, पर्याप्त, प्रत्येक, दुर्भग अनादेय और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु और देवायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक है। नरकगति, देवगति और दो आनुपूर्वीकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छहबटे चौदह राजू है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, और आतपकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सब लोक है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम आठबटे चौदह राजू है। द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति और चतुरिन्द्रिय जातिकी दो वृद्धि

1 मूलप्रतौ अणादे० अज्जस० णीचा० इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असं० । सेसं णाणावरणभंगो । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगोवंग० सव्वपदा केव० फो० ? लो० असं०भा० बारहचोॅद्दस० देसू० । अवत्त० खेॅत्तं० । ओरालि० अवत्त० बारह० । सेसपदा तिरिक्खगदिभंगो । आहारदुगं खेॅत्तं० । उज्जो०-बादर०-जस० दोवड्ढि-हा० अट्ठ-तेरह० । सेसं सादभंगो । सुहुम-अपज्ज०-साधार० दोवड्ढि-हा० लो० असंखेॅज्ज० सव्वलो० । सेसं तिरिक्खगदिभंगो । तित्थय० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचोॅ० । अवत्त० खेॅत्त० । उच्चा० असंखेॅज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो० । बेवड्ढि-हाणि० अट्ठचोॅद्द० । असंखेॅज्जगुणवड्ढि-हाणि० खेॅत्तभंगो । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४–अचक्खुदं० भवसि०-आहारग त्ति ।

६३४. णेरइएसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि हाणि अवट्ठि० सादादिबारस-उज्जो० सव्वपदा छच्चोॅद्द० । दोआयु०-मणुसगदिदुग-तित्थय०-उच्चा० सव्वपदा खेॅत्त० । मिच्छत्त० अवत्त० पंचचोॅद्दस० । सेसाणं अवत्त० खेॅत्तभंगो । सेसाणं सव्वपदा छच्चोॅद्द० । एवं सव्वणेरइगाणं

और दो हानियोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन ज्ञानावरणके समान है। वैक्रियिक शरीर और वैक्रियिकआङ्गोपाङ्गके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदका भङ्ग क्षेत्रके समान है। औदा-रिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ-बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग तिर्यञ्चगतिके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। उच्चगोत्रकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अव-स्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात-गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार ओघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

६३४. नारकियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने तथा साताआदि बारह और उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु, मनुष्यगतिद्विक, तीर्थङ्कर और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पप्पणो फोसणं कादव्वं।

६३५. तिरिक्खेसु धुविगाणं एक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो०। बेवड्डि हा० लो० असं० सव्वलो०। सादादिऍकारह० ऍक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो०। बेवड्डि-हा० लो० असं० सव्वलो०। थीणगिद्धि०३-अट्ठक० अवत्त० खेत्त०। मिच्छ० अवत्त० सत्तचोॅद्द०। सेसपदा सादभंगो। इत्थिवे० बेवड्डि हा० दिवड्ढचोॅद्द०। सेसाणं सादभंगो। पुरिस०-समचदु०-दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेॅ०-उच्चा० दोवड्डि-हाणि लो० असं० छच्चोॅद्द०। सेसं इत्थिवेदभंगो। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंड०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय-साधार०-दूभग०-अणादेॅ०-णीचागो० दोवड्डि-हा० लो० असं० सव्वलो०। अवत्त० खेत्त०। सेसं सादभंगो। णिरय-देवायु०-वेउव्वियछ० ओघं। तिरिक्खायु० खेत्तभंगो। मणुसायुगस्स दोपदा लो० असंखे० सव्वलो०। मणुसगदिदुग-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव० दोवड्डि-हाणि० लोग० असंखेज्ज०। सेसं सादभंगो। उज्जोव-बादर-जसगित्ति० दोवड्डि-हाणी सत्तचोॅद्द०। णवरि

चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सब नारकियोंका अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिये।

६३५. तिर्यञ्चोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि ग्यारह प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन और आठ कषायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेदकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभागप्रमाण और कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि, दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नरकायु, देवायु और वैक्रियिक छहका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्चायुका भङ्ग क्षेत्रके समान है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगतिद्विक, तीन जाति, चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन और आतपकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष भङ्ग सातावेदनीयके समान है। उद्योत, बादर और यशःकीर्तिकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बादरे तेरह० । पंचंदि०–तस० दोवड्डि-हाणी० लो० असंखेज्ज० बारहचोॅद्द० । ओरालि० दोवड्डि-हाणि०सव्वेसिं अणंतजीवाणं असंखेॅज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो० । ओरालियसरीर० अवत्तव्वं खेॅत्त० ।

९३६. पंचिंदियतिरिक्ख०३ धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे० सव्वलो० । थीणगिद्धि०३–मिच्छ०–अट्ठक०-णवुंसग०–तिरिक्खग०-एइंदि०-ओरालि०-हुंड०–तिरिक्खाणु०–परघा०–उस्सा०–थावर-सुहुम–पज्जत्तापज्जत्त-पत्ते०-साधार० दूभग०-अणादेॅ०–अजस० णीचा० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे० सव्वलो० । अवत्त० खेॅत्त० । णवरि मिच्छ०-अजस० अवत्त० सत्तचोॅद्द० । इत्थिवे० अवत्त० खेॅत्त० । सेसं दिवड्ढचोॅद्दस० । सादादिदस० सव्वपदा लोगस्स असंखे० सव्वलो० । पुरिसवे०-णिरय-देवगदि-समचदु०-दोआणु० दोविहा०-सुभग-दोसर-आदेॅ०-उच्चा० अवत्त० खेॅत्त० । सेसपदा छच्चोॅद्द० । चदुआयु० खेॅत्त० । मणुसगदि-तिण्णिजादि-चदुसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव० सव्वपदा खेॅत्त० । पंचिंदि०-वेउव्विय०-वेउव्वियअंगो०-तस० अवत्त० खेॅत्त० । सेसपदा बारहचोॅद्द० । उज्जो०-जस० सव्वपदा सत्तचोॅद्द० । बादर० अवत्त०

कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि बादर प्रकृतिकी अपेक्षा कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रियजाति और त्रसकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। औदारिक शरीरकी दो वृद्धि और दो हानि तथा सब अनन्त जीवोंके असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भाग हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। औदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

९३६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, आठ कषाय, नपुंसक वेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिक शरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित-पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व और अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष स्पर्शन कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू है। साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, नरकगति, देवगति, समचतुरस्रसंस्थान, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन कुछ कम छहबटे चौदह राजू है। चार आयुओंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। मनुष्यगति, तीन जाति, चार संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन और आतपके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग और त्रसके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत और यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खेत्तभंगो । सेसपदा तेरहचोॅद्द० ।

६३७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे० सव्वलो० । सादादिदस० सव्वपदा लोग० असंखे० सव्वलो० । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-परघादुस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग-अणादे०-णीचा० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा लोग० असंखे० सव्वलो० । उज्जो०-जसगि० सव्वपदा सत्तचोॅद्द० । बादर० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा सत्तचोॅद्द० । अज० अवत्त० सत्तचो० । सेसं णवुंसगभंगो । सेसाणं सव्वपदा खेत्त० । एवं मणुसअपज्ज०-सव्वविगलिंदि०-पंचिंदिय-तसअपज्ज०-बादरपुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउकाइयपज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्त त्ति ।

६३८. मणुस०३ धुवियाणं असंखेॅज्जगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० खेत्त० । सेसाणं च पंचिंदियतिरिक्खभंगो । तसपगदीणं खेत्त० ।

६३९. देवेसु धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सादादिबारस०-मिच्छ०-उज्जोव० सव्वपदा अट्ठ-णवचोॅद्दसभागा वा देसूणा । इत्थिवे०-पुरिसवे०-तिरिक्खायु०-मणुसायु०-

---

किया है। बादर प्रकृतिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

६३७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सबलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, और यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग नपुंसकवेदके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

६३८. मनुष्यत्रिकमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान है। त्रस प्रकृतियोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है।

६३९. देवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने तथा साता आदि बारह, मिथ्यात्व और उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणुसगदि-पंचिंदिय०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-[1]आदाव०-दोवि-हा०-तस-सुभग-दोसर-आदेंज्ज०-तित्थय०-उच्चा० सव्वपदा अट्ठचोंद्द०। सेसपगदीणं अवत्त० अट्ठचों०। सेसपदा अट्ठ-णवचोंद्द०। एवं सव्वदेवाणं अप्पप्पणो फोसणं णेदव्वं।

६४०. एइंदिय-वणप्फदि-णियोद-पुढवीकाइय-आउ०-तेउ०-वाउ०-सव्वसुहुमाणं मणुसायु० तिरिक्खोघं। सेसाणं सव्वपगदीणं सव्वलो०। बादरएइंदियपज्जत्त-अपज्ज० धुविगाणं सादादीण दस० च सव्वपदा सव्वलो०। इत्थिवे०-पुरिस०-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेंज्ज० सव्वपदा लोगस्स संखेंज्जदिभागो। णवुंस०-एइंदि०-हुंडसं०-परघा०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्ज०-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादें० एँक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो०। अवत्त० लो० असंखें०। दोआयु०-मणुसगदिदुग-उच्चा० सव्वपदा खेंत्त०। तिरिक्खगदितिगं अवत्त० लोग० असंखें०। सेसपदा असादभंगो। बादर-उज्जो०-जसगि० सव्वपदा सत्तचोंद्द०। णवरि बादर-अवत्त० खेंत्त०। अजस० अवत्त० सत्तचोंद्द०। सेसपदा सव्वलो०। एवं

तिर्यञ्चायु, मनुष्यायु, मनुष्यगति, पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय, तीर्थंकर और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंके अपना-अपना स्पर्शन जानना चाहिये।

६४०. एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, निगोद, पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और सब सूक्ष्म जीवोंमें मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियाँ और साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, और आदेयके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके संख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, एकेन्द्रियजाति, हुण्ड-संस्थान, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग और अनादेयकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयु मनुष्यगतिद्विक और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चगतित्रिकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग असातावेदनीयके समान है। बादर, उद्योत और यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि बादरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार बादर-

१ मूलप्रतौ मणुसायु० आदाव-इति पाठः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बादरवाउका० बादरवाउकाइयअपज्जत्त। बादरपुढवी०-आउका०-तेउका० तेसिं बादर-अपज्जत्त बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्जत्त बादरएइंदियभंगो। णवरि जम्हि लोगस्स संखेज्जदिभागो तम्हि लोगस्स असंखेज्जदिभागो कादव्वो।

९४१. पंचिंदिय-तस०२ पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंतराइगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० खेत्तभंगो। थीणगिद्धि० ३ मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि० हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादें०-णीचा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। अवत्त० अट्ठ-चोद्द०। णवरि मिच्छ० अवत्त० अट्ठ-बारहचोद्दस०। णिद्दा-पचला-भय-दुगुं०-तेजइगा-दिणव-परघादुस्सा०-पज्जत्त-पत्ते० अवत्त० खेत्तभंगो। तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। सादावे० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। असंखे-ज्जगुणवड्ढि-हाणी खेत्त०। असादादिदस० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। णवरि अजसगि० अवत्त० अट्ठ-तेरह चोद्दस०। अपच्चक्खाणा०४ सव्वपदा णाणावरणभंगो। णवरि अवत्त० छचोद्द०। इत्थि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-

वायुकायिक और बादरवायुकायिक अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये। बादर पृथिवीकायिक, बादर जलकायिक और बादर अग्निकायिक तथा उनके बादर अपर्याप्त और बादरवनस्पतिकायिक प्रत्येक अपर्याप्त जीवोंका भङ्ग बादर एकेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ लोकका संख्यात-वाँ भाग कहा है, वहाँ लोकका असंख्यातवाँ भाग कहना चाहिये।

९४१. पञ्चेन्द्रियद्विक और त्रसद्विक जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि और तीन हानि पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीच गोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, भय, जुगुप्सा, तैजस शरीर आदि नौ, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और प्रत्येकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता-वेदनीयकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। असातावेदनीय आदि दसकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अयशःकीर्तिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अप्रत्याख्यानावरण चारके सब पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छस्संघ०-दोविहा०-पंचिंदि०-तस-सुभग-दोसर-आदें० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-बारह०। अवत्त० अट्ठ-चोद्दह०। पुरिसे तिण्णिवड्डि-हाणि-अवत्त० इत्थिभंगो। असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी० णाणावरणभंगो। णिरय-देवायुग-तिण्णिजादि-आहारदुगं खेत्त०। तिरिक्ख-मणुसायु० दोपदा अट्ठचोद्द०। वेउव्वियछ०-तित्थय० ओघं। मणुसगदि-मणुसाणु०-आदाव० सव्वपदा अट्ठचोद्द०। उज्जो० सव्वपदा अट्ठ-तेरह०। एवं बादर०। णवरि अवत्त० खेत्त०। सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लो० असंखे० सव्वलो०। अवत्त० खेत्त०। जसगि० असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी० खेत्त०। सेसपदा अट्ठ-तेरहचो०। [उच्चा० असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी खेत्त०। सेसपदा अट्ठचो०।] एवं पंचिंदियभंगो पंचमण०-पंचवचि०-चक्खुदं०-सण्णि त्ति।

६४२. ओरालियकायजोगीसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज० पंचंत० असंखेज्जभागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो०। दोवड्डि-हा० लोगस्स असंखे० सव्वलो०। असंखेज्जगुणवड्डि-

है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पाँच संस्थान, औदारिक आंगोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, पञ्चेन्द्रियजाति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। नरकायु, देवायु, तीन जाति और आहारकद्विकका भङ्ग क्षेत्रके समान है। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छह और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और आतपके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार बादर प्रकृतिकी अपेक्षा स्पर्शन जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। यशःकीर्तिकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उच्चगोत्रकी असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियोंके समान पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, चक्षुःदर्शनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये।

६४२. औदारिककाययोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हाणि-अवत्त० खेत्त०। पंचदंसणा०-बारसक०-भय-दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०-उप०-णिमि० अवत्त० खेत्तभंगो। सेसपदा० णाणावरणभंगो। मिच्छ० अवत्त० सत्तचोद्द०। सेसपदा० णाणावरणभंगो। सादावे० असंखेज्जभागवड्ढि०-हाणि०-अवट्ठि०-अवत्त० सव्वलो०। सेसपदा० णाणावरणभंगो। असादादिएँक्कारस० सादभंगो। इत्थिवे० दोवड्ढि-हाणी दिवड्ढचोद्द०। सेसाणं णाणावरणभंगो। पुरिस० दोवड्ढि-हाणी छचोद्द०। सेसपदा सादभंगो। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-परघादुस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग-अणादें०-णीचा० सव्वपदा असादभंगो। चादुआयु०–वेउव्वियछ०–मणुसगदिदुग–चदुजादि–पंचसंठा०–ओरालि०अंगो०-छस्संघ०–आदाउज्जो० दोविहा०–तस-बादर–सुभग–दोसर–आदें०–उच्चा० तिरिक्खोघं। आहारदुग० तित्थय० खेत्त०।

६४३. ओरालियमिस्से धुविगाणं दोवड्ढि–हा० लोग० असंखेज्ज० सव्वलोगो वा। सेसपदा सव्वलोगो। णवरि मिच्छ० अवत्त० खेत्तभंगो। देवगदिपंचगस्स तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० खेत्त०। सादादिएँक्कारसपगदीणं असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०

तवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। पाँच दर्शनावरण, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा औदारिक शरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्यके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असाता आदि ग्यारह प्रकृतियोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। स्त्रीवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। पुरुषवेदकी दो वृद्धि और दो हानियोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग आसातावेदनीयके समान है। चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगतिद्विक, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रके सब पदोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है।

६४३. औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और औदारिक शरीरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। देवगति पञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। साता आदि ग्यारह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । दोवड्ढि-हाणी लोगस्स असंखेज्जदिभागो सव्वलो० । णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय०-साधार०-दूभग०-अणादें०-णीचा० एक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो० । दोवड्ढि-हाणी लो० असंखे० सव्वलो० । अवत्त० खेत्त० । दोआयु० तिरिक्खोघं । इत्थि०-पुरिस०-मणुसगदिदुग-चदुजादि-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-आदाव-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेंज-उच्चा० दोवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे० । सेसं सव्वलो० । उज्जो०-जसगि०-बादर० दोवड्ढि-हाणि० सत्तचोंद्द० । सेसाणं सव्वलो० ।

९४४. वेउव्वियकायजोगीसु धुविगाणं तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-तेरह० । सादादिबारस०-उज्जोव० सव्वपदा अट्ठ-तेरहचों० । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-दूभग-अणादें०-णीचा० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-तेरह० । अवत्त० अट्ठचोंद्द० । णवरि मिच्छ० अवत्त० अट्ठ-बारह० । इत्थि०-

प्रकृतियोंकी असंख्यातभाग वृद्धि, असंख्यात भागहानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। दो आयुका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगतिद्विक, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, आतप, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उद्योत, यशःकीर्ति और बादरकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम सातबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

९४४. वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि बारह और उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रिय जाति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोविहा०-तस०-सुभग-दोसर-आदेँज० तिण्णिवड्ढि हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-बारह० । अवत्त० अट्ठचो० । दोआयु० दोपदा अट्ठचोंद्द० । मणुसग०-मणुसाणु०-आदा०-उच्चागो० सव्वपदा अट्ठचोंद्द० । एइंदि०-थावर-अवत्त० अट्ठचोंद्द० । सेसाणं पदा अट्ठ-णवचो० । तित्थय० अवत्त० खेँत्त० । सेसपदा अट्ठचोंद्द० ।

९४५. वेउव्विमि०-आहार०-आहारमि०-कम्मइ०-अवगदवे०-मणपज्जव०-संजद-सामाइ०-छेदो०-परिहार०-सुहुमसंप० खेँत्त० । णवरि कम्मइ० मिच्छत्त० अवत्त० एँकारह० ।

९४६. इत्थिवे० पंचणा-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० पंचिंदियभंगो। णवरि अवत्त० णत्थि । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-अणंताणुबंधि०४-णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादेँ०-णीचा० अवत्त० अट्ठचोंद्द० । सेसपदा अट्ठचोंद्द० सव्वलो० । णवरि मिच्छत्त० अवत्त० अट्ठ-णवचो० । णिद्दा-पचला-अट्ठकसाय-भय०-

पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वरों और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो आयुओंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। एकेन्द्रिय जाति और स्थावरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्कर प्रकृतिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

९४५. वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, अपगतवेदी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययोगी जीवोंमें मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

९४६. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ इनका अवक्तव्य पद नहीं है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार, नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रिय जाति, हुण्ड संस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ-कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिक शरीर, तैजस-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुगुं०-ओरालि०-तेजा०-क०-वण्ण०४-अगु०४-पज्जत्त-पत्तय०-णिमि० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा णाणावरणभंगो। णवरि ओरालिय० अवत्त० दिवड्ढचोद्द०। सादावे० असंखे-ज्जगुणवड्ढि-हा० खेत्त०। सेसं अट्ठचों० सव्वलो०। असादादिणव० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। इत्थि०-पुरिस०-मणुसगदि-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-मणुसाणु०-आदाव-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदे०-उच्चागो० सव्वपदा अट्ठचों०। [णवरि उच्चा असंखे०गुणवड्ढि-हाणि०खेत्त०।]दोआयुग०-तिण्णिजादि-आहारदुग-तित्थय० खेत्त०। दोआयु० दोपदा अट्ठचों०। वेउव्वियछ० ओघं। पंचिंदि०-तस-अप्पसत्थवि०-दुस्सर० तसभंगो। उज्जोव० सव्वपदा अट्ठ-णवचों०। बादर० तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-तेरह०। अवत्त० खेत्त०। सुहुम-अपज्ज०-साधार० अवत्त० खेत्तं०। सेसपदा लो० असंखे० [सव्वलोग०।] जसगि० उज्जोवभंगो। णवरि असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी सादभंगो। अजस० अवत्त० अट्ठ-णवचों०। सेसपदा सादभंगो। [एवं पुरिस०।]

शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु चतुष्क, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़-बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीयकी असंख्यातगुण वृद्धि और असंख्यात-गुणहानिके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असाता आदि नौ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, मनुष्यगति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गो-पाङ्ग, छह संहनन, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि उच्चगोत्रकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दो आयु, तीन जाति, आहारकद्विक और तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है। दो आयुयोंके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहका भङ्ग ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय जाति, त्रस, अप्रशस्त विहायो-गति और दुस्वरका भङ्ग त्रस जीवोंके समान है। उद्योतके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। बादर प्रकृतिकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। यशःकीर्तिका भङ्ग उद्योतके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुण-वृद्धि और असंख्यातगुणहानिका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। अयशःकीर्तिके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इसी प्रकार पुरुषवेदी जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अप्रत्याख्यानावरण चार और औदारिक शरीरके अवक्तव्य पदके बन्धक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवरि अपच्चक्खाणा०४–ओरालि० अवत्त० छच्चोद्द०। तित्थय० ओघं।

६४७. णवुंस० पंचणा०–चदुदंस०–चदुसंज०–पंचंत० असंखेज्जभागवड्ढि–हाणि-अवट्ठि० सव्वलो०। दोवड्ढि-हाणी लो० असंखे० सव्वलो०। असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी खेत्त०। अवत्त० णत्थि। पंचदंस०-मिच्छ०–बारसक०–भय०–दुगुं०–ओरालि०–तेजा०-क०-वण्ण०४–अगु०-उप०-णिमि० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा णाणावरणभंगो। णवरि मिच्छ० अवत्त० बारहचो०। ओरालि० अवत्त० छच्चोद्द०। सादावे० अवत्त० सव्वलो०। सेसपदा णाणावरणभंगो। असादादिदस० एक्कवड्ढि–हाणि–अवट्ठि०–अवत्त० सव्वलो०। बेवड्ढि-हाणि लोगस्स असंखे० सव्वलोगो वा। णवुंस०-तिरिक्खग०-एइंदि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-पर०-उस्सा०-थावर-सुहुम–पज्जत्तापज्जत्त-पत्तेय०–साधार०-दुभग-अणादे०-णीचा० दोवड्ढि-हाणी लोग० असं० सव्वलो०। सेसपदा सव्वलोगो। इत्थिवे० दोवड्ढि–हाणि० लोग० असं० सव्वलो०। सेसपदा सव्वलो०। चदुसंठा०-ओरालिअंगो०-छस्संघ० दोवड्ढि–हाणि० लोग० असं० छच्चोद्द०। सेसपदा सव्वलोगो०। पुरिस० समचदु०–दोविहा०–सुभग–दोसर–आदेज्ज० बेवड्ढि–हाणी० बारहचोद्द०। सेसपदा

जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तीर्थङ्करका भङ्ग ओघके समान है।

६४७. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यात गुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अवक्तव्यपद नहीं है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजस शरीर, कार्मण शरीर, वर्णचतुष्क, अगुरुलघु, उपघात और निर्माणके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। औदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सातावेदनीयके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। असाता आदि दसकी एक वृद्धि, एक हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, परघात उच्छ्वास, स्थावर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद की दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग और छह संहननकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेद, समचतुरस्रसंस्थान, दो विहायोगति, सुभग, दो स्वर और आदेयकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम बारहबटे चौदह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वलो० । चदुआयु०-वेउव्वियछ०-मणुसगदि-तिण्णिजादि-मणुसाणु०-आदाव०-उच्चा० तिरिक्खोघं । पंचिंदिय-तस० दोवड्डि-हाणी लोग० असंखे० बारहचो० । सेसं सव्वलो० । आहारदुगं तित्थय० खेत्तभंगो । उज्जोव० दोवड्डि-हाणी तेरहचो० । सेसं सादभंगो । एवं जसगित्ति-बादरणामं पि ।

६४८. कोधकसाइसु पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० एक्कवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो० । दोवड्डि-हाणी अट्ठचोद्द० सव्वलो० । असंखेज्जगुणवड्डि-हाणी खेत्त० । सेसं ओघं । माणे पंचणा०-चदुदंस०-तिण्णिसंज०-पंचंत०कोधभंगो । सेसं ओघं । मायाए पंचणा०-चदुदंसणा०-दोसंज०-पंचंत० कोधभंगो । सेसं ओघं । लोभे मूलोघं ।

६४९. मदि०-सुद० खवगपगदीणं असंखेज्जगुणवड्डि-हाणि-अवत्तव्ववज्जाणि सेसाणि [य सव्वपदा] ओघं । णवरि देवगदि-देवाणुपु० अवत्त० खेत्त० । सेसपदा पंचचोद्द० । ओरालिय० अवत्त० एक्कारह० । वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो० सव्वपदा एक्कारहचो० । अवत्त० खेत्त० ।

राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोकक्षेत्रका स्पर्शन किया है । चार आयु, वैक्रियिक छह, मनुष्यगति, तीन जाति, मनुष्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । पञ्चेन्द्रियजाति और त्रसकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग क्षेत्रके समान है । उद्योतकी दो वृद्धि और हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है । इसी प्रकार यशःकीर्ति और बादर नामकर्मकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये ।

६४८. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है । असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है । मान कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, तीन संज्वलन और पाँच अन्तरायके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्रोधकषायवाले जीवोंके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है । मायाकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, दो संज्वलन और पाँच अन्तरायके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्रोधकषायवाले जीवोंके समान है । शेष भङ्ग ओघके समान है । लोभकषायवाले जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग मूल ओघके समान है ।

६४९. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें क्षपक प्रकृतियोंकी असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यपदको छोड़कर तथा शेष सब प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि देवगति और देवगत्यानुपूर्वीके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । औदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकआङ्गोपाङ्गके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम ग्यारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५०. विभंगे धुविगाणं तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचों० सव्वलो०। सादादि दस० सव्वपदा लोग० असंखे० अट्ठचोद्द० सव्वलो०। मिच्छत्त० अवत्त० अट्ठ-बारह०। सेसपदा णाणावरणभंगो। इत्थि०-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०ओरालि०अंगो०छस्संघ०-दोविहा०-तस०-सुभग-दोसर आदे० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठ-बारहचों०। अवत्त० अट्ठचों०। णवुंस०-तिरिक्ख०-एइंदि०-ओरालि०-हुंडसं०-तिरिक्खाणु०-थावर-दूभग-अणादे०-णीचागो० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचों० सव्वलो०। अवत्त० अट्ठचोद्द०। णवरि ओरालि० अवत्त० खेत्त०। दोआयु०-तिण्णिजादि० खेत्त०। मणुसायु-मणुसगदि-मणुसाणु०-आदाव-उच्चा० सव्वपदा अट्ठचोद्द०। वेउव्वियछ० मदिभंगो। उज्जोव-जसगि० सव्वपदा अट्ठ-तेरहचों०। पर०-उस्सा०-पज्जत्त-पत्ते० सव्वपदा सादभंगो। णवरि अवत्त० खेत्त०। बादर० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा अट्ठ-तेरह०। सुहुम-अपज्जत्त-साधार० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग०-असंखे०-सव्वलो०। अवत्त०-खेत्त०। अजस० अवत्त० अट्ठ-तेरह०। सेसं सादभंगो।

९५०. विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित-पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। साता आदि दस प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, पञ्चेन्द्रियजाति, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम बारहबटे चौदहराजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद, तिर्यञ्चगति, एकेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, हुण्डसंस्थान, तिर्यञ्चगत्यानुपूर्वी, स्थावर, दुर्भग, अनादेय और नीचगोत्रकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि औदारिकशरीरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। दो आयु और तीन जातिके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। मनुष्यायु, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, आतप और उच्चगोत्रके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। वैक्रियिक छहके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है। उद्योत और यशःकीर्तिके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। परघात, उच्छ्वास, पर्याप्त और प्रत्येकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग सातावेदनीयके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। बादर प्रकृतिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरह बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अयशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू और कुछ कम तेरहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष भङ्ग सातावेदनीयके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५१. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-सादा०-जसगि०-उच्चा०-पंचंत० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचोद्द०। असंखेज्जगुणवड्डि-हाणि-अवत्त० खेत्त०। णवरि सादावे०-जसगि० अवत्त० अट्ठचोद्द०। णिद्दा-पचला-पच्चक्खाणा०४-भय-दुगुं०-पंचिंदि०-तेजा०-क०-समचदु०-वण्ण०४-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदेज्ज०-णिमि०-तित्थय० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचो०। अवत्त० खेत्त०। अपच्चक्खाणा०४-मणुसगादिपंच० तिण्णिवड्डि-हाणि-अवट्ठि० अट्ठचो०। अवत्त० छचोद्द०। असादादिदस-[अपज्ज०] सव्वपदा अट्ठचोद्द०। मणुसायु० दोपदा अट्ठचोद्द०। देवायु-आहारदुगं खेत्त०। देवगदि०४ सव्वपदा छचोद्द०। अवत्त० खेत्त०। एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगस०-उवसम०। णवरि खइगे उवसमे च अपच्चक्खाणा०४-मणुसगदिपंचग० अवत्त० खेत्त०। देवगदि०४ सव्वपदा खेत्त०।

९५२. संजदासंजदे देवायु०-तित्थय० सव्वपदा खेत्त०। सेसाणं सव्वपदा छचोद्द०।

---

९५१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, सातावेदनीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इतनी विशेषता है कि साता वेदनीय और यशःकीर्तिके अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। निद्रा, प्रचला, प्रत्याख्यानावरण चार, भय, जुगुप्सा, पञ्चेन्द्रियजाति, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्णचतुष्क, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थंकरकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्यगतिपञ्चककी तीन वृद्धि, तीन हानि, और अवस्थितपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यपदके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असातावेदनीय आदि दस और अपर्याप्तके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यायुके दो पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। देवायु और आहारकद्विकके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदक सम्यग्दृष्टि, और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चार और मनुष्यगतिपञ्चकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है तथा देवगतिचतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

९५२. संयतासंयत जीवोंमें देवायु और तीर्थङ्करके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंयतोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंजदे धुवियाणं मदिभंगो। थीणगिद्धि०३–अणंताणुबंधि०४ अवत्त० अट्ठचों०। सेसं ओघं।

६५३. किण्ण-णील-काउणं धुविगाणं ऍक्कवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलो०। बेवड्ढि-हाणी लोग० असंखे० सव्वलो०। णिरयगदि-वेउव्वि०-[वेउव्वि०] अंगो०-णिरयाणु० अवत्त० खेत्त०। सेसपदा छ-चत्तारि-बेचोॅद्दस०। णिरय-देवायु०-देवगदि-देवाणुपु०–तित्थय० खेत्त०। सेसं तिरिक्खोघं। णवरि इत्थि-पुरिस०-पंचिंदि०-पंचसंठा०-ओरालि०-अंगो०-छस्संघ०-उज्जो०-दोविहा०-तस-सुभग-दोसर-आदेॅज्ज० दोवड्ढि-हाणी० छ–चत्तारि-बेचोॅद्दस०। मिच्छत्त० अवत्त० पंच-चत्तारि-बेचोॅद्दस०।

६५४. तेऊए मिच्छत्त० सव्वपदा अट्ठ-णवचों०। एवं उज्जो०। अपच्चक्खाणा०४ अवत्त० दिवड्ढचोॅद्दस०। एवं ओरालि०। देवगदि०४ सव्वपदा दिवड्ढचोॅद्दस०। अवत्त० खेत्त०। सेसपदा सेसाणं पगदीणं सोधम्मभंगो।

६५५. पम्माए अपच्चक्खाणा०४ अवत्त० पंचचोॅद्द०। सेसपदा अट्ठचोॅद्द०।

स्त्यानगृद्धि तीन और अनन्तानुबन्धी चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंका भङ्ग ओघके समान है।

६५३. कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी एक वृद्धि, एक हानि और अवस्थित पदके बन्धक जीवोंने सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग और नरकगत्यानुपूर्वीके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम छह-बटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नरकायु, देवायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थङ्कर प्रकृतिके सब पदोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, पुरुष वेद, पञ्चेन्द्रिय जाति, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, सुभग, दो स्वर और आदेयकी दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीवोंने कुछ कम छहबटे चौदह राजू, कुछ कम चार बटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने क्रमसे कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू, कुछ कम चारबटे चौदह राजू और कुछ कम दोबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

६५४. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्वके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ बटे चौदह राजू और कुछ कम नौबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार उद्योतकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये। अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार औदारिकशरीरकी मुख्यतासे स्पर्शन जानना चाहिये। देवगति चतुष्कके सब पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम डेढ़बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदोंके बन्धक जीवोंका स्पर्शन सौधर्म कल्पके समान है।

६५५. पद्मलेश्यावाले जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चारके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवगदि०४ तिण्णिवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० पंचचोद्दस० । अवत्त० खेत्त० । ओरालि०-ओरालि०अंगो० अवत्त० पंचचो० । सेसपदा अट्ठचो० । सेसाणं सव्वपगदीणं सहस्सारभंगो ।

९५६. सुक्काए अपच्चक्खाणा०४-मणुसग०-ओरालि०-ओरालि०-अंगो०- ......
....

अप्पाबहुअं

९५७....पर०-उस्सा०-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० सव्वत्थोवा संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तुल्ला । अवत्त० संखेंज्जगुणा । सेसपदा धुवभंगो । णवुंस०-तिण्णिगदि-चदुजादि-ओरालि०-पंचसंठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णि-आणु०-आदाउज्जो०-अप्पसत्थ०-थावर०४-दूभग-दुस्सर-अणादें० सव्वत्थोवा संखेंज्जगु-णवड्ढि०-हाणी दो वि तुल्ला । अवत्त० असंखेंज्जगु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्ज० । सेसाणं धुवभंगो । चदुआयु० ओघं ।

९५८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सव्वत्थोवा संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि०

कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठ-बटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । देवगतिचतुष्ककी तीन वृद्धि, तीन हानि और अव-स्थित पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है । औदारिकशरीर और औदारिकआङ्गोपाङ्गके अव-क्तव्य पदके बन्धक जीवोंने कुछ कम पाँचबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदोंके बन्धक जीवोंने कुछ कम आठबटे चौदह राजू क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष सब प्रकृतियोंका भङ्ग सहस्रार कल्पके समान है ।

९५६. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें अप्रत्याख्यानावरण चार, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदा-रिकआङ्गोपाङ्ग...............

अल्पबहुत्व

९५७......परघात, उच्छ्वास, प्रशस्त विहायोगति, त्रस चतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण-हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । नपुंसकवेद, तीन गति, चार जाति, औदारिक शरीर, पाँच संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, अप्रशस्त विहायो-गति, स्थावर चतुष्क, दुर्भग, दुस्वर और अनादेयकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात-गुणे हैं । इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । शेष पदोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । चार आयुका भङ्ग ओघके समान है ।

९५८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यात भागवृद्धि, और संख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यात भाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । सादादीणं परियत्तमाणियाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो ।

६५६. मणुसेसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्त० । असंखेंज्जगुणवड्ढी संखेंज्जगु० । असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्जगु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्जगु० । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । पंचदंस०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दु०-ओरालि०-तेजइगादिणव० सव्वत्थोवा अवत्त० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु० । सेसपदा णाणावरणभंगो । सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा० सव्वत्थो० असंखेंज्जगुणवड्ढी । असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि सरिसाणि असंखेंज्जगुणाणि । अवत्त० संखेंज्जगु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्ज० । सेसपदा णाणावरणभंगो । वेउव्वियछक्क-आहारदुगं ओघं आहारसरीरभंगो । सेसाणं असादादीणं सव्वपगदीणं णिरयभंगो । णवरि तित्थय०...सव्वत्थो० संखेंज्जगुणं कादव्वं । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तं चेव । णवरि संखेंज्जं कादव्वं । मणुसअपज्जत्तगेसु धुविगाणं सव्वत्थो० संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि

हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। साता आदि परिवर्तनमान प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चोंके समान है।

६५६. मनुष्योंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुण हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर और तैजसशरीर आदि नौके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति, और उच्चगोत्रकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुण हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंके बन्धक जीवोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। वैक्रियिक छह और आहारकद्विकका भङ्ग ओघमें कहे गये आहारकशरीरके समान है। शेष असाता आदि सब प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीर्थङ्करप्रकृति······सबसे स्तोक हैं। इसके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तु० संखेंज्ज० । असंखेज्ज०वड्ढि-हाणी दो वि तु० संखेज्ज० । अवट्ठि० असंखेज्जगु० । सेसाणं पगदीणं मणुसोघभंगो । देवाणं णिरयभंगो । णवरि विसेसो णादव्वो ।

९६०. सव्वएइंदिय-पंचकायाणं धुविगाणं सव्वत्थोवा असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सव्वत्थो० अवत्त० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखें० । दो आयु० ओघं ।

९६१. सव्वविगलिंदिएसु धुविगाणं सव्वत्थोवा संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि तु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि तु० संखेंज्जगु० । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । सेसाणं सव्वत्थोवा अवत्त० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि संखेंज्जगु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि तु० संखेंज्ज० । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । आयु० मणुसअपज्जत्तभंगो ।

९६२. पंचिंदिएसु पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त० । असंखेंज्जगुणवड्ढी संखेंज्जगु० । असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्ज० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी

स्तोक हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों हीतुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य मनुष्योंके समान है । देवोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि यहाँ जो विशेष हो वह जान लेना चाहिये ।

९६०. सब एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । दो आयुओंका भङ्ग ओघके समान है ।

९६१. सब विकलेन्द्रियोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष सब प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । आयुकर्मका भङ्ग मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान है ।

९६२. पञ्चेन्द्रियोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सब स्तोक हैं । इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो वि० संखेंज्जगु० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । पंचदंसणा०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय-दु०-तेजइगादिणव० सव्वत्थो० अवत्त० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्जगु० । अवट्ठि० असंखेंज्ज० । सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चागो० सव्वत्थोवा असंखेंज्जगुणवड्ढी । असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्ज० । अवत्त० असंखेंज्जगु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी संखेंज्जगु० । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । असादावे०-छण्णोक०-दोगदि-पंचजादि-[1]ओरालिय०-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-आदा-उज्जो०-दोविहा०-पर०-उस्सास०-तस-थावरादिणवयुगल-अजस०-णीचा० सव्वत्थो० संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० । अवत्त० असंखेंज्जगु० । सेसं णिद्दाए भंगो । चदुआयु० णिरय-देवगदि-वेउव्वि०-वेउव्वि०अंगो०-दोआणु०-आहारदुग-तित्थयरं च ओघं ।

९६३. पंचिंदियपज्जत्तगे पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त० । असंखेंज्जगुणवड्ढी संखेंज्जगु० । असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु० । संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो

असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि इन दोनों ही पदोंके बन्धक जीव तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभाग हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । असातावेदनीय, छह नोकषाय, दो गति, पाँच जाति, औदारिकशरीर, छह संस्थान, औदारिकआङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, परघात, उच्छ्वास, त्रस, स्थावर आदि नौ युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इससे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष पदोंका भङ्ग निद्राके समान है । चार आयु, नरकगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, दो आनुपूर्वी, आहारकद्विक और तीर्थङ्करप्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है ।

९६३. पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि

1 मूलप्रतौ जादि संखेज्जगु० ओरा० इति पाठः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वि तु० असंखेज्जगु० । संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्जगु० । असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि तु० संखेज्जगु० । अवट्ठि० असंखेज्जगु० । पंचदंसणा०-मिच्छ०-बारस०क०-भय-दु०-तेजइगादिणव० पंचिंदियओघो। असादावे०-छण्णोक०-तिण्णिगदि-दोजादि-ओरालि०-वेउव्वि०-छस्संठा-दोअंगो०-छस्संघ० तिण्णिआणु०-पर०-उस्सा०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावर-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-थिरादिपंचयुगल०-अजस०-णीचा०सव्वत्थो० संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तु० । अवत्त० संखेज्जगु० । उवरि णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा० सव्वत्थो० असंखेज्जगुणवड्ढी । हाणी असंखेज्जगु० । संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तु० असंखेज्जगु० । अवत्त० संखेज्जगु० । उवरि णिद्दाए भंगो । णिरयगदि-तिण्णिजादि-णिरयाणु०-सुहुम-अपज्जत्त-साधारण० सव्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी । अवत्त० असंखेज्जगु० । उवरि णिद्दाए भंगो । चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं । पंचिंदियअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो । तसकाइय० पंचिंदियभंगो । पज्जत्ता पज्जत्तभंगो । अपज्जत्त० अपज्जत्तभंगो ।

९६४. पंचमण०-तिण्णिवचिजो० पंचणा०अट्ठारस० पंचिंदियपज्जत्तभंगो । चदुदंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय०-दुगुं०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्विय०-तेजा०-क०-

और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यात भागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यात भागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौका भङ्ग पञ्चेन्द्रियोंके ओघके समान है । असातावेदनीय, छह नोकषाय, तीन गति, दो जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, बादर पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इससे आगेका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रकी असंख्यात गुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं । इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है । नरकगति, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि, और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है । चार आयु, आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है । पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । त्रसकायिक जीवोंमें पञ्चेन्द्रियोंके समान भङ्ग है । इनके पर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । इनके अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग हैं ।

९६४. पाँच मनोयोगी और तीन वचनयोगी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरणादि अठारह प्रकृतियोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान भङ्ग है । चार दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेउव्वियअंगो०-वण्ण०४-देवाणु०-अगु०४-बादर-पज्जत्त-पत्तेय०-णिमि० सव्वत्थो० अवत्त०। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० तु० असंखेज्ज०। उवरिमपदा णाणावरणभंगो। सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा० पंचिंदियपज्जत्तभंगो। असादा०-छण्णोक०-तिण्णिगदि-पंचजादि-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-दोविहायगदि-तस-थावर-सुहुम०-अपज्जत्त०-साधार०-थिरादिपंचयुगल-अजस०-णीचा० सव्वत्थो० संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि०। अवत्त० संखेज्जगु०। उवरि णिद्दाए भंगो। चदुआयु०-आहारदुग-तित्थय० ओघं। वचिजोगि-असच्चमोसवचि० तसपज्जत्तभंगो। ओरालियमि० तिरिक्खोघं। णवरि देवगदिपंचगस्स सव्वत्थो० संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० तु०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० तु० संखेज्जगु०। असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० तु० संखेज्जगु०। अवट्ठि० संखेज्जगु०।

९६५. वेउव्वि०-वेउव्वियमिस्सका० देवोघं। णवरि वेउव्वियका० तित्थय० णिरयोघं। आहार०-आहारमिस्सका० सव्वट्ठभंगो। कम्मइगका० सव्वत्थो० मिच्छत्त० अवत्त०। अवट्ठिद० अणंतगु०। सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सव्वत्थो० अवत्त०। अवट्ठि० असंखेज्जगु०। एवं अणाहारगे०।

जुगुप्सा, देवगति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, वैक्रियिकआङ्गोपाङ्ग, वर्णचतुष्क, देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक और निर्माणके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि, और संख्यातगुणहानिपदके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। असातावेदनीय, छह नोकषाय, तीन गति, पाँच जाति, छह संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, सूक्ष्म अपर्याप्त, साधारण, स्थिर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग निद्रा प्रकृतिके समान है। चार आयु, आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है। वचनयोगी और असत्यमृषा वचनयोगी जीवोंमें त्रसपर्याप्त जीवोंके समान भङ्ग है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि देवगतिपञ्चककी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

९६५. वैक्रियिककाययोगी और वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है। आहारककाययोगी और आहारक मिश्रकाययोगी जीवोंमें सर्वार्थसिद्धिके देवोंके समान भङ्ग है। कार्मणकाययोगी जीवोंमें मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। शेष परिवर्तमान प्रकृतियोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६६. इत्थिवे० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थो० असंखेज्जगुणवड्ढी। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० तु० असं०गु०। सेसपदा पंचिंदियपज्जत्तभंगो। पंचदंसणा०-मिच्छत्त०-बारसक०-भय०-दुगुं०-तेजइगादिणव० पंचिंदियपज्जत्तभंगो। सादावे०-पुरिस०-जसगि०-उच्चा० पंचिंदियपज्जत्तभंगो। असादा०-छण्णोकसा०-तिण्णिगदि-दोजादि-ओरालि०-वेउव्वि०-छस्संठा-दोअंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदाउज्जो०-दोविहा०-तस-थावरादिपंचयुगल-अजस०णीचा० सव्वत्थो० संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० तु०। अवत्त० संखेज्जगु०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० तु० संखेज्ज०। असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी० दो वि० तु० संखेज्जगु०। अवट्ठि० असंखेज्जगु०। चदुआयु० ओघं। णिरयगदि-तिण्णिजादि-णिरयाणु०-सुहुम अपज्ज०-साधार० सव्वत्थो० संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि०। अवत्त० असंखेज्जगु०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्जगु०। असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्जगु०। अवट्ठि० असंखेज्जगु०। आहारदुग-तित्थय० मणुसि०भंगो। पर०-उस्सा०-बादर-पज्जत्त-पत्ते० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्ज०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्जगु०। असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी

६६६. स्त्रीवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा और तैजसशरीर आदि नौ का भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। सातावेदनीय, पुरुषवेद, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भङ्ग पञ्चेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके समान है। असातावेदनीय, छह नोकषाय, तीन गति, दो जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, छह संस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस और स्थावर आदि पाँच युगल, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। चारों आयुओंका भङ्ग ओघके समान है। नरकगति, तीन जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग मनुष्यनियोंके समान है। परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धि और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो वि० संखेज्जगु०। अवट्ठि० असंखेज्जगु०। पुरिसेसु इत्थिभंगो। णवरि तित्थयरं ओघं।

६६७. णवुंसगे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज० पंचंत० सव्वत्थोवा असंखेज्ज-गुणवड्ढी। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। सेसपदा ओघं। पंचदंसणावरणादिएगुणतीसं पगदीणं ओघं। ओरालि० सव्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि०। अवत्त० असं-खेज्जगु० उवरि ओघभंगो। वेउव्वियछ० ओघं णिरयगदिभंगो। सेसाणं पगदीणं ओघं।

६६८. अवगदवे० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेज्जगुणवड्ढी संखेज्जगु०। संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणहाणी संखे-ज्जगु०। संखेज्जभागहाणी संखेज्जगु०। सादावे०-जसगि०-उच्चा० सव्वत्थोवा अवत्त०। असंखेज्जगुणवड्ढी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणवड्ढी संखेज्जगु०। संखेज्जभाग-वड्ढी संखेज्जगुण०। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। संखेज्जभागहाणी संखेज्जगु०। अवट्ठि० संखेज्जगु०। चदुसंज० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगु०। संखेज्जभागहाणी संखेज्जगु०। अवट्ठि० संखेज्जगु०।

६६९. कोधकसाए० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पंचंत० ओघं। णवरि अवत्त०

असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदी जीवोंमें स्त्रीवेदी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग ओघके समान है।

६६७. नपुंसकवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायकी असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यात गुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग ओघके समान है। पाँच दर्शनावरण आदि उनतीस प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। औदारिक शरीरकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव असंख्यात गुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग ओघके समान है। वैक्रियिक छह का भङ्ग ओघमें कहे गये नरकगति-के समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है।

६६८. अपगतवेदी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तराय के अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। साता वेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुण-वृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। चार संज्वलनोंके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

६६९. क्रोधकषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण चार संज्वलन और पाँच

Jain Education International	For Private & Personal Use Only	www.jainelibrary.org

णत्थि। सेसाणं पि ओघं। माणे सत्तारण्णं पि अवत्त० णत्थि। सेसाणं पि ओघं। मायाए सोलसण्णं पि अवत्त० णत्थि। सेसाणं पि ओघं। लोभे पंचणा०-चदुदंस०-पंचंत० अवत्त० णत्थि। सेसपदा ओघभंगो।

६७०. मदि०-सुद० धुविगाणं मिच्छत्त० तिरिक्खोघं। सेसाणं ओघं। विभंगे धुवियाणं णिरयभंगो। मिच्छत्त०-देवगदि-पंचिंदि० ओरालिय०-वेउव्विय०-समचदु०-वेउव्विय०अंगो०-देवाणुपु०-पर०-उस्सास-बादर-पज्जत्त-पत्तेय० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेज्जगु०। उवरिमपदा धुवभंगो। सादासाद०-सत्तणोक०-तिण्णिगदि-चदुजादि-पंचसंठाण-ओरालि० अंगो०-छस्संघ०-तिण्णिआणु०-आदा०उज्जो० दोविहाय० तस-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साधार०-थिरादिछयुगल-दोगोद० सव्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि०। अवत्त० संखेज्जगु०। उवरिमपदा धुवभंगो।

६७१. आभि०-सुद०-ओधि० पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पुरिस-उच्चा०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। असंखेज्जगुणवड्ढी संखेज्जगु०। असंखेज्जगुणहाणी संखेज्जगु०। संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु०। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेज्जगु०।

अन्तरायका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग भी ओघके समान है। मान कषायवाले जीवोंमें सतरह प्रकृतियोंका भी अवक्तव्य भङ्ग नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। माया कषायवाले जीवोंमें सोलह प्रकृतियोंका अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भी भङ्ग ओघके समान है। लोभ कषायवाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य पद नहीं है। शेष पदोंका भङ्ग ओघके समान है।

६७०. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियों और मिथ्यात्वका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। विभङ्गज्ञानी जीवोंमें ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। मिथ्यात्व, देवगति, पञ्चेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियिक आङ्गोपाङ्ग, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, बादर, पर्याप्त और प्रत्येकके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, सात नोकषाय, तीनगति, चार जाति, पाँच संस्थान, औदारिक आङ्गोपाङ्ग, छह संहनन, तीन आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर आदि छह युगल और दो गोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है।

६७१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगु० । अवट्ठि० असं०गु० । णिद्दा-पचला-अट्ठक०-भय०-दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थ०-तस०४-सुभग-सुस्सर-आदे०-णिमि०-तित्थय० सव्वत्थोवा अवत्त० । संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु० । उवरिमपदा णाणावरणभंगो । सादादिबारस० मणजोगिभंगो । देवायु० ओघं । मणुसायु० देवोघं । आहारदुगं ओघं । एवं ओधिदंस०-सम्मादि०-खइग०-वेदगसम्मा० । णवरि खइगे दोआयु० मणुसि० भंगो ।

६७२. मणपज्ज० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० ओधिभंगो । सेसाणं आभिणि०भंगो । णवरि संखेज्जं कादव्वं । एवं संजद० ।

६७३. सामाइ०-छेदो० पंचणा०-चदुदंसणा०-लोभसंज०-उच्चा०-पंचंत० अवत्त० णत्थि । सेसं मणपज्जवभंगो । परिहार० आहारकाय-जोगिभंगो । णवरि आहारदुगं ओघं । सुहुमसंप० अवगदवेदभंगो । णवरि अवत्त० णत्थि । संजदासंजदे धुविगाणं सादादीणं च देवभंगो । णवरि तित्थय० इत्थिभंगो । असंजदे धुविगाणं तिरिक्खोघं । सेसाणं

दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । निद्रा, प्रचला, आठ कषाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चेन्द्रियजाति, चार शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघुचतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थङ्करके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे आगेके पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । साता आदि बारह प्रकृतियोंका भङ्ग मनोयोगी जीवोंके समान है । देवायुका भङ्ग ओघके समान है । मनुष्यायुका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें दो आयुओंका भङ्ग मनुष्यिनियोंके समान है ।

६७२. मनःपर्ययज्ञानी जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग आभिनिबोधिकज्ञानीजीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणा करना चाहिये । इसी प्रकार संयत जीवोंके जानना चाहिये ।

६७३. सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, लोभ संज्वलन, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायका अवक्तव्य पद नहीं है । शेष भङ्ग मनःपर्ययज्ञानी जीवोंके समान है । परिहारविशुद्धिसंयत जीवोंमें आहारककाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है । सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें अपगतवेदी जीवोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है । संयतासंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली और साता आदि प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि तीर्थंकर प्रकृतिका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है । असंयत जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूलोघं । चक्खुदंस० तसपज्जत्तभंगो ।

६७४. किण्णलेस्साए देवगदि०४ सव्वत्थो० संखेंज्जगुणवड्डि-हाणी दो वि० । अवत्त० असंखेंज्जगु० । दोवड्डि-हाणी संखेंज्जगुणा कादव्वा । अवट्ठि० असंखेंज्जगु० । ओरालि० सव्वत्थो० संखेंज्जगुणवड्डि-हा० दो वि० । अवत्त० असं०गु० । उवरिं धुवभंगो । तित्थय० इत्थिभंगो । णवरि अवत्त० णत्थि । सेसाणं पगदीणं असंजदभंगो । एवं णील-काऊए । णवरि काऊए तित्थय० णिरयभंगो । देवगदिचदुक्कस्स य अवत्त० संखेंज्जगु० ।

६७५. तेऊए धुविगाणं देवभंगो । थीणगिद्धि०३-मिच्छ०-बारसक०-देवगदि-ओरालि०-वेउव्वि-वेउव्वि०अंगो०-देवाणु०-तित्थय० सव्वत्थो० अवत्त० । संखेंज्जगुण-वड्डि-हाणी दो वि० असं०गु० । उवरिं धुवभंगो । सादासाद०-सत्तणोक०-दोगदि-दोजादि-छस्संठा०-ओरालि०अंगो०-छस्संघ०-दोआणु०-दोविहा०-आदाव० [उज्जो०-] तस-थावर०-थिरादिछयुग०-णीचागो०-उच्चा० सव्वत्थो० संखेंज्जगुणवड्डि-हाणी दो वि० । अवत्त० संखेंज्जगु० । सेसपदा धुवभंगो । [आहारदुगं ओघं ।] एवं पम्माए वि ।

भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग मूल ओघके समान है। चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें त्रसपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

६७४. कृष्णलेश्यावाले जीवोंमें देवगतिचतुष्ककी संख्यात गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यात-गुणे हैं। शेष दो वृद्धि और दो हानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे कहने चाहिये। इनसे अवस्थित-पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं। औदारिकशरीरकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। इनसे अवक्तव्यपदके बन्धक जीव असंख्यात-गुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग स्त्रीवेदी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य पद नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग असंयतोंके समान है। इसीप्रकार नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि कापोतलेश्यावाले जीवोंमें तीर्थङ्कर प्रकृतिका भङ्ग नारकियोंके समान है तथा देवगति चतुष्कके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं।

६७५. पीतलेश्यावाले जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंका भङ्ग देवोंके समान है। स्त्यानगृद्धि तीन, मिथ्यात्व, बारह कषाय, देवगति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआंगोपांग, देव-गत्यानुपूर्वी और तीर्थंकरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भंग ध्रुव-बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। सातावेदनीय, असातावेदनीय, सात नोकषाय, दो गति, दो जाति, छह संस्थान, औदारिकआंगोपांग, छह संहनन, दो आनुपूर्वी, दो विहायोगति, आतप, उद्योत, त्रस, स्थावर, स्थिर आदि छह युगल, नीचगोत्र और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात गुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं। अवक्तव्यपदके बन्धक जीव संख्यात गुणे हैं। शेष पदोंका भंग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। आहारकद्विकका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि औदारिक-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णवरि ओरालि०अंगो० देवगदिभंगो। पंचिंदिय-तस० धुविगाण भंगो। णवरि तिण्णि-वेद०–समचदु०-पसत्थवि०-सुभग-सुस्सर-आदें०-उच्चा० थीणगिद्धिभंगो।

९७६. सुक्काए पंचणा०-चदुदंसणा०-चदुसंज०-पंचंत० सव्वत्थो० अवत्त०। असंखेंज्जगुणवड्ढी संखेंज्जगु०। असंखेंज्जगुणहाणी संखेंज्जगु०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु०। संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० संखेंज्जगु०। उवरिं देवगदिभंगो। पंचदंसणा०-मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुं०-दोगदि-पंचिंदि०-चदुसरीर०-समचदु०-दोअंगो०-वज्जरिस०-वण्ण०४-दोआणु०-अगु०४-पसत्थवि०-तस०४–सुभग–सुस्सर–आदें०–णिमि०-तित्थय० सव्वत्थोवा अवत्त०। संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तु० असंखेंज्जगु०। उवरिमपदा णाणावरणभंगो। सादावेद०-जसगि० उच्चा० ओधिभंगो। असादवे०-इत्थिवे०-णवुंस०–चदुणोक०–पंचसंठा०–पंचसंघ०–अप्पसत्थ०–थिराथिर–सुभासुभ–दूभग-दुस्सर-अणादें०-अजस०-णीचा० आणदभंगो। पुरिसवेद० ओधिभंगो। णवरि अवत्त० असाद-भंगो। [आहारदुगं ओघं।] अब्भवसिद्धिय-मिच्छा० मदि०भंगो।

९७७. उवसमसं० पंचणा०-चदुदंस०-चदुसंज०-पुरिस०-उच्चा०-पंचंत० सव्वत्थोवा अवत्त०। असंखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी संखेंज्जगु०। संखेंज्जगुणवड्ढी० विसे०। सेसपदा

आङ्गोपाङ्गका भङ्ग देवगतिके समान है। पञ्चेन्द्रियजाति और त्रस प्रकृतिका भङ्ग ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन वेद, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर, आदेय और उच्चगोत्रका भङ्ग स्त्यानगृद्धित्रिकके समान है।

९७६. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन और पाँच अन्तरायके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर संख्यातगुणे हैं। इससे आगेका भङ्ग देवगतिके समान है। पाँच दर्शनावरण, मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय, जुगुप्सा, दो गति, पञ्चेन्द्रियजाति, चार शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, दो आङ्गोपाङ्ग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्णचतुष्क, दो आनुपूर्वी, अगुरुलघु चतुष्क, प्रशस्तविहायोगति, त्रसचतुष्क, सुभग, सुस्वर, आदेय, निर्माण और तीर्थंकरके अवक्तव्यपदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं। इससे आगेके पदोंका भंग ज्ञानावरणके समान है। सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, चार नोकषाय, पाँच संस्थान, पाँच संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति और नीचगोत्रका भंग आनत कल्पके समान है। पुरुषवेदका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपदका भंग असातावेदनीयके समान है। आहारकद्विकका भंग ओघके समान है। अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें मत्यज्ञानी जीवोंके समान भंग है।

९७७. उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंमें पाँच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, चार संज्वलन, पुरुषवेद, उच्चगोत्र और पाँच अन्तरायके अवक्तव्य पदके बन्धक जीव सबसे स्तोक हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिके बन्धक जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिके बन्धक जीव विशेष अधिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओधिभंगो० । आहारदुग-तित्थय० एक्कत्थ भाणिदव्वं । सेसाणं पगदीणं ओधिभंगो । सासणे णिरयभंगो । सम्मामिच्छा० देव०भंगो । सण्णीसु मणजोगिभंगो ।

९७८. असण्णीसु धुविगाणं सव्वत्थोवा संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि तु० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असं०गु० । असंखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि तु० अणंतगु० । अवड्ढि० असंखेंज्जगु० । सेसाणं परियत्तमाणियाणं पगदीणं सव्वत्थोवा संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० । संखेंज्जभागवड्ढि-हाणी दो वि० असंखेंज्जगु० । अवत्त० अणंतगु० । उवरिमपदा णाणावरणभंगो । णवरि चदुआयु०-वेउव्वियछ० तिरिक्खोघं । एइंदि०-आदाव-थावर०-सुहुम-साधार० सव्वत्थोवा संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी दो वि० । संखेंज्ज-भागवड्ढि-हाणी दो वि असं०गु० । उवरिमपदा धुवभंगो । मणुसगदिदुग-उच्चा० संखेंज्जगुणवड्ढि-हाणी णत्थि । सेसं च भाणिदव्वं । एवं अप्पाबहुगं समत्तं ।

एवं वड्ढिबंधो समत्तो

अज्झवसाणसमुदाहारो

९७९. अज्झवसाणसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि-पगदिसमुदाहारो ट्ठिदिसमुदाहारो तिव्वमंददा त्ति ।

हैं । शेष पदोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । इतनी विशेषता है कि आहारकद्विक और तीर्थङ्कर इनको एक जगह कहना चाहिये । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है । सासादन-सम्यग्दृष्टि जीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें देवोंके समान भङ्ग है । संज्ञी जीवोंमें मनोयोगी जीवोंके समान भङ्ग है ।

९७८. असंज्ञी जीवोंमें ध्रुवबन्धवाली प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभाग-हानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर अनन्तगुणे हैं । इनसे अवस्थित पदके बन्धक जीव असंख्यातगुणे हैं । शेष परिवर्तनमान प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवक्तव्य पदके बन्धक जीव अनन्तगुणे हैं । इससे आगेके पदोंका भङ्ग ज्ञानावरणके समान है । इतनी विशेषता है कि चार आयु और वैक्रियिक छहका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । एकेन्द्रियजाति, आतप, स्थावर, सूक्ष्म और साधारणकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिके बन्धक जीव दोनों ही तुल्य होकर असंख्यातगुणे हैं । इससे आगेके पदोंका भङ्ग ध्रुव बन्धवाली प्रकृतियोंके समान है । मनुष्यगति-द्विक और उच्चगोत्रकी संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि नहीं है । शेष पद कहने चाहिये ।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

इस प्रकार वृद्धिबन्ध समाप्त हुआ ।

अध्यवसानसमुदाहार

९७९. अध्यवसानसमुदाहारका प्रकरण है । उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—प्रकृतिसमुदाहार, स्थितिसमुदाहार और तीव्रमन्दता ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पगदिसमुदाहारो

६८०. पगदिसमुदाहारे त्ति तत्थ इमाणि दुवे अणियोगद्दाराणि-पमाणाणुगमो अप्पाबहुगे त्ति।

पमाणाणुगमो

६८१. पमाणाणुगमो पंचणाणावरणीयाणं असंखेज्जा लोगा ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि। एवं सव्वासिं पगदीणं याव अणाहारगे त्ति णादव्वं। णवरि अवगदे सुहुमसंपराइगेसु अंतोमुहुत्तमेत्ताणि अज्झवसाणट्ठाणाणि।

एवं पमाणाणुगमो समत्तो।

अप्पाबहुअं

६८२. अप्पाबहुगं दुविहं—सत्थाणअप्पाबहुगं चेव परत्थाणअप्पाबहुगं चेव। सत्थाणअप्पाबहुगं पगदं। दुविधो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण पंचणाणावरणीयाणं सरिसाणि अज्झवसाणट्ठाणाणि। सव्वत्थोवाणि थीणगिद्धि०३ ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि। णिद्दा-पचला० ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। चदुदंसणा० ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि विसे०। सव्वत्थोवा सादस्स ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाण०। असादस्स ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। सव्वत्थोवा० हस्सरदि० ट्ठिदिबंधज्झवसाण०। पुरिस० ट्ठिदिबं० विसे०। इत्थि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगुणाणि। णवुंस०

प्रकृतिसमुदाहार

६८०. प्रकृतिसमुदाहारका प्रकरण है। उसमें ये दो अनुयोगद्वार होते हैं—प्रमाणानुगम और अल्पबहुत्व।

प्रमाणानुगम

६८१. प्रमाणानुगम—पाँच ज्ञानावरणीयके असंख्यातलोक प्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान होते हैं। इसी प्रकार सभी प्रकृतियोंके अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिये। इतनी विशेषता है कि अपगतवेदी और सूक्ष्मसाम्परायिक संयत जीवोंमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति अध्यवसानस्थान होते हैं। इस प्रकार प्रमाणानुगम समाप्त हुआ।

अल्पबहुत्व

६८२. अल्पबहुत्व दो प्रकार का है—स्वस्थान अल्पबहुत्व और परस्थान अल्पबहुत्व। स्वस्थान अल्पबहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार है—ओघ और आदेश। ओघसे पाँच ज्ञानावरणीयके अध्यवसानस्थान समान होते हैं। स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे निद्रा और प्रचलाके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे चार दर्शनावरणके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे असातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। हास्य और रतिके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे पुरुषवेदके स्थितिबन्धध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्या-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदिबं० असंखे०। अरदि-सोग० ट्ठिदिबं० विसे०। भय-दुगुं० ट्ठिदिबं० विसे०। अणंताणुबंधि०४ ट्ठिदिबं० असंखेज्ज०। अपच्चक्खाणा०४ ट्ठिदिबं० विसे०। पच्चक्खाणा०४ ट्ठिदिबं० विसे०। कोधसंज० ट्ठिदिबं० विसे०। माणसंज० ट्ठिदिबंधज्झ० विसे०। मायासंज० ट्ठिदिबं० विसे०। लोभसंज० ट्ठिदिबं० विसे०। मिच्छ० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। सव्वत्थोवा तिरिक्ख-मणुसायूणं ट्ठिदिबं०। णिरयायुग० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगुण०। देवायुग० ट्ठिदिबं० विसेसा०। सव्वत्थोवा देवगदिणामाए ट्ठिदिबं०। मणुसगदिणामाए ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। णिरयगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। तिरिक्खगदि० ट्ठिदिबं० विसे०। सव्वत्थोवा चदुरिंदि० ट्ठिदिबं०। तीइंदि० ट्ठिदिबं० विसे०। बीइंदि० ट्ठिदिबं० विसे०। एइंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। पंचिंदिय० ट्ठिदिबं० विसे०। सव्वत्थोवा० आहारसरीर० ट्ठिदिबं०। ओरालि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। वेउव्विय० ट्ठिदिबं० विसे०। तेजइगादिणव० ट्ठिदिबं० विसे०। सव्वत्थोवाणि समचदु० ट्ठिदिबं०। णग्गोद० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। सादिय० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। खुज्ज० ट्ठिदिबं० असंखे-

तगुणे होते हैं। इनसे अरति और शोकके स्थितिबन्धाध्यसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे भय और जुगुप्साके स्थिति बन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे अप्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे प्रत्याख्यानावरण चतुष्कके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे क्रोध संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मान संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मायासंज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे लोभसंज्वलनके स्थितिबन्धाध्यसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। देवगतिनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इससे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। चतुरिन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे त्रीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे द्वीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे एकेन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे पञ्चेन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। आहारकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे औदारिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे वैक्रियिक शरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। इनसे तैजसशरीर आदि नौ प्रकृतियोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक होते हैं। समचतुरस्रसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक होते हैं। इनसे न्यग्रोधपरिमण्डलसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे स्वातिसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे कुब्जकसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे वामन संस्थानके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्जगु० । वामणसंठा० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । हुंडसं० ट्ठिदिबं०-असंखेज्जगु० । सव्वत्थोवा० आहारसरीरअंगो० ट्ठिदिबं० । ओरालिय०अंगो० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । वेउव्विय०अंगो० ट्ठिदिबं० विसे० । सव्वत्थोवा० वज्जरिस० ट्ठिदिबं० । एवं यथा संठाणं तथा संघडणं । यथा गदो तथा आणुपुव्वी । सव्वत्थोवा० पसत्थवि० ट्ठिदिबं० । अप्पसत्थ० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थोवा० थावरणामाए ट्ठिदिबं० । तस० ट्ठिदिबं० विसे० । सव्वत्थोवा० सुहुम-अपज्जत्त-साधारण-थिर-सुभ-सुस्सर-आदेज्ज-जसगि०-उच्चा० ट्ठिदिबं० । तप्पडिपक्खाणं ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । पंचंतरा० ट्ठिदिबं० सरिसाणि । एवं ओघभंगो कायजोगि-कोधादि०४–अचक्खुदं०-भवसि०-आहारगे त्ति ।

६८३. णेरइएसु सव्वत्थोवा थीणगिद्धि०३ ट्ठिदिबं० । छदंसणा० विसे० । सादासादा० ओघभंगो । सव्वत्थो० पुरिस० । हस्स रदि० ट्ठिदिबं० असंखे० । [इत्थि० ट्ठिदिबं० असंखेज्ज० ।] णवुंस० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । अरदि-सोग० ट्ठिदिबं० विसे० । भय०-दु० ट्ठिदिबं० विसे० । अणंताणुबंधि०४ ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । बारसक० ट्ठिदिबं० विसे० । मिच्छत्त० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थो० मणुसग० ट्ठिदिबं० ।

स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं । इनसे हुण्डसंस्थानके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे होते हैं । आहारकशरीरआङ्गोपाङ्गके स्थितिबन्ध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे औदारिकशरीर आङ्गोपाङ्गके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे वैक्रियिकशरीर आङ्गोपाङ्गके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । वज्रऋषभनाराचसंहननके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । ऐसे ही जिसप्रकार संस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कह आये हैं, उसीप्रकार संहननोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिये । तथा जिसप्रकार चारों गतियोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा है, उसीप्रकार आनुपूर्वियोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व जानना चाहिये । प्रशस्तविहायोगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे अप्रशस्तविहायोगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । स्थावरनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे त्रसनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्थिर, शुभ, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे इनकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । पाँच अन्तरायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सदृश हैं । इसी प्रकार ओघके समान काययोगी, क्रोधादि चार कषायवाले, अचक्षुःदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये ।

६८३. नारकियोंमें स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे छह दर्शनावरणके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । सातावेदनीय और असातावेदनीयका भंग ओघके समान है । पुरुषवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे हास्य और रतिके स्थितिबन्धाध्याचसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे अरति और शोकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे भय और जुगुप्साके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे अनन्तानुबन्धी चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे बारह कषायोंके स्थितिबन्धाध्यावसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्य-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिक्खग० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सेसाणं पगदीणं ओघं । एवं सत्तसु पुढवीसु० ।

६८४. तिरिक्खेसु दंसणावरणीय-वेदणीय-मोहणीय०णिरयभंगो । णवरि मोहणीय-अपच्चक्खाणा०४ ट्ठिदिबं० विसे० । अट्ठकसा० ट्ठिदिबं० विसे० । मिच्छ० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थोवा० तिरिक्ख-मणुसायूणं ट्ठिदिबं० । देवायु० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । णिरयायु० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थो० देवगदि० ट्ठिदिबं० । मणुसगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । तिरिक्खगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । णिरयगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थो० चदुरिंदि० ट्ठिदिबं० । तीइंदि० ट्ठिदिबं० विसे० । बेइंदि० ट्ठिदिबं० विसे० । एइंदि० ट्ठिदिबं० विसे० । पंचिंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थो० ओरालि० ट्ठिदिबं० । वेउव्वि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । तेजा०-क० ट्ठिदिबं० विसे० । संठाणं संघडणं ओघं । णवरि खीलियसंघडणादो असंपत्तसेवट्ट० विसे० । सेसाणं ओघं । एवं पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्त-जोणिणीसु ।

६८५. पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तगेसु सव्वत्थोवाणि सादावेद० ट्ठिदिबं० । असादा० ट्ठिदिबं० असंखेज्ज० । सव्वत्थोवा० पुरिस० ट्ठिदिबं० । इत्थिवे० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । हस्स-रदीणं ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । णवुंस० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । अरदि-

वसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिये ।

६८४. तिर्यञ्चोंमें दर्शनावरणीय, वेदनीय और मोहनीयका भंग नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि मोहनीयमें अप्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे आठ कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । तिर्यञ्चायु और मनुष्यायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । चतुरिन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे त्रीन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे द्वीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । औदारिक शरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे वैक्रियिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे तैजस और कार्मणशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । संस्थानों और संहननोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें कीलकसंहननसे असम्प्राप्तासृपाटिकासंहननके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । शेष प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चपर्याप्त और पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिनी जीवोंमें जानना चाहिये ।

६८५. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चअपर्याप्त जीवोंमें सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे असातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । पुरुषवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यावसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे हास्य और रतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नपुंसकवेदके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोग० ट्ठिदिबं० विसे० । भय०-दुगुं० ट्ठिदिबं० विसे० । सोलसक० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । मिच्छत्त० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थोवाणि मणुसगदि० ट्ठिदिबं० । तिरिक्खगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सव्वत्थोवाणि पंचिंदि० ट्ठिदिबं० । चदुरिंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । तीइंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । बीइंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । एइंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । संठाणं संघडणं विहायगदी ओघं । सव्वत्थो० तसणामाए ट्ठिदिबंधज्झ० । थावर० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । सेसाणं ओघं । एवं मणुसअपज्जत्त-सव्वविगलिंदिय-पंचिंदिय-तसअपज्ज० सव्वएइंदि०-पंचकायाणं च ।

९८६. मणुसेसु हेट्ठिल्लियो ओघभंगो । गदिणामाए जादिणामाए च तिरिक्खोघं । णवरि वेउव्विय० असंखेज्जगु० । सेसं तिरिक्खोघं ।

९८७. देवाणं णिरयभंगो । णवरि सव्वत्थोवा० एइंदि० ट्ठिदिबं० । पंचिंदिय० ट्ठिदिबं० विसे० । एवं तस-थावराणं । भवणवा०-वाणवेंत०-जोदिसि०-सोधम्मीसाणेसु सव्वत्थो० पंचिंदिय० ट्ठिदिबं० । एइंदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । एवं तस-थावराणं । सव्वत्थोवा असंपत्तसेवट्ट० ट्ठिदिबं० । खीलिय० विसे० । सेसाणं देवोघं । सणक्कुमार-

स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे अरति और शोकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे भय और जुगुप्साके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे सोलह कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान संख्यातगुणे हैं । पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे चतुरिन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे त्रीन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे द्वीन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । संस्थान, संहनन और विहायोगतिका भङ्ग ओघके समान है । त्रसनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे स्थावरनामकर्मके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार मनुष्यअपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रियअपर्याप्त, त्रसअपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय और पाँच स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिये ।

९८६. मनुष्योंमें नीचेकी प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है । गतिनामकर्म और जातिनामकर्मका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि वैक्रियिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । शेष भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है ।

९८७. देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि एकेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिये । भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सौधर्मैशानकल्पके देवोंमें पञ्चेन्द्रियजातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे एकेन्द्रिय जातिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार त्रस और स्थावर प्रकृतियोंकी अपेक्षा जानना चाहिये । असम्प्राप्तसृपाटिकासंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे कीलकसंहननके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

याव० उवरिमगेवज्जा पढमपुढवीभंगो। अणुद्दिस याव सव्वट्ठेसु सव्वत्थो० हस्स-रदीणं द्विदिबं०। अरदि-सोग० द्विदिबं० असंखेज्जगु०। पुरिस०-भय०-दुगुं० विसे०। बारसक० द्विदिबं० असं०गु०। सेसाणं णिरयभंगो। एवं एस भंगो आहार०-आहारमि०-आभि० सुद०—ओधि०-मणपज्जव०-सव्वसंजद-ओधिदं०-सम्मादि०-खइग०—वेदगस०-उवसमस०-सासण०-सम्मामिच्छा०।

६८८. पंचिंदि०-तस०२—पंचमण०-पंचवचि०-पुरिस०-चक्खुदं०-सण्णि त्ति मूलोघं। ओरालियका० मणुसिभंगो। ओरालियमि० तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णवरि देवगदि०४ अत्थि। वेउव्वि० देवोघं। एवं चेव वेउव्वियमिस्स०। कम्मइ०-अणाहारगे तिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो। विसेसो ओघेणेव साधेदव्वं। इत्थिवे० पंचिंदियभंगो। किंचि विसेसो०। णवुंसगेसु ओघं। जादिणामेसु विसेसो०। अवगदवेदे ओघेण साधेदव्वं। एवं सुहुम-संपरा०। मदि०-सुद०-विभंगणाणि-अब्भवसिद्धिय-मिच्छा० ओघं। णवरि सम्मत्तपगदीसु विसेसो। असंजदे ओघं। आयु० विसेसो। एवं तिण्णिले०। णवरि किंचि विसेसो।

६८९. तेऊए मोहणीयो ओघो। सेसाणं सोधम्मभंगो। एवं पम्माए वि। णवरि

अधिक हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सानत्कुमार कल्पसे लेकर उपरिम-ग्रैवेयक तकके देवोंमें पहली पृथ्वीके समान भङ्ग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें हास्य और रतिके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे अरति और शोकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके स्थिति-बन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे बारह कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यात-गुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इसी प्रकार यह भङ्ग आहारककाययोगी आहा-रकमिश्रकाययोगी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, सब संयत, अवधि-दर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये।

६८८. पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, पुरुषवेदी, चक्षुदर्शनी और संज्ञी जीवोंमें मूल ओघके समान भङ्ग है। औदारिककाययोगी जीवोंमें मनुष्यिनियोंके समान भङ्ग है। औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें तिर्यञ्चअपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें देवगतिचतुष्क है। वैक्रियिककाययोगी जीवोंमें सामान्य देवोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार वैक्रियिक-मिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें तिर्यञ्चअपर्या-प्तकोंके समान भङ्ग है। जो विशेष हो उसे ओघसे साध लेना चाहिये। स्त्रीवेदी जीवोंमें पञ्चेन्द्रियके समान भङ्ग है। किन्तु कुछ विशेषता है। नपुंसकवेदी जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। किन्तु जाति-नामकर्मकी प्रकृतियोंमें कुछ विशेषता है। अपगतवेदी जीवोंमें ओघके समान साध लेना चाहिये। इसीप्रकार सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंके जानना चाहिये। मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभङ्गज्ञानी, अभव्य और मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वसम्बन्धी प्रकृतियोंमें विशेषता जाननी चाहिये। असंयतोंमें ओघके समान भङ्ग है। किन्तु चार आयुओंमें विशेषता जाननी चाहिये। इसीप्रकार तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इनमें कुछ विशेषता है।

६८९. पीतलेश्यावाले जीवोंमें मोहनीयका भङ्ग ओघके समान है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सौधर्मकल्पके समान है। इसीप्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंमें भी जानना चाहिये। इतनी विशेषता है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहस्सारभंगो। सुक्काए ओघं। णवरि णामे विसेसो। सव्वत्थोवा० मणुसगदि० ट्ठिदिबं०। देवगदि० ट्ठिदिबं० विसे०। अथवा देवगदि० बंध० थोवा०। मणुसगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। एवं सव्वणामाणं णेदव्वं। असण्णीसु मोहणीयं अपज्जत्तभंगो। चदु० आयु० तिरिक्खोघं। सेसाणं तिरिक्खोघं। एवं सत्थाणअप्पाबहुगं समत्तं

६६०. परत्थाणअप्पाबहुगं पगदं। दुविधो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण सव्वत्थोवाणि तिरिक्ख-मणुसायूणं ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि। णिरयायुगस्स ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। देवायु० ट्ठिदिबंध० विसेसाहियाणि। आहारसरीर० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। देवगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। हस्स-रदीणं ट्ठिदिबं० विसेसा०। पुरिस० ट्ठिदिबं० विसे०। जस०-उच्चा० ट्ठिदिबं० विसे०। सादावे० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। मणुसगदि० ट्ठिदिबं० विसे०। इत्थिवे० ट्ठिदिबं० विसेसा०। णिरयगदि० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु०। णवुंस० ट्ठिदिबं० विसे०। अरदि-सोग०-अजस० ट्ठिदिबं० विसे०। तिरिक्खगदि-णीचागो० ट्ठिदिबं० विसेसा०। ओरालिय० ट्ठिदिबं० विसे०। वेउव्विय० ट्ठिदिबं० विसे०। तेजा०-कम्म० ट्ठिदिबं० विसे०। भय-दुगुं० ट्ठिदिबं०

कि इनमें सहस्रारकल्पके समान भङ्ग है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि नामकर्ममें कुछ विशेषता जाननी चाहिये। मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। अथवा देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सब नामकर्मकी प्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिये। असंज्ञियोंमें मोहनीयकर्मका भङ्ग अपर्याप्तकोंके समान है। चारों आयुओंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है— तथा शेष प्रकृतियोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

इस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

६६०. परस्थान अल्पबहुत्वका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तिर्यञ्चायु और मनुष्यायु के स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान सबसे स्तोक हैं। इनसे नरकायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे देवायुके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक हैं। इनसे आहारकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे देवगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे हास्य और रतिके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक हैं। इनसे पुरुषवेदके स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान विशेष अधिक हैं। इनसे यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे नरकगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं। इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे अरति, शोक और अयशःकीर्तिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तिर्यञ्चगति और नीचगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे औदारिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे वैक्रियिकशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे तैजस और कार्मणशरीरके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं। इनसे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसे० । असाद० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । थीणगिद्धि०३ ट्ठिदिबं० विसे० । णिद्दा-पचला० ट्ठिदिबं० विसे० । पंचणाणा०-चदुदंसणा०-पंचंत० ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि विसेसा० । अणंताणुबंधि०४ ट्ठिदिबंधज्झवसाण० असंखेज्जगु० । अप्पचक्खाणा०४ ट्ठिदिबं० विसे० । पचक्खाणा०४ ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि विसेसा० । कोधसंज० ट्ठिदिबं० विसे० । माणसंज० ट्ठिदिबं० विसे० । मायासंज० ट्ठिदिबं० विसे० । लोभसंज० ट्ठिदिबंधज्झ० विसेसा० । मिच्छत्त० ट्ठिदिबंधज्झव० असंखेज्जगु० । एवं ओघं पंचिंदिय-तस०२-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-पुरिस०-कोधादि०४-चक्खुदं०-अचक्खुदं०-भवसि०-सण्णि-आहारग त्ति । णवरि पुरिस० कोधादिसु च मोहणीए विसेसो ओघेण साधेदव्वं ।

६६१. णिरएसु सव्वत्थोवाणि दोण्णं आयुगाणं ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि । पुरिस०-हस्स-रदि-जसगि०-उच्चा० ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगु० । सादावे० ट्ठिदिबं० असंखेज्जगु० । इत्थिवे० ट्ठिदिबं० विसेसा० । मणुसगदि० ट्ठिदिबंधज्झव० विसे० । णवुंस० ट्ठिदिबंध० असंखेज्जगु० । अरदि-सोग-अजसगित्ति० ट्ठिदिबं० विसेसा० । तिरिक्खगदिणीचागो० ट्ठिदिबंध० विसेसा० । भय-दुगुं०-ओरालिय-तेजा०-कम्मइय०

भय और जुगुप्साके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे असातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे स्त्यानगृद्धि तीनके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे निद्रा और प्रचलाके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे पाँच-ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे अप्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे प्रत्याख्यानावरण चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे क्रोध संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मान संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे माया संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे लोभ संज्वलनके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार ओघके समान पञ्चेन्द्रियद्विक, त्रसद्विक, पाँच मनोयोगी, पाँच वचनयोगी, काययोगी, पुरुषवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, चक्षुःदर्शनी, अचक्षुःदर्शनी, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदी और क्रोधादि चार कषायवाले जीवोंमें मोहनीयकी विशेषता ओघके अनुसार साध लेना चाहिये ।

६६१. नारकियोंमें दो आयुओंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे पुरुषवेद, हास्य, रति, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे अरति, शोक और अयशःकीर्तिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे तिर्यञ्चगति और नीचगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे भय, जुगुप्सा, औदारिकशरीर, तैजसशरीर और कार्मणशरीरके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठिदिबंध० विसेसा० । असादा० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगुणाणि । थीणगिद्धि०३ ट्ठिदिबंध० विसेसाहियाणि । पंचणा०-छदंसणा०-पंचंत० ट्ठिदिबंधज्झवसाण० विसेसाहियाणि । अणंताणुबंधि०४ ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । बारसक० ट्ठिदिबंध० विसे० । मिच्छत्त० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । एवं पढमाए पुढवीए । णवरि मणुसगदि० ट्ठिदिबंध० विसे० । तिरिक्खगदि० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । णीचागो० ट्ठिदिबंध० विसे० । णवुंस० ट्ठिदिबंध० विसे० । अरदि-सोग-अजस० ट्ठिदिबंध० विसे० । उवरि णिरयोघं । एवं याव छट्ठि त्ति ।

६६२. सत्तमाए सव्वत्थोवा० तिरिक्खायु० ट्ठिदिबंध० । मणुसगदि-उच्चागो० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । पुरिस०-हस्स-रदि-जसगित्ति० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । सादावे० ट्ठिदिबंध० असंखेंज्जगु० । इत्थिवे० ट्ठिदिबंध०[1]........................

... ...

जीवसमुदाहारो

६६३. ......असादस्स चदुट्ठाणबंधगा जीवा । आभिणि० जहण्णियाए ट्ठिदीए जीवेहिंतो तदो पलिदोवमस्स असंखेंज्जदिभागं गंतूण दुगुणवड्ढिदा । एवं दुगुणवड्ढिदा

स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे असातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे स्त्यानगृद्धित्रिकके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे पाँच ज्ञानावरण, छह दर्शनावरण और पाँच अन्तरायके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे अनन्तानुबन्धी चारके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे बारह कषायोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे मिथ्यात्वके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार पहली पृथ्वीमें जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे तिर्यञ्चगतिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे नीचगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे नपुंसकवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इनसे अरति, शोक और अयशःकीर्तिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान विशेष अधिक हैं । इससे आगे सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । इसी प्रकार छठवीं पृथिवी तक जानना चाहिये ।

६६२. सातवीं पृथिवीमें तिर्यञ्चायुके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सबसे स्तोक हैं । इनसे मनुष्यगति और उच्चगोत्रके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे पुरुषवेद, हास्य, रति और यशःकीर्तिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे सातावेदनीयके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असंख्यातगुणे हैं । इनसे स्त्रीवेदके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान........................

....

जीवसमुदाहार

६६३. ......असाताके चतुःस्थानबन्धक जीव हैं । आभिनिबोधज ज्ञानावरणकी जघन्यस्थितिके बन्धक जीवोंसे पल्योपमके असंख्यातवेंभागप्रमाण स्थान जाकर दूनी वृद्धिको

---

1 क्रमाङ्क ११२ ताडपत्रं त्रुटितम् ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुगुणवड्ढिदा याव सागरोवमसदपुधत्तं। तेण परं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं गंतूण दुगुणहीणा। एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा याव सादस्स असादस्स य उक्कस्सिया ट्ठिदि त्ति। उवरि मूलपगदिभंगो।

एवं जीवसमुदाहारे त्ति समत्तमणियोगद्दारं।

एवं उत्तरपगदिट्ठिदिबंधो समत्तो।

एवं ट्ठिदिबंधो समत्तो।

प्राप्त हुये हैं। इसीप्रकार सौ सागर पृथक्त्वतक दूनी-दूनी वृद्धिको प्राप्त हुये हैं। उससे आगे पल्यके असंख्यातवेंभाग प्रमाण जाकर दूने हीन हैं। इसप्रकार सातावेदनीय और असातावेदनीयकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक दूने-दूने हीन होते गये हैं। इससे आगे भङ्ग मूलप्रकृतिबन्धके समान है।

इस प्रकार जीवसमुदाहार अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

इस प्रकार उत्तरप्रकृतिस्थितिबन्ध समाप्त हुआ।।

इस प्रकार स्थितिबन्ध समाप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भारतीय ज्ञानपीठ

स्थापना : सन् 1944

उद्देश्य

ज्ञान की विलुप्त, अनुपलब्ध और अप्रकाशित सामग्री का अनुसन्धान और प्रकाशन तथा लोकहितकारी मौलिक साहित्य का निर्माण

संस्थापक

स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन

स्व. श्रीमती रमा जैन

अध्यक्ष

श्रीमती इन्दु जैन

कार्यालय : 18, इन्स्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org